

Abhinav Gaveshna

(Multi Disciplinary Quarterly International Refreed/Peer Reviewed Research Journal)

Our PATRON

Sri Manvendra Swaroop, En. Gaurvendra Swaroop

Secretary : Dayanand Shikshan Sansthan, Kanpur

Editor-in-Chief

Dr. Mohini Shukla

Head & Asso. Professor Dept. of V. Music

Juhari Devi Girls (P.G.) College, Kanpur-208004

Editor

Dr. Ravendra Rajput

Associate Professor-Teacher-Education

Shri Varshney College, Aligarh-202002

Peer-Review Board

◆**Dr. Ram Babu Gautam** (President-International Hindi Asso.) New Jersi 220, Wheeler Street, Clifsite Park, New Jersi-07010 (America) ◆**Dr. Bindeshwari Aggarwal** Prof.- Dept. of Hindi, Newyork University (America) ◆**Dr. Sirish Kr. Pandey** (Prof. - Hindi) Ul Litawashka 37, 51-354, Ursaw (Poland) ◆**Dr. Filip Rodriguez-e-Melo** (Principal) S.S. Ambiyé Govt. College of Arts & Commerce, Virnoda, Pernem (Gova) ◆**Dr. M. G. Kalavadiya** (Principal) Smt. R. P. Bhalodiya Mahila Arts, Commerce & Science College, Upleta, Rajkot (Gujrat) ◆**Prof. K. R. Jain** (Principal) D. A-V. College, Dehradun (U.K.) ◆**Dr. Shyla** (Principal) Kuriyakose Gregorios College, Pampady, Kottayam (Kerala State) ◆**Dr. Alok Agarwal** Chinmay Degree College, Ranipur, Haridwar (U.K.), ◆**Dr. Suraj Bhan Singh Sager** D. N. (P.G.) College, Fatehgarh, ◆**Dr. Amit Saxena** Khalsa Girls Degree College, Kanpur, ◆**Prof. Amar Srivastava** H. S. (P.G.) College, Kanpur ◆**Dr. Archana Verma** D. G (P.G.) College, Kanpur ◆**Prof. Anju Choudhary** M. M. V., Kanpur, ◆**Prof. Anil Kr. Mishra** D. B. S. College, Kanpur, ◆**Prof. A. K. Dixit** D.A-V. College, Kanpur, ◆**Prof. Brajesh Kr.** Sri Varshney College, Aligarh, ◆**Prof. Geeta Asthana** J.D.V.M., Kanpur, ◆**Dr. Srikrishan Patel** D.A-V. Training Centre, Kanpur, ◆**Prof. Mukesh Kr. Singh** Armapur (P.G.) College, Kanpur, ◆**Prof. Ranju Kushwaha** Juhari Devi Girls (P.G.) College, Kanpur ◆**Prof. Amit Srivastav** Pratap Bahadur Post Graduate College, Pratapgarh City, Pratapgarh, ◆**Prof. Gitanjali Maurya** Kulbhaskar Ashram P.G. College, Prayagraj.

Editorial Board

Hindi-

Dr. Priya A. Kuriyakose Gregorios College, Pampady, Kottayam, Kerla

Dr. Amrita Desai Dhingé S. S. Ambiyé Govt. Arts, Science & Comm. College, Virnoda, Pernam (Gova)

Prof. Nirmala Kumari S.V. College, Aligarh

Dr. Rakhi Upadhyay D. A. V. (P. G.) College, Dehradun (Uttarakhand)

English-

Dr. Nishi Singh M. M. V., Kanpur

Dr. Poonam Dubey D.S.N. College, Unnao

Dr. Nivedita Tandan D.G.(P.G.) College, Kanpur

Dr. Indu Mishra M. M. V., Kanpur

Sanskrit-

Dr. Savita Bhatt D. A. V. (P. G.) College, Dehradun (Uttarakhand)

Dr. Preeti Vadhvani T. D. College, Auraiya

Dr. Puja Srivastava M. M. V., Kanpur

Dr. Pradeep Dixit V.S.S.D. College, Kanpur

Education/Teacher Education-

Dr. Alpna Rai J.D.G. (P.G.) College, Kanpur

Dr. Bindumati Dwivedi Sanskrit University, Haridwar (U.K.)

Prof. Sudha Rajput S.V. College, Aligarh

Political Science-

Dr. Vijay Pratap Singh D. A. V. College, Kanpur

Dr. Archana Dixit J. D. Girls P.G. College, Kanpur



Dr. Pravita Tripathi R. P. J. D. Colleghe, Hardoi

Sociology-

Dr. Smrit Purwar D.A-V. College, Kanpur

Dr. Satyam Dwivedi D.A-V. College, Dehradun

Prof. Krishna Agarwal S.V. College, Aligarh

Economics-

Dr. Shiv Kumar Singh S.V. College, Aligarh

Dr. Alka Soori D.B.S. College, Dehradun

Dr. Ranjeet Yadav D.B.S. College, Kanpur

Psychology-

Dr. Rashmi Rawat D. A. V. College, Dehradun

Dr. Monika Sahai S.N.Sen College, Kanpur

Dr. Neeta Mishra M. M. V., Kanpur

Math-

Dr. Anila Tripathi D. A. V. College, Kanpur

Dr. Anokhe Lal Pathak B.N.D. College, Kanpur

Dr. Shikha Gupta Chinmay College, Haridwar

History-

Dr. Chandani Saxena J.D.G. (P.G.) College, Kanpur

Dr. Archana Shukla M.K.P. College, Dehradun

Prof. Pratibha Sharma S.V. College, Aligarh

Dr. Shalini Gangwar J. D. P. G. College, Kanpur

Drawing & Painting-

Dr. Vandana Sharma M. M. V., Kanpur

Dr. Sarika Bala A.ND.N.N.M. College, Kanpur

Dr. Saurabh Saxena B.J.G.P. (P.G.) College, Unnao

Physics-

Dr. A. K. Agnihotri B.N.D. College, Kanpur

Dr. Prakesh Dubey Janta Degree College, Bakever

Dr. Manoj Kr. Verma S.V.(P.G.) College, Aligarh

Chemistry-

Dr. Archana Pandey B.N.D. College, Kanpur

Prof. Neerja Sharma S.V. College, Aligarh

Dr. (Smt.) Roli Agarwal S.V.(PG) College, Aligarh

Dr. Om Kumari K. K. College, Etawah

Zoology-

Dr. Harendra Gaur S.V. College, Aligarh

Dr. Ajai Kumar Chinmay College, Haridwar

Dr. Madhu Sahgal Jalta College, Ajitmal-Auraiya

Botany-

Dr. Vishal Saxena D. A. V. College, Kanpur

Dr. Manisha Ji Chinmay College, Haridwar

Dr. Santosh Bhatnagar A.N.D. College, Kanpur

Geography-

Dr. Anita Nigam D. B. S. College, Kanpur

Dr. Nandita Singh S.V. College, Aligarh

Dr. Anjana Srivastava D. G. College, Kanpur

Commerce/Law-

Dr. Atul Arora S.V. College, Aligarh

Dr. Yogesh Shukla Janta Degree College, Bakever

Dr. Sona Shukla D.B.S. College, Kanpur

Dr. Gunjan Agarwal S.V. College, Aligarh

Music-

Dr. Sunita Dwivedi Juhari Devi College, Kanpur

Dr. Nishtha Sharma M.G. College, Firozabad

Dr. Kajal Sharma A. N. D. College, Kanpur

Home Science-

Dr. Ranju Kushwaha Juhari Devi Girls (P.G.) College, Kanpur

Dr. Alka Tripathi D. G. (P.G.) College, Kanpur

Dr. Richa Saxena Juhari Devi (PG) College, Knp.

Law-

Dr. A. B. Jaiswal Chinmay College, Ranipur, B.H.E.L., Haridwar (U.K.)

Dr. P. N. Trivedi V. S. S. D. College, Kanpur

Dr. (Smt.) Gunjan Agarwal S.V.(PG) Clge, Aligarh

Prof. (Dr.) Ghanshyam Mishra M. A. H. Garhwal University, Pauri Garhwal (U.K.)

Managing Editor & Publisher-

Sarveish Tiwari 'Rajan'

World Bank Barra, Kanpur-208027

सभी संपादकीय दायित्व पूर्णतः अवैतनिक हैं।

नोट- प्रकाशित आलेखों के विचारों से सम्पादक व प्रकाशक की सहमति अनिवार्य नहीं है। समस्त वाद का क्षेत्र कानपुर होगा।

स्वत्वाधिकारी, प्रकाशक एवं प्रबन्ध सम्पादक सर्वेश तिवारी 'राजन' द्वारा पूजा प्रिन्टर्स हमीरपुर रोड, नौबस्ता, कानपुर-208022 से मुद्रित एवं सुपर प्रकाशन के -444 'शिवराम कृपा', विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-208027 से प्रकाशित। सम्पादक - डॉ. रवेन्द्र राजपूत मोबाइल-7830080099, सम्पर्क - मो.- 08896244776, 09335597658 E-mail: super.prakashan@gmail.com, Website : www.abhinavgaveshana.com



सम्पादक की कलम से✍

प्रिय पाठको,

भारतीय संस्कृति में कर्तव्य निर्वहन का क्रम इस प्रकार है— राज्य—समाज—परिवार—व्यक्ति। लेकिन आज ये क्रम उल्टा हो गया है— व्यक्ति—परिवार—समाज—राज्य। इस चारित्रिक पतन के विभिन्न कारण हैं लेकिन उनमें प्रमुख है हमारे अन्दर राष्ट्रभक्ति की भावना का विलुप्त हो जाना। आम आदमी की राष्ट्रभक्ति राष्ट्रीय पर्व के अवसर पर तिरंगा फहराने और राष्ट्रगान गाने तक ही सीमित हो गयी है। देशहित का स्थान पूरी तरह स्वहित ने ले लिया है।

भूमण्डलीकरण के इस दौर में जहाँ टिकाऊ और गुणवत्ताशील संस्कृति को हाशिये पर रखकर 'इस्तेमाल करो और फेंको' पद्धति ने हमारे दिलोदिमाग में पूरी तरह बसेरा कर लिया है, वहीं उसके दुष्परिणामस्वरूप गुणवत्ता में कमी और अविश्वास ने भी प्रत्येक के भीतर अपनी जड़ें मजबूत कर ली हैं, जिससे हम निज उन्नति को ध्यान में रखते हुए कार्य करते हैं और भूल जाते हैं कि यदि उपभोक्ता संतुष्ट होगा, लाभान्वित होगा तो विभाग की स्थिति सुदृढ़ होगी तथा उपरोक्त दोनों की समृद्धि से देश की प्रगति तो निश्चित ही है।

अब हमारे सामने पहली चुनौती यह है कि हमें देश नैतिक, चारित्रिक व सामाजिक एवं आध्यात्मिक उत्थान करना है। जाति—प्रथा, दहेज—प्रथा, बलि प्रथा तथा अन्य रूढ़िवादी, अज्ञानमूलक, भ्रान्त अन्धविश्वासों जैसे कि वहम, जादू—टोना, भूत—प्रेत व अन्य पाखण्डों से देश को बाहर निकालना है। शराब, तम्बाकू व अन्य नशों से देश का सर्वनाश हो रहा है। इन नशों व दुर्व्यवसनों से व्यक्ति, गाँव, समाज, व राष्ट्र मुक्त करने के लिए योगाभ्यास, सत्संग, स्वाध्याय, संस्कृति व संस्कारों की परम्परा को पुनः प्रतिस्थापित करना है।

गणतन्त्र भारत के 65 वर्षों का इतिहास बताता है कि हमारे स्वतंत्रता के रक्षकों ने भारत में एक स्वर्णयुग सीपित करने की कल्पना की थी। लेकिन यह हमारे त्रासदी है कि स्वर्णयुग की जगह एक भ्रष्ट युग स्थापित हो गया। भारतीय संस्कृति में जिस कर्तव्य पर आधारित समाज का वर्णन मिलता है, उसके स्थान पर हमने पश्चिमी समाजों की नकल करते हुए 'आवश्यकता पर आधारित समाज स्थापित कर लिया है और इसी



का परिणाम है आज का 'स्वार्थ पर आधारित समाज'। हर व्यक्ति अपने और सिर्फ अपने स्वार्थ पर केन्द्रित हो गया है। यही स्वार्थपरता सारी बुराइयों और हमारे पतन का सबसे बड़ा कारण है। सोलह संस्कार, पंच महायज्ञों व चार वर्णाश्रम धर्मों से युक्त सार्वभौमिक व वैज्ञानिक वैदिक संस्कृति को पुनः सामाजिक जीवन में समाहित करना है। गो-हत्या, कन्या भ्रूण हत्या, दहेज हत्या आदि पापों व जुएं आदि सामाजिक बुराइयों से इस देश को मुक्त करना है तथा रक्त दान, नेत्र दान व वृक्षारोपण आदि पुण्य कार्यों को प्रोत्साहन देना है।

वक्त आ गया है, हमें जाग्रत होना पड़ेगा। पुनः भारतीय संस्कृति के आदर्शों को अपनाना होगा। राष्ट्रभक्ति के कारण ही कार्य संस्कृति में बदलाव आयेगा। हमें स्वहित को छोड़कर राष्ट्रहित को अपना ध्येय बनाना होगा। हम प्रत्येक देशभक्त, संस्कृति रक्षक नागरिक का आवाहन करते हैं कि संकीर्णता से उदारता की ओर, अधिकार पूर्ति से दायित्व पूर्ति की ओर, स्वार्थ परायणता से राष्ट्र परायणता की ओर, हिंसा से अहिंसा की ओर, स्वगौरव से राष्ट्रगौरव की ओर तथा राष्ट्र दुर्बलता से प्रचण्ड राष्ट्रभक्ति की ओर तेजी से कदम बढ़ायें।

और अन्त में हम अपने उन सभी लेखकों, समीक्षकों, माननीय संपादकीय बोर्ड के सदस्यों एवं पाठकों का धन्यवाद ज्ञापित करते हैं, जिनके सहयोग, परिश्रम और मार्गदर्शन से इस अंक का प्रकाशन संभव हो सका। हम आशा करते हैं कि यह अंक आपकी शैक्षिक जिज्ञासा को संतुष्ट करेगा एवं आपके विचारों को नया आयाम प्रदान करेगा। आपके सुझाव और प्रतिक्रियायें हमारे लिए अत्यन्त मूल्यवान हैं। कृपया हमें अपनी राय अवश्य भेजें, ताकि हम अपने आगामी अंकों को और भी अधिक उपयोगी एवं प्रभावशाली बना सकें।

सादर

रवेन्द्र राजपूत

डॉ. रवेन्द्र राजपूत

सम्पादक – 'अभिनव गवेषणा'

(मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल

रेफ्रीड / पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल)

एवं

एसोसिएट प्रोफेसर – शिक्षक शिक्षा विभाग,

श्री वाष्णीय महाविद्यालय, अलीगढ़-202002 (उ.प्र.)



Index

Editorial Board -

Dr. Mohini Shukla - Chief Editor- Abhinav Gaveshna (Multi Disciplinary Quarterly International Refreed / Peer Reviewed Research Journal) & Associate Professor & Head, Dept. of Vocal Music, Juhari Gevi Girl's (P.G.) College, Kanpur-208004 (U.P.)

&

Prof. Ravendra Rajput : Editor - Abhinav Gaveshna (Multi Disciplinary Quarterly International Refreed / Peer Reviewed Research Journal) & Associate Professor, Department of Teacher-Education Shri Varshney College, Aligarh-202002 (U.P.)

1-	The Role of Environmental Policies in Conserving Wetlands	- Dr. Jitendra Sharma	07
2-	Security - Insecurity and Gender as Determinent of Suicidal Tendency	- Pooja Kasera	16
3-	Modi's Concept of Soft Power Diplomacy in Foreign Policy	- Dr. Preeti Singh	23
4-	Stress Management Through Yoga, Meditation and Positive Thinking	- Prof. Pratibha Srivastav	34
5-	The Effect of Collaborative Learning on Academic Achievement of College Students	- Dr. Umendra Singh	39
6-	A Major challenge to National Security : Terrorism	- Dr. Rama Bhatia	46
7-	Agriculture and Rural Livelihood in Chandauli District : Demographic Implications	- Sandeep Kumar Singh - Prof. Pankaj Kumar Singh	49
8-	Present Scenario of Barriers to Girls' Education in India	- Dr. Akanksha Shukla	59
9-	A Study of Working Culture of Procedure of Private Insurance Companies in India	- Prof. Suneet Awasthi	62
10-	AI and Personalized Learning in Indian Classrooms : A Qualitative Theoretical Analysis	- Dr. Nalini Misra	68
11-	जॉन डीवी की शैक्षिक विचारधारा	— डॉ. रवेन्द्र राजपूत	73
12-	वर्तमान परिप्रेक्ष्य में डॉ. भीमराव अम्बेडकर के विचार एवं सामाजिक न्याय : एक अध्ययन	— सागर सोनी	78
13-	सरदार पटेल और भारतीय एकता का संग्राम	— डॉ. हरीश कुमार सिंह	82
14-	कला में प्रतीकों की भूमिका	— सुश्री संध्या जादौन	86
15-	मूल्य शिक्षा की वर्तमान में आवश्यकता एवं उद्देश्य	— प्रो. साधना पाण्डेय	89
16-	विश्व बन्धुत्व और मानव मूल्य : एक विवेचन	— प्रो. अलका द्विवेदी	94
17-	पवित्र हिंसा : इस्लाम, साम्प्रदायिकता और खैबर पख्तूनख्वा का युद्धक्षेत्र	— विरेश कुमार मिश्रा — डॉ. अजय कुमार पाण्डेय	98
18-	असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं में	— डॉ. प्रीती द्विवेदी	105



	सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति के प्रति जागरूकता का अध्ययन (लखनऊ जिले के सन्दर्भ में)		
19-	भारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन (सुरक्षा के संदर्भ में)	— लाल बाबू तिवारी	112
20-	उच्चतर माध्यमिक स्तर अध्ययनरत् उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले छात्र-छात्राओं की समायोजन क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन	— प्रो. ओ. पी. शुक्ला — डॉ. विन्दुमती देवी	116
21-	माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत आवासीय एवं गैर आवासीय विद्यार्थियों की भावात्मक परिपक्वता एवं शैक्षिक दुश्चिन्ता	— शैलजा तिवारी — डॉ. (श्रीमती) पूनम सरभाई	125
22-	भारत में महिला सशक्तिकरण : सरकारी योजनाओं का सामाजिक-आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रभाव, फ्री बीज की सीमाएँ और सतत् विकास की आवश्यकता	— डॉ. पूनम अस्थाना	133
23-	भारतीय संस्कृति में कला का समावेश	— प्रो. दीपाली श्रीवास्तव	136
24-	आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में कौटिल्य की युद्ध नीति की उपयोगिता	— डॉ. अंशु पाण्डेय	139
25-	भारतीय ज्ञान परम्परा में श्रीमद्भागवद् महापुराण का योगदान	— कपिल दुबे — डॉ. अंशुल दुबे	142
26-	श्रीमद्भगवद् गीता का मोक्ष योग	— प्रो. (डॉ.) बिन्दु सिंह	149
27-	श्रीमद्भगवद्गीता का जीवन दर्शन	— प्रो. अर्चना श्रीवास्तव	154





The Role of Environmental Policies in Conserving Wetlands



- Dr. Jitendra Sharma
Assistant Professor -
Department of Geography,
D. S. College, Aligarh-202001
(Uttar Pradesh, India)

Email-
jitensharmadsc@gmail.com

Abstract

Wetlands are among Earth's most productive and biologically diverse ecosystems, providing vital ecosystem services such as water purification, flood control, carbon sequestration, and habitat provision. Yet, global wetland loss, driven by land-use change, pollution, and climate change, continues at an alarming rate. This paper examines the role of environmental policies—international treaties, national laws, and sub-national regulations—in conserving wetlands. Through a comparative analysis of policy frameworks (e.g., Ramsar Convention, EU Water Framework Directive, India's Wetland Rules 2017, U.S. Clean Water Act), the study investigates effectiveness, enforcement challenges, and socio-ecological outcomes. Case studies from the Sundarbans (India/Bangladesh), Florida Everglades (USA), and England's peatland wetlands illustrate successes and gaps. The paper argues that integrated governance, community participation, and robust monitoring & enforcement mechanisms are critical to produce resilient wetland conservation. Policy recommendations include adaptive legislation, public-private partnerships, fiscal incentives, and participatory management models.

Keywords- wetlands conservation, environmental policy, Ramsar Convention, ecosystem services, governance, community participation, policy effectiveness.

1. Introduction -

Wetlands comprising a diverse array of ecosystems such as marshes, swamps, mangroves, bogs, peatlands, lagoons, and floodplains—are among the most **biologically productive and ecologically valuable landscapes** on Earth. They perform a wide array of ecological functions including **flood control, water purification, groundwater recharge, shoreline stabilization, nutrient cycling, and carbon sequestration**, while also supporting an abundance of flora and fauna (Mitsch & Gosselink, 2015). Wetlands act as buffers against climate variability, mitigating the impacts of droughts, floods, and storms, especially in coastal and ² riverine regions. Moreover, they serve as critical **livelihood sources** for millions of people globally through



fisheries, agriculture, tourism, and traditional medicinal practices.

Despite their profound ecological and socio-economic value, wetlands are among the fastest-declining ecosystems globally. According to the Ramsar Convention (2020), the world has lost nearly **35% of its wetland area since 1970**, a rate of degradation that far exceeds the decline of forests and other ecosystems. The major anthropogenic drivers of this loss include **land-use changes** (especially for agriculture and infrastructure), **urban encroachment**, **industrial pollution**, **invasive species**, and **climate change** (Zedler & Kercher, 2005). In many regions, wetlands are viewed as "wastelands" and remain undervalued in policy discourse and development planning, further exacerbating their degradation.

Recognizing these threats, the role of **environmental policy and governance frameworks** becomes pivotal in conserving and restoring wetlands. International treaties such as the **Ramsar Convention (1971)**, the **Convention on Biological Diversity (CBD)**, and the **Sustainable Development Goals (SDGs)** underscore the need for integrated wetland management. Simultaneously, national and sub-national governments have enacted legal instruments and regulatory frameworks to identify, protect, and sustainably manage wetland ecosystems. Examples include the **Clean Water Act (1972)** in the United States, the **Water Framework Directive (2000)** in the European Union, and **Wetlands (Conservation and Management) Rules (2017)** in India. These policies vary in scope, implementation approaches, and effectiveness across countries and regions.

However, policy success in wetland conservation is **not uniform**. While some countries have made significant progress in halting wetland loss and initiating restoration, others continue to struggle due to weak enforcement, inadequate funding, jurisdictional fragmentation, and poor community engagement (Emerton, 2013). Moreover, the **intersection of wetland**

governance with sectors such as agriculture, urban planning, and water management often results in conflicting mandates and diluted conservation efforts. Many wetlands lie in areas of competing land use, and policies must balance ecological priorities with socio-economic demands—especially for marginalized and Indigenous communities whose livelihoods depend on wetland ecosystems.

This paper investigates the **role of environmental policies in conserving wetlands** by examining global policy frameworks and regional case studies. It evaluates their strengths,³ weaknesses, and institutional contexts. The analysis emphasizes the importance of **adaptive governance**, **community participation**, and **economic instruments** in enhancing conservation outcomes. By identifying what works and what does not, the study aims to inform more effective, equitable, and ecologically sound policy approaches for wetland preservation in an era of climate uncertainty.

2. Policy Frameworks Governing Wetland Conservation -

Effective wetland conservation depends significantly on the legal and institutional frameworks that define and regulate their protection, management, and restoration. These frameworks operate at multiple levels—international, regional, and national—and vary in strength, scope, and enforcement mechanisms. This section explores key policy instruments that shape wetland governance globally and regionally, with an emphasis on their goals, operational mechanisms, and practical challenges.

2.1. International Instruments - The **Ramsar Convention on Wetlands (1971)** is the most prominent international treaty dedicated solely to the conservation and wise use of wetlands. It provides a cooperative platform for over 170 contracting parties, who commit to designating at least one **"Wetland of International Importance"**, maintaining its ecological character, and integrating wetland concerns into national land-use planning. The



Ramsar framework emphasizes the principle of "wise use," which advocates for sustainable utilization that does not compromise ecological function. Countries submit periodic reports and management plans for their listed sites, encouraging transparency and accountability (Ramsar, 2020).

The **Convention on Biological Diversity (CBD)**, adopted in 1992, offers broader environmental protections but explicitly recognizes wetlands as critical ecosystems for maintaining global biodiversity. It promotes ecosystem-based approaches to conservation, with Aichi Target 11 (now echoed in the Kunming-Montreal Global Biodiversity Framework, 2022) calling for the conservation of 30% of inland water and coastal areas by 2030 (CBD, 2022).

The **United Nations Sustainable Development Goals (SDGs)**, particularly **SDG 6 (Clean Water and Sanitation)** and **SDG 15 (Life on Land)**, include measurable targets related to wetland conservation and restoration. These global commitments create normative pressure on states to invest in wetland sustainability, although enforcement mechanisms remain largely voluntary.

2.2. Regional and National Regulations⁴

At the regional level, the **European Union's Water Framework Directive (WFD, 2000)** represents one of the most ambitious and legally binding policy instruments for wetland and water body protection. It aims to achieve "good ecological and chemical status" of water bodies by integrating wetland ecosystems into watershed-based planning. Member states are required to implement River Basin Management Plans (RBMPs) that include wetland restoration, pollution control, and stakeholder participation (European Commission, 2000). The WFD exemplifies a shift toward integrated water resource management (IWRM) and ecosystem-based governance.

In the United States, the **Clean Water Act (CWA, 1972)** serves as the cornerstone of wetland protection. **Section 404** of the Act requires permits

for the discharge of dredged or fill material into waters, including wetlands. The Act provides regulatory authority to the **Environmental Protection Agency (EPA)** and the **U.S. Army Corps of Engineers**. Despite legal debates over the definition of "waters of the United States" (WOTUS), the CWA has facilitated thousands of wetland mitigation projects and provided a legal basis for penalizing environmental violations (EPA, 2021).

In India, the **Wetlands (Conservation and Management) Rules, 2017**, enacted under the **Environment (Protection) Act, 1986**, represent a structured attempt to regulate wetland use. These rules prohibit activities such as solid waste dumping, encroachment, and construction within notified wetlands and their buffer zones. They also provide a framework for wetland inventories, the formation of State Wetland Authorities, and the development of integrated management plans (MoEFCC, 2017). However, critics argue that the exclusion of river floodplains and mangroves, and insufficient community participation, reduce their conservation efficacy.

Overall, while international and national policies provide vital scaffolding for wetland conservation, the **effectiveness of these frameworks depends on local enforcement, stakeholder inclusion, and the integration of ecological science into policy implementation.**

3. Methodology -

This research adopts a **comparative policy analysis** approach, integrating qualitative and empirical techniques to evaluate how environmental policies shape wetland conservation outcomes. The methodology combines **three key strategies**: literature review, secondary data analysis, and case study evaluation.⁵ First, a **systematic literature review** was conducted using scholarly databases (e.g., JSTOR, Scopus, and Web of Science) to compile peer-reviewed articles, policy documents, international treaties, and national legal frameworks related to wetland conservation. This helped in identifying thematic trends, governance



models, and regulatory instruments across different geographical contexts.

Second, **secondary data analysis** was employed to interpret temporal trends in wetland cover using datasets from remote sensing platforms (e.g., Landsat, MODIS) and environmental impact assessments. This data was sourced from institutional reports such as Ramsar Convention updates, India's National Wetland Atlas, and the U.S. EPA's Clean Water datasets.

Third, **stakeholder assessment** was integrated through analysis of published case studies and grey literature, focusing on community perspectives, implementation agencies, NGOs, and local governance mechanisms. These sources enabled a triangulated understanding of how policy translates into practice, especially in case study regions such as the Sundarbans, the Everglades, and English peatlands.

4. Conservation Outcomes -

Understanding the practical outcomes of environmental policies requires examining their implementation across varied ecological, socio-political, and institutional contexts. This section highlights three diverse and globally significant wetland regions—the **Sundarbans (India/Bangladesh)**, the **Florida Everglades (USA)**, and the **peatlands of England**—each governed under different legal, environmental, and cultural frameworks. These case studies illustrate the spectrum of policy success and limitations in wetland conservation.

4.1. Sundarbans (India/Bangladesh) -

The Sundarbans, a UNESCO World Heritage Site and Ramsar-designated wetland, constitute the world's largest contiguous mangrove ecosystem. Spanning over 10,000 square kilometers across India and Bangladesh, it supports high biodiversity and provides crucial services such as storm protection, fisheries, and carbon storage (Gopal & Chauhan, 2006). Despite international recognition and policy instruments, the region faces growing threats from **climate change-induced sea level rise, illegal shrimp aquaculture, industrial pollution, and unsustainable land use.**

Governance complexity is a major constraint. While both countries are parties to the Ramsar Convention and have developed national wetland conservation frameworks, enforcement⁶ is fragmented due to **transboundary jurisdiction**, overlapping mandates between forestry and fisheries departments, and a lack of integrated coastal zone planning. Community-based conservation efforts, such as joint forest management committees in Indian villages and community-based fishery management in Bangladesh, have shown promise but lack consistent financial and technical support. Furthermore, policy measures often fail to reconcile conservation objectives with the **livelihood needs** of millions of marginalized residents who depend on the Sundarbans for subsistence (Iftekhhar & Islam, 2004).

4.2. Florida Everglades (USA) - The Everglades, a subtropical wetland system in southern Florida, represent one of the most ambitious wetland restoration efforts in the world. Originally spanning over 18,000 square miles, the Everglades have been heavily altered due to agricultural expansion, urban development, and canal construction for flood control. The **Comprehensive Everglades Restoration Plan (CERP)**—initiated in 2000 under the U.S. Clean Water Act and state laws—was designed as a \$13.5 billion, multi-decade program to restore water flow, improve water quality, and revive endangered species (Davis & Ogden, 1994).

Significant achievements include the construction of **stormwater treatment areas (STAs)**, **aquifer recharge zones**, and the **decompartmentalization of canals**, which have begun to restore more natural hydrological patterns. Improvements have been recorded in the populations of native species such as the wood stork and Florida panther. However, the initiative has also faced major challenges, including **bureaucratic delays, conflicting interests among agriculture, real estate, and conservationists, and shifting political priorities** (Sklar et al., 2005). Nevertheless, CERP illustrates



how a well-funded, scientifically informed, and legally supported policy can achieve substantial conservation gains when sustained over time.

4.3. Peatlands in England - Peatlands, comprising bogs and fens, are a critical component of England's wetlands. They cover approximately 10% of the UK's land area and store more carbon than all the forests in the UK combined. Yet centuries of drainage for agriculture, overgrazing, and **peat extraction for horticulture** have led to widespread degradation. Despite the UK's commitments under the **EU Water Framework Directive** and national biodiversity strategies, many peatlands remain in poor ecological condition (Natural England, 2020).⁷ The **England Peat Action Plan (2021)** marks a strategic shift by integrating **climate mitigation, water regulation, and biodiversity conservation** goals. The plan supports large-scale rewetting projects, bans on the sale of peat-based compost, and the introduction of **payments for ecosystem services (PES)** to incentivize farmers and landowners to restore peatlands. Successful examples include the **Yorkshire Peat Partnership**, which has rewet over 30,000 hectares of degraded moorland through revegetation, blocking drainage channels, and engaging local communities. These projects illustrate how **cross-sector collaboration and financial instruments** can enhance the implementation of wetland policies. However, long-term success depends on sustained funding, continued engagement of landholders, and monitoring mechanisms to track ecological outcomes (Bain et al., 2011).

5. Policy Effectiveness and Governance Challenges -

Despite the existence of numerous environmental policies at international, national, and sub-national levels, the effectiveness of these frameworks in conserving wetlands often remains inconsistent and insufficient. A range of **governance challenges** hampers their implementation, including weak enforcement, sectoral fragmentation, and inadequate stakeholder participation. These systemic issues limit the

ability of policies to translate into meaningful on-ground conservation outcomes.

5.1. Enforcement and Compliance Issues - A significant impediment to wetland policy effectiveness is the widespread **weak enforcement and poor compliance**. In many developing and even some developed countries, environmental authorities are often under-resourced, both financially and technically, limiting their ability to monitor wetland degradation or enforce zoning regulations and buffer zone restrictions. For instance, India's Wetlands Rules (2017) prohibit construction, dumping, and aquaculture in notified wetlands, but numerous reports indicate ongoing violations, particularly due to weak surveillance mechanisms and overlapping land ownership records (MoEFCC, 2017; Emerton, 2013).

Moreover, economic pressures frequently undermine enforcement. Local administrations, facing pressure to promote economic growth or accommodate infrastructure projects, may prioritize short-term gains over long-term conservation. Corruption and political interference further dilute enforcement integrity. In cases like the Sundarbans, illegal aquaculture or⁸ encroachment continues despite international designations such as Ramsar status, revealing the limitations of mere policy presence without strong regulatory backing (Gopal & Chauhan, 2006).

5.2. Governance Fragmentation - Wetland governance often suffers from **institutional and jurisdictional fragmentation**. Since wetlands intersect multiple policy domains—such as water management, forestry, urban development, and agriculture—no single agency typically holds comprehensive authority. This sectoral division creates silos, where efforts to protect wetlands may conflict with development projects or remain poorly coordinated across departments. For example, in the European Union, while the Water Framework Directive offers a robust legal foundation, its effectiveness varies across member states due to differing institutional arrangements and administrative capacity (Kultti



et al., 2019).

At the sub-national level, coordination between central ministries and local governments is frequently weak. Local agencies may lack clarity on their mandates, leading to regulatory gaps. Moreover, many wetlands, particularly smaller or seasonal ones, fall outside the ambit of official classification, leaving them vulnerable to degradation. The absence of integrated watershed and wetland management plans exacerbates these problems, as seen in regions where wetlands are treated as isolated water bodies rather than as part of interconnected hydrological and ecological systems.

5.3. Community Participation and Equity -

Another major challenge lies in the **top-down nature of wetland policy planning and implementation**, which often sidelines the very communities that depend on these ecosystems. Historically, many wetland conservation efforts have ignored indigenous knowledge systems and traditional ecological practices. When policies are imposed without community involvement, they often encounter resistance, result in non-compliance, or produce inequitable outcomes.

Evidence suggests that **community-based governance models**, rooted in Elinor Ostrom's commons theory, can yield more durable and context-sensitive conservation outcomes (Ostrom, 1990; Adhikari et al., 2009). Local participation improves legitimacy, ensures better monitoring, and aligns conservation with livelihoods. Successful examples include joint management initiatives in Chilika Lake (India) and participatory peatland restoration in England. However, scaling these models requires institutional support, legal recognition, and capacity-building—elements often missing from current policy designs. In sum, addressing these governance challenges is essential to enhance the effectiveness of wetland conservation policies. Enforcement must be backed by adequate capacity and political will, sectoral coordination must be institutionalized, and communities must be seen not as subjects of regulation but as partners in conservation.

6. Toward Better Policy Instruments -

While existing policy frameworks provide a foundation for wetland conservation, the accelerating pace of environmental degradation and socio-economic pressures necessitate a more **innovative, integrated, and participatory approach**. Traditional command-and-control mechanisms are often insufficient in isolation. Emerging strategies highlight the importance of **adaptive legislation, economic incentives, multi-stakeholder partnerships, and community empowerment** as crucial levers for effective and equitable wetland conservation.

6.1. Adaptive and Integrated Legislation

- Given the dynamic nature of wetlands and the mounting uncertainties posed by climate change, environmental legislation must be **adaptive**, allowing for revision of land-use policies, realignment of water rights, and inclusion of updated scientific data. This calls for **flexible regulatory frameworks** that can evolve in response to ecological monitoring and stakeholder feedback.

Moreover, **policy integration across sectors**—particularly water management, land use, agriculture, biodiversity, and disaster mitigation—is vital to ensure coherent and synergistic conservation efforts. For instance, wetlands should be embedded in **river basin management plans**, urban master plans, and agricultural subsidy schemes. The EU's Water Framework Directive is a strong example, requiring member states to coordinate across administrative levels and sectors to maintain the ecological status of water bodies (European Commission, 2000).

In India, however, policies such as the Wetlands (Conservation and Management) Rules (2017) remain siloed and insufficiently linked to other resource governance frameworks. The lack of clear legal mandates for climate adaptation within wetland rules also hinders long-term resilience planning (MoEFCC, 2017).

6.2. Economic Instruments - Economic tools can align conservation goals with local



livelihood needs by **creating financial incentives** for wetland protection. Among the most promising mechanisms is **Payments for Ecosystem Services (PES)**, wherein beneficiaries of ecosystem functions (such as clean water¹⁰ or carbon storage) compensate landowners or communities for maintaining or enhancing these services.

For example, in the UK, farmers restoring peatlands under the **England Peat Action Plan** receive subsidies for rewetting activities that sequester carbon and prevent soil erosion (Natural England, 2020). Similar schemes are operational in Costa Rica, where forested wetlands are preserved through government payments funded by fuel taxes. PES can help offset the opportunity costs of conservation, particularly in developing countries where wetlands are often converted for agriculture or aquaculture (Engel et al., 2008).

Another economic instrument is the **polluter pays principle**, which holds industries or municipalities financially liable for wetland degradation caused by pollution or encroachment. By internalizing environmental costs, this principle discourages harmful activities and generates revenue for restoration.

6.3. Public–Private Partnerships (PPP) - Public–private partnerships (PPPs) offer opportunities to mobilize additional resources, share technical expertise, and scale up conservation initiatives. PPPs can facilitate restoration through corporate social responsibility (CSR) initiatives, eco-tourism ventures, or green infrastructure development.

In Vietnam, for instance, a collaborative model between shrimp farmers, NGOs, and the government has established **mangrove buffer zones**, combining conservation with aquaculture. Farmers receive training and certification for sustainable practices, which in turn improves market access and wetland health (IUCN, 2016). In Florida, private developers are mandated to fund wetland mitigation banks—offsite restoration projects that compensate for wetland loss elsewhere. While not without controversy, these mechanisms have spurred significant investment

in restoration and created new markets for ecosystem credits (Robertson, 2006).

6.4. Participatory Planning Models - Top-down conservation efforts frequently fail due to **lack of local legitimacy, knowledge disconnects, and resistance from affected communities**. Therefore, inclusive planning models¹¹ that incorporate local voices—especially those of Indigenous peoples, women, and marginalized groups are essential.

Participatory wetland governance allows for more context-sensitive management, enhances compliance, and fosters stewardship. In India, joint management models in **Chilika Lake** and **Keoladeo National Park** involve local fishers, bird watchers, and forest committees in decision-making, leading to improved ecological outcomes and conflict resolution (Adhikari et al., 2009).

Participatory approaches are also instrumental in **monitoring and evaluation**, such as community-led water quality monitoring or habitat assessments, which can reduce data gaps and promote responsive policy updates. Scaling such models requires legal empowerment, training, and sustained institutional support.

7. Discussion -

The analysis of wetland conservation efforts across various geopolitical and ecological contexts reveals that the **effectiveness of environmental policies** is highly contingent upon how well they are integrated, enforced, and grounded in **community engagement**. While international instruments like the Ramsar Convention provide valuable recognition and normative frameworks, their impact is largely symbolic if not backed by strong national implementation and localized stewardship. Designation of wetlands as Ramsar sites or under national legislation, though necessary, is not sufficient to halt degradation if **institutional capacity, funding, and coordination mechanisms are lacking**.

Policies that **integrate cross-sectoral objectives**—such as those linking water



governance, biodiversity, agriculture, and disaster resilience—demonstrate better outcomes. The European Union's Water Framework Directive and the U.S. Clean Water Act illustrate how **legal mandates combined with regulatory oversight** can drive sustained ecosystem protection. However, even in these regions, competing interests, bureaucratic inertia, and climate variability complicate outcomes.

Importantly, the evidence affirms the critical role of **economic instruments** and **community-driven governance**. Tools like **Payments for Ecosystem Services (PES)**, eco-tourism revenue sharing, and community-led restoration have proven successful when embedded within enabling legal frameworks. Such approaches not only improve compliance but also enhance **social equity** by addressing livelihood needs of wetland-dependent populations.¹² Yet, the **emerging threat of climate change**—through altered hydrological cycles, sea-level rise, and extreme weather—necessitates that wetland policies become **adaptive and forward-looking**. Static zoning and rigid regulatory prescriptions may fail in rapidly changing ecological conditions. Therefore, future policies must be dynamic, participatory, and data-informed, balancing conservation with sustainable development imperatives.

8. Conclusion -

Wetlands, as critical ecosystems providing multifaceted ecological, social, and economic benefits, demand robust and forward-thinking environmental governance. This research underscores that while policies at the international, national, and regional levels have made significant strides in recognizing the value of wetlands, a persistent **implementation gap** undermines their effectiveness. Merely formulating laws or designating wetlands under conventions like Ramsar is inadequate without **institutional capacity, funding mechanisms, and political will** to enforce them consistently.

To ensure sustainable conservation, policies must adopt **adaptive governance models**

that are responsive to changing environmental conditions, especially those driven by climate change. Integrating wetland management into broader water, land, and climate frameworks will be critical for coherence and long-term resilience. Moreover, empowering **local communities**, incorporating **indigenous knowledge systems**, and providing **economic incentives** such as Payments for Ecosystem Services (PES) can greatly enhance stakeholder engagement and conservation outcomes.

Future wetland policy must also emphasize **equity and inclusiveness**, ensuring that those who bear the brunt of conservation costs—often rural and marginalized populations—are compensated and actively involved in planning and monitoring. Ultimately, a **multilevel, participatory, and integrated approach** will be key to preserving the world's wetlands for future generations.

References

- Adhikari, B., Ojha, H., & Ojha, L. B. (2009). The commons in northern India: Institution models and policy lessons. *Ecology and Society*, 14(2), 21. 13.
- Bain, C. G., Bonn, A., Stoneman, R., Chapman, S., Coupar, A., Evans, M., ... & Thompson, D. B. A. (2011). *IUCN UK Commission of Inquiry on Peatlands*. IUCN UK Peatland Programme.
- CBD. (2022). *Kunming-Montreal Global Biodiversity Framework*. Secretariat of the Convention on Biological Diversity. <https://www.cbd.int/>.
- Davis, S. M., & Ogden, J. C. (1994). *Everglades: The ecosystem and its restoration*. CRC Press.
- Emerton, L. (2013). Enforcement and incentives: Using economics to improve wetland policy outcomes. *Wetlands International Report*.
- Engel, S., Pagiola, S., & Wunder, S. (2008). Designing payments for environmental services in theory and practice: An overview of the issues. *Ecological Economics*, 65(4), 663–674. <https://doi.org/10.1016/j.ecolecon.2008.03.011>.
- EPA. (2021). *Clean Water Act Section 404: Permit Program*. United States Environmental Protection Agency. <https://www.epa.gov/cwa-404>.
- European Commission. (2000). *Directive 2000/60/EC: Water Framework Directive*. Official Journal of the European Communities.
- Gopal, B., & Chauhan, M. (2006). Biodiversity and its conservation in the Sundarban mangrove ecosystem.



Aquatic Sciences, 68(3), 338–354.

- ☛ Iftekhhar, M. S., & Islam, M. R. (2004). Managing mangroves in Bangladesh: A strategy analysis. *Journal of Coastal Conservation*, 10(1), 139–146.
- ☛ IUCN. (2016). *Sustainable shrimp farming and mangrove restoration in Vietnam*. International Union for Conservation of Nature.
- ☛ Kultti, K., et al. (2019). Cross-sector coordination for wetland policy: Lessons from Europe. *Environmental Policy and Governance*, 29(4), 254–267.
- ☛ Ministry of Environment, Forest and Climate Change (MoEFCC). (2017). *Wetlands (Conservation and Management) Rules, 2017*. Government of India.
- ☛ Mitsch, W. J., & Gosselink, J. G. (2015). *Wetlands* (5th ed.). Wiley.
- ☛ MoEFCC. (2017). *Wetlands (Conservation and Management) Rules, 2017*. Ministry of Environment, Forest and Climate Change, Government of India.
- ☛ Natural England. (2020). *England Peat Action Plan: Evidence and Summary Report*. UK Department for Environment, Food & Rural Affairs (DEFRA).
- ☛ Ramsar Convention. (2020). *Global Wetland Outlook 2021*. Ramsar Secretariat. <https://www.ramsar.org>.
- ☛ Robertson, M. M. (2006). The nature that capital can see : Science, state, and market in the commodification of ecosystem services. *Environment and Planning D: Society and Space*, 24(3), 367–387. <https://doi.org/10.1068/d3305>.
- ☛ Sklar, F. H., Chimney, M. J., Newman, S., McCormick, P., Gawlik, D. E., Miao, S., ... & Rutchey, K. (2005). The ecological–societal underpinnings of Everglades restoration. *Frontiers in Ecology and the Environment*, 3(3), 161–169.
- ☛ Zedler, J. B., & Kercher, S. (2005). Wetland resources: Status, trends, ecosystem services, and restorability. *Annual Review of Environment and Resources*, 30, 39–74. <https://doi.org/10.1146/annurev.energy.30.050504.144248>.



शोध-पत्र लेखकों को विशेष निर्देश

‘दि गुंजन’ और ‘अभिनव गवेषणा’ मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल में पेपर प्रकाशित कराने के लिए पाँच प्रमुख बातों का होना बहुत ही आवश्यक है—

- (1) रिसर्च जर्नल पत्रिका के क्रमानुसार चार पेज से कम नहीं होना चाहिए।
- (2) रिसर्च जर्नल में कम से कम आठ सन्दर्भ ग्रन्थ सूची (**References**) का होना आवश्यक है।
- (3) रिसर्च जर्नल में लेखक का नाम, पद, कालेज का पता, ऊपर अंकित होना चाहिए।
- (4) नवीनतम एक पासपोर्ट साइज फोटोग्राफ एवं ई-मेल एड्रेस।
- (5) रिसर्च जर्नल में प्रमाण-पत्र हेतु आपके निवास का पता अंकित होना जरूरी है।

यह आप सभी के स्नेह का ही परिणाम है कि आपके प्रबुद्ध विचारों को ‘दि गुंजन’ और ‘अभिनव गवेषणा’ मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल के माध्यम से अपने पाठकों तक पहुँचाने का सुअवसर मिल रहा है। विस्तृत जानकारी हेतु कार्यालय अथवा मोबाइल पर सम्पर्क करें।

- प्रबन्ध सम्पादक

सम्पर्क - 8896244776, 9335597658



Received: 10 Jan., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

Security - Insecurity and Gender as Determinent of Suicidal Tendency



- Pooja Kasera
Assistant Professor -
Department of English,
Government College, Lakheri-
323603, Dist.-Bundi (Rajsthan)

E-mail:
shivkumarbnd21@gmail.com

Every human being has problems and troubles life they react to them differently. Any problems which may disturb very much to an individual might to of no importance for other one. This develops the fear of insecurity. Security among the people which influence very significantly in shaping and reshaping the personality of an individual.

The mental health is also affected by the feeling of security insecurity. The condition of being in safety or free threat of danger to life or in which power of consequent is attained without struggle. This is closely related with the feelings of beings at home, safety friendliness, calm, easy, relaxation at unconflicted, emotional stability self-acceptance and well based self-feeling of security strength. A person who feels himself secured must have tendency to accept other human beings, which refer cooperativeness, kindness, sympathy and sociality. Thus insecurity may be defined as emotional instability, feeling of anxiety, inferiority, rejections isolation, jealousy, hostility, irritability inconsistency and tendency to accept the worst general permission or sorrow. An insecure person always feels disturbances due to various self-esteem complexes. They show more neurotic can be measured by assessing one's response to the basic needs with frustration or without frustration.

The definition of "Security" depends on one's perspective. At the simplest level, security may be defined as "the quality or state of being secure," "freedom from danger", "and freedom from fear or anxiety".

The definition of "security has not been given as much attention as has the definition of condition that make for security or the consequence of having or lacking security. It was forcibly to my attention when drafting my dissertation in 1939 that the word is derived from the Latin "Sine Cura," i.e. "Without care" Or, if you like, "without anxiety". "Without fear", "without worry", or, indeed, "free from security",

-Mary

Ainsworth. It is easy to feel comfortable about defining security as a feeling-an "all is well" kind of appraisal of sensory input, an OK, go ahead feeling. And if you read his "Making and breaking of affectional bonds" you will find the following.

"Many of the most intense emotions arise during the



formation, the maintenance, the disruption, and the renewal of attachment relationships. The formation of a bond is described as falling of love, maintaining a bond as loving someone, and losing a partner as grieving over someone. Similarly, threat of loss arouses anxiety, and actual loss gives rise to sorrow, whilst each of these situations is likely to arouse anger. The unchallenged maintenance of a bond is experienced as a source of security, and the renewal of a bond as a source of joy."

Thus Bowlby conceives of security as a feeling that can be experienced in the context of attachment, but surely he would not limit the applicability of the feeling to that context and more than he would limit the emotions of anger, fear and joy to attachment-related situations.

William Blatz's "security theory" the usually spoke of security as willingness to accept the consequence of one's behalf. However, he too thought of security as a feeling, for he contrasted feeling secure with being safe.

I was always uneasy about Blatz's insistence on "consequences" as inapplicable to the infant or very young child. Privately, I was more comfortable with the thought an infant or very young child felt secure his needs were met, and when he confidently expected that they would be met—a definition consistent with drive theory, to which I implicitly until become immersed in attachment theory.

If we defined security as a feeling that the maintenance of the bond to an attachment figure is not threatened and that all is well on that score the term "felt security" contains a redundancy. The "felt" is unnecessary.

On the other hand, defensive processes then present a problem. Defenses operate to reduce the anxiety aroused by a situation which cannot otherwise control, in much the same way that an analgesic drug operates to reduce the pain of a toothache. The defensive process of cognitive disconnection (i.e., repression) temporarily gets rid of the anxiety, but one cannot say that it secures. "Detachment", which is cognitive disconnection that has become habitual or consolidated, is more

persistent but it is brittle, and even those who use the term "felt security" would not wish to call detached persons secure.

Type of Security-Insecurity

Family security-Insecurity- Immaturity in family relationship as shown by quarreling with family members. Poor family relationships are a psychological problem of any stage of life. But especially so during adolescence because at this time boys and girls are typically unsure of themselves and depend on their families for a feeling of security. Even more important they need guidance and help in mastering the developmental task of adolescence. When family relationships are marked by friction, during adolescence will be deprived of the opportunity to develop poise and more mature pattern of behavior. The adolescent whose whole family relationship is unfavorable may also develop poor relationship with people outside the home.

Educational security-Insecurity- There are three types of adolescents who have little security in education and who usually dislike school. They are first, adolescents whose parents have unrealistically high achievement and who are constantly prodding them to come up to these goals. The second type are those who find little acceptance among their classmates and who, as a result, feel that they are missing out on fun their age-mates are having in extracurricular activity. Third, early maturers who feel conspicuously large among their classmates and who because they look older than are capable of. Adolescents that have little security in education usually show their lack of interest in the following ways. They become underachievers, working below their capacities in all school subjects or in the subject of least security in educational usually shows their lack of interest in the following ways. They become underachievers, working below their capacities in all school or in the subject of least security in.

(A) Peer group security-insecurity

(B) Social security-insecurity



(C) Emotional security-insecurity

Self-context security-Insecurity-

Adolescents must have stable self-concepts. The self-concept usually becomes increasingly more stable as adolescence progress. This gives adolescent sense of inner continuity and enables them to see themselves in a manner, rather than one way later. These also increase their self-esteem and result in favoring feeling of inadequacy.

Adolescence must be reasonably well satisfied with their achievements in any area in which they feel deficient. Self-acceptance leads to behaviors that make others like and accept the adolescent. This in turn, reinforces the adolescent's favorable and feeling of acceptance.

All-Rihani (1985) studied the role of family in development of children's feeling of security by comparing children from permissive democratic families with those from authoritarian families and found that the subject from permissive democratic families were more secure than were those from authoritarian families. Female subjects were more secure than male subjects attributed to greater independence given female subjects. There was no difference between subject from urban and rural areas and it was suggested that parents' counseling may increase security feelings among children.

Main Kaplan and Jude (1985) studied security in infancy, childhood and adulthood and found that early security of attachment to each parent was highly related to fluency of parent-child discourse as evidence in transcripts of a reunion dialog. Early security of attachment to mother predicted the child's emotional openness and reaction to presentation of a family photograph. The parent's mental representation of a family photograph. The parent's mental representation of the self in relation to attachment was significantly related to the security of the infant's attachment. This was significantly related to the security of the infant's attachment five years earlier. Shiv Kant (1991) found that backward female have

more feeling of security, than backward male, on other hand forward male have more feeling of insecurity than forward female, urban backward youth have more feeling of insecurity than rural backward youth, and on other hand rural forward youth have more feeling of insecurity than urban forward youth.

Shah (2000) studied the security in security in school and college student by using on 100 school and college boys and girls. 30% boys studying showed insecurity within their family and girls. The results suggest that college and girls student were more insecure than boys' student in family area and school area. In other areas they had similar feeling.

Morgolein L. de Jong (1991) attachment individuation & risk of suicide in late adolescence insecurity of attachment and level of individuation from parents and peers was examined among 126 undergraduates, 42 with a history of suicidality, 42 who were currently depressed with no history of suicidality, and 42 normal controls, suicidality was defined as history of serious suicidal ideation or suicide attempts. As predicted, students with parents. In contrast they were similar to depressed and control student on security of peer attachment and level of individuation from peers. Student with a history of suicidality rated their parents and mothers as emotionally absent in childhood to a significantly higher degree than depressed and normal controls. This effect was independent of depression but not from gender. History of suicidality is more strongly associated with family instability than with parental divorce. Absence of parent's as emotionally available attachment figure at a time when such availability critically heightens adolescent's vulnerability to suicide.

Objective-

1. The first problem of the present study is to investigate the effect of security-insecurity on suicidal tendency. These two factors work independently.
2. The second problem of the present study



is to investigate the effect of gender i.e. male & female on suicidal tendency.

3. The third problem of the present study is to determine the offset of security-insecurity and gender and suicidal tendency. Security-insecurity and gender were treated as variables of the present study. They can interact and if they interact to some extent do they influence each other.

Hypothesis-

1. There will be no

significant effect of security-insecurity on suicidal tendency.

2. There will be no significant effect of gender on suicidal tendency.

3. There will be no significant effect of security-insecurity and gender on suicidal tendency.

Design-

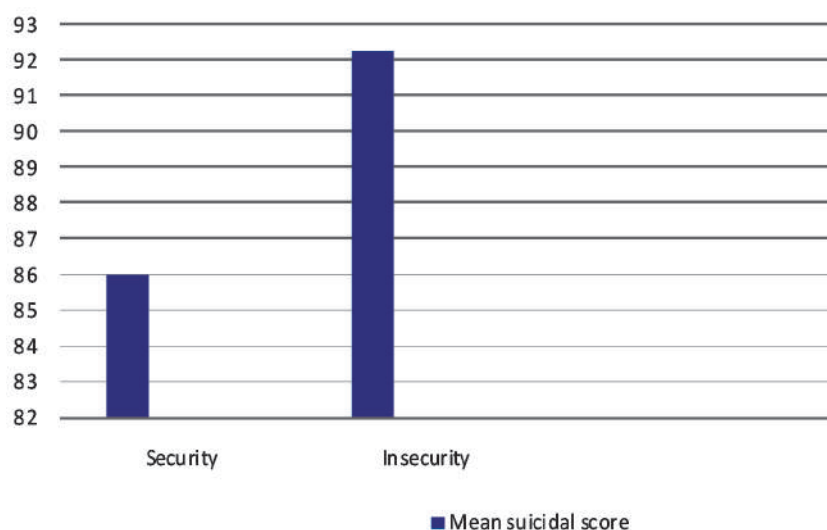
The design is a 2x2 factorial design with two levels of security-insecurity (security, insecurity) and two levels of gender (male & female). The dependent variable is suicidal tendency, which will be studied.

Tools-

1. Security-insecurity scale, developed and standardized by Prof. Beena Shah (1983) was used. This scale includes 75 items under the eight areas: family security, school security, security of peer group, study context security, perspective context security, test context security, self context security and existence context security. This scale measures security-insecurity of the male and female students from class 10 PC1 level students of both sexes.

2. Suicidal ideation scale, constructed by the investigator was used as the research instrument. This suicidal ideation scale has been prepared in Hindi language with 47 items. Each item has responses, never, hardly to sometime, mostly

Fig.1 Mean Suicidal Score as Function of Security Insecurity



and always. This scale has been found highly reliable and valid.

Sample-

360 subjects were selected for the present study. 180 subjects' security-insecurity (90 security, 90 insecurity). 180 subjects' gender (90 male, 90 female) were included.

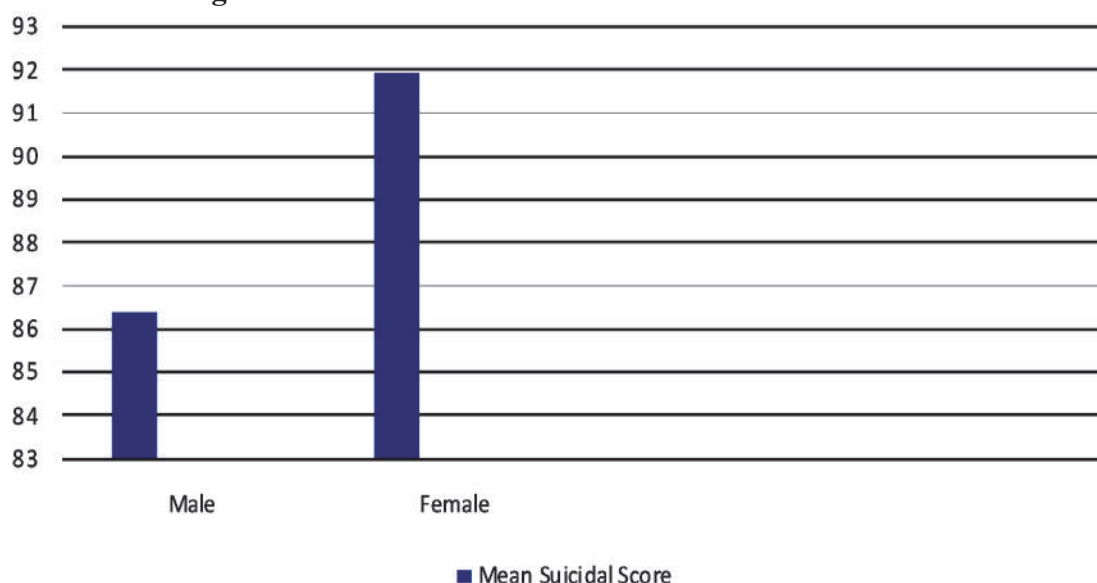
Results-

The variable of security-insecurity is highly significant. This indicates that security-insecurity of students was also an important factor influencing their suicidal behavior. The null hypothesis that there is no significant effect of security-insecurity on suicidal tendency was rejected. The mean scores of the subjects having security characteristics (mean = 86.03) is lower than that of subjects having insecurity characteristics (mean = 92.27). These significantly greater suicidal tendency mean scores of insecure subjects over secure enable us to conclude that insecure subjects have more suicidal tendency than secure subjects. The mean of suicidal score of insecure and secure is graphically represented in Fig. 1. (See Fig.-1)

An inspection of Fig. 1 also shows that there is greater suicidal tendency in insecure students than in secure students. Therefore, we can again conclude that insecure students are more suicidal than secure students.



Fig.2 Mean Suicidal Scores A Function of Gender



The variable of gender is significant at 0.1 level of confidence. This shows that gender of the student was a potent factor in influencing suicidal behavior. Thus the null hypothesis that there is no significant suicidal tendency was rejected and substantive hypothesis was accepted that there is a significant difference between males and females in their suicidal behavior. The mean scores of male and female can be obtained in table which is 86.36 and 91.94 respectively. The mean score of female is greater than mean score of males. This greater significant mean suicidal score of females than that of males leads us to conclude that females have greater suicidal tendency than males. The mean suicidal score of male and female students are graphically presented in fig-2. Even an inspection of fig-2 reveals that the females have greater suicidal tendency than males. **(See Fig.-2)**

The interaction effect between security insecurity and gender was highly significant. Thus the null hypothesis that there was not significant interaction effect of security-insecurity and gender

was rejected. That the means of two levels of security-insecurity are not independent from the two levels of gender. The fact that the significant mean square indicates that the mean of secure and insecure for both level of gender, i.e. male & female are significant difference.

The mean that the security in security effect is not the same for the different levels of gender. Mean suicidal Score for levels of security-in security at both levels of gender are given in table. **(See Table-1)**

A look at fig-3 reveals these insecure females have greater suicidal tendency than insecure males; secure males have lesser suicidal tendency than secure females. The figure also reveals that the insecure females have greater suicidal tendency than insecure males. Table also that the mean suicidal score of both levels of gender. Duncan's range test was applied to discover difference among all possible comparison pairs. The result of inter group differences are given in table-2.

Table-1 Mean of Security-Insecurity and Gender

Gender	Secure	Insecure
Male	85.211	87.52
Female	86.866	97.022

These mean are graphically shown in fig-3

**Table-2 Significant Difference in Interaction Effect of Security-in Security and Gender**

Mean	Secure/male 85.211	Secure/female 86.866	Insecure/male 87.522	Insecure/female 97.022
Secure/male 85.211		1.655	2.311	11.809**
Secure/female 86.866			6.56	10.156**
Insecure/male 87.522				9.5**
Insecure/female 97.022				

**denote $p < .01$

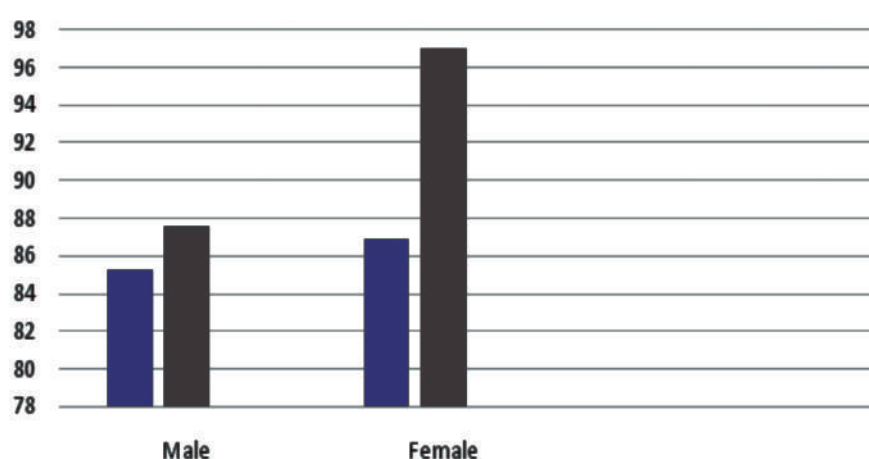
From table-2 it may be noted that non-significant difference were found between mean suicidal score of secure male and secure female, secure male and insecure male and secure female and insecure male. Insecure male obtained less suicidal score than secure females, and insecure females are significant secure males. This may be interpreted that insecure males have higher suicidal tendency than other groups though the mean suicidal score of secure females is lesser than insecure females and secure males. Their differences were significant. The same table shows that the lower suicidal score of secure males was found significant than that of insecure males.

Conclusion:

The present research plan is aimed to study the effect of security-insecurity on suicidal tendency. Result shows that the null hypothesis i.e. there is no significant effect of

security-insecurity on suicidal tendency was rejected. The insecure subjects have greater suicidal tendency than secure.

Every human being has problems and trouble in his life. They react to them differently. Any problem which may disturb very much to an individual, may not disturb other who feels himself secure. They may have the less suicidal tendency and, they attempt other human beings more. This may be due to cooperativeness, kindness, sympathy and socially accepted norms. The people who feel insecure may have different experiences. They may feel loneliness and alienated in the family as well in the society. As the suicidal tendency is defined as emotional stability, feeling of anxiety, irritability, inconsistency and tendency to accept the worst general permission or slow therefore they may take the decision to end himself. An insecure person always

Fig.3 Significant Interaction of Security the Security and Gender



feel disturbances due to various self-esteem complexes and they show more reactions to frustration, anxious, depressive mood and go on suicidal attempts.

The present study was aimed to investigate the relationship of gender with suicidal tendency. The result shows that gender is an influencing factor for affecting the people's suicidal ideation. And the result shows that females have greater suicidal tendency than males. The review of CDC 2000 shows that the male adolescents are five times more likely to commit suicide than females. The present findings do not support the above review. The researches conducted in United States show that males are four times more likely to die by suicide than females. In other western countries, males are also much more likely to die by suicide than females. The results of the present investigation differ from the result of the researches conducted in US and other western countries. Indian reports about suicide indicate that suicide rate for women are nearly three times higher than those for men. Thus the present investigation confirms the findings drawn on Indian population.

References

- May Ainsworth, on security www. Psychology Suny sb. Fidu/Attachment/pdf/ndu security.
- Shah Beena, Security-insecurity scale. Ancur Psychological Agency 22/481 Indra Nagar, Lucknow.
- Rita, Sherman & Fower, 1990. Cause and Motives; Adolescent Alienation journal of Youth and Adolescence.
- Main Kapline and Jude, 1985. Unpublished dissertation. To study the feeling of insecurity direction of aggregation pattern of self-concept and level of education and vocational aspiration among backward youth. Feroze Gandhi College, Raebareilly University Kanpur, 1501991 Kan-51st03768.
- Shiv Kant, unpublished dissertation, To study the feeling of insecurity, direction of aggregation pattern of self-concept and level of education and vocational aspiration, among backward youth. Feroze Gandhi college, Kan Bareilly University Kanpur, 1501901 Kan-51st03768.
- Morgolein I. de Jung. Attachment individuation and risk of suicide in late adolescence, Journal of fringerlink. Com/uudex/v 590204 K66677m2p.





Received: 12 Jan., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

Modi's Concept of Soft Power Diplomacy in Foreign Policy



- Dr. Preeti Singh
Associate Professor -
Dept. of Political Science.
D. B. S. (P.G.) College,
Kanpur-20806 (U.P.)

E-mail:
singhpreeti7284@gmail.com

Hard and Soft Power -

In recent years, soft power has become an important component of foreign policy globally. There is no one definition that can truly encapsulate such a broad concept as Soft Power. The most commonly accepted definition of Soft Power in its contemporary sense was given by Harvard political scientist Joseph Nye at the turn of 20th century (2004:10). Joseph Nye coined the term soft power and explained it as one of the three ways of exerting power. According to Nye, “power is the ability to alter the behaviour of others to get what you want” (Nye, 2006) and there are three methods of altering behaviour namely coercion, payments and attraction. Soft power falls in the third category and a country has three main sources of soft power: “its culture (in places where it is attractive to others), its political values (when it lives up to them at home and abroad), and its foreign policies (when they are seen as legitimate and having moral authority)” (Nye, 2006). In an interdependent world where traditional power resources have become costlier, technology, education and economic growth have risen as important factors determining a country's power. (Nye, 1990) The power to influence others wants— to make them align their interests with your own – enables an actor to achieve its desired outcome without having to use coercion (“sticks”) or inducement (“carrots”)(Nye, 1990). It can do so by capitalising on various assets, such as a country's culture, political values and foreign policy, as well as by legitimising itself to the world and standing beside popular channels of communication. This leads to others admiring the nation and aiming to follow in its footsteps, which increases its power (Nye, 1990).

Put simply, soft power is soft—it does not rely on hard instruments of power like a military tank. Its influence is soft— one feels it subtly or surreptitiously as one feels attracted to certain music or food. In academic writing in IR, the neorealist approaches tend to emphasize hard power, while liberal institutionalist scholars consider soft power as an essential resource of statecraft (Wilson, III, 2008). The major difference between soft and hard power is that the latter coerces the actor to do something desired by the coercer, while soft power persuades it to do the same thing without coercion. According to Nye Jr, “soft power is the ability to obtain preferred outcomes through attraction rather than coercion or payments” (Nye Jr, 2009a). It rests on the ability to set the



political agenda in a way that shapes the preferences of others (Nye, 2002-2003). Soft power encompasses nearly everything other than economic and military power. But, in cases of both hard power and soft power, there is a concern for power, tangible power, to fulfil a state's goal. Nye Jr argues, If a state can make its power seem legitimate in the eyes of others, it will encounter less resistance to its wishes. If its culture and ideology are attractive, others will more willingly follow. If it can establish international norms consistent with its society, it is less likely to have to change. If it can support institutions that make other states wish to channel or limit their activities in ways the dominant state prefers, it may be spared the costly exercise of coercive or hard power (Nye, 1990).

The major characteristics of soft power include, “culture (when it is pleasing to others), values (when they are attractive and consistently practiced), and policies (when they are seen as inclusive and legitimate)” (Nye, 2009b). The concept of soft power draws upon the ideas of Antonio Gramsci, who conceptualizes how a state uses its cultural and ideological power to maintain hegemony. According to Nye Jr, “... political leaders and thinkers such as Antonio Gramsci have long understood the power that comes from setting the agenda and determining the framework of a debate. The ability to establish preferences tends to be associated with intangible power resources such as an attractive culture, ideology, and institutions” (Nye, 2002-2003). Nye Jr was concerned with the problem of maintaining the US supremacy in international politics, to realize the US's goal in the increasingly complex global system. The Smart Power Commission co-chaired by him, in its report of 2007 argued, “America's image and influence had declined in recent years, and that the United States had to move from exporting fear to inspiring optimism and hope ... Smart power is the ability to combine the hard power of coercion or payment with the soft power of attraction into a successful strategy” (Nye, 2009a).

From that perspective, soft power goals are same as those of hard power—only the means

differ. Soft power takes a long time to produce intended results, but it is an effective instrument for accomplishing goals. One of the major elements of soft power, which is applicable perhaps to all cases, is non-violence which has a direct appeal to the human “mind and heart”. Such an attraction, however, may lack the moral content, hence force as morality varies from culture to culture, from people to people, and from place to place. Soft power is a broader concept and implies all elements of persuasion including culture that a nation-state uses to realize its foreign policy goals. The core significance of the concept is national culture, particular those aspects which are attractive or pleasing to others, is an element of soft power. The nation-state promotes those pleasing aspects of culture with the goal to increase its persuasive power to realize goals. Against this background this article examines India's cultural diplomacy and its elements, and their prospects in shaping India's foreign policy.

Indian Soft Power Assets -

The Modi government has mainly relied on culture and political values (democracy) to promote Indian soft power. As opposed to the Nehruvian foreign policy doctrine Panchsheel whose five principles were “mutual respect for each other's territorial integrity and sovereignty, mutual non-aggression, mutual non-interference in each other's internal affairs, equality and cooperation for mutual benefit and peaceful co-existence”, the Modi government has formulated its own foreign policy doctrine labeled Panchamrit. Panchamrit's five pillars are “dignity, dialogue, shared prosperity, regional and global security and cultural and civilizational links” (Panchsheel Gives Way to Panchamrit, 2015). This new foreign policy ideology assumes that India has finally “arrived”, has achieved superpower status and is now a major, confident global player instead of a mere observer. Panchamrit is much more assertive in its tone, compared to the pacifist spirit of Panchsheel.

Modi's government has aggressively promoted India's tradition and modernity worldwide. This is one of the government's major



contributions to India's cultural diplomacy. India under Modi has not shied away from promoting India's ancient civilization characteristics even while showcasing India's newly gained advantages including human resource and fast growing economy. Ted Piccone at the Brookings Institute has offered this review of Modi's first year as the political leader of India:

A review of Modi's external affairs agenda during his first year in office tells us many things: his vision for making India work again, seizing the initiative in South Asia and the broader Asian theater, and proclaiming India as an inevitable success story worth betting on... But one also takes away from Modi's first year in office a deeply felt spiritual and philosophical worldview that promotes India's civilizational and cultural characteristics as unique contributions to the world. Modi speaks of India's vibrant democracy, its "unity in diversity" ethos, not only as the indispensable ingredient for governing its remarkably complex society but as the necessary path toward greater peace and coexistence in the world, a world that would allow his country to reach sustainable levels of development and prosperity (Piccone, 2016).

In contrast to his predecessors who were not open to the idea of displaying religious identity and culture, Modi displays his cultural roots to promote India's interests. Piccone argues, "what sets Modi apart from his predecessors is his mission to help spread the experience of a more inclusive and democratic India not only to his fellow Indians but to the wider world. As a devout Hindu, Modi is not shy about preaching the virtues of what he considers not a religion but a way of life that encompasses all societies ..." (Ibid.: 95). He used the occasions such as International Day of Yoga to promote inclusive and pluralistic identity of India. For example, he celebrated the day in 2015 on the Raj Path, with 35,985 people, belonging to 84 nationalities, doing 21 yoga postures. The exercise earned two Guinness World Record titles for "Largest Yoga Session" and "most nationalities in a yoga lesson" (Ghosh, 2015). In 2016, he celebrated the Day in Chandigarh in

Punjab, and while emphasizing on the idea to make yoga popular throughout the world, he announced two awards for the yoga day celebrations next year: one for those doing good work in the field of yoga at international level and the other at national level (Indian Express, 2016a).

The Modi government's areas of soft power emphasis are linked to the century old Indian ideals such as India's role as the world's teacher or the notion of "vasudhaiva kutumbkam" which implies that the whole world is a big family. The four broad categories of the display of soft power are ancient heritage or civilizational ties, democracy, economic aid and Bollywood.

Civilizational Ties -

Ancient heritage and civilizational links mainly appeal to the culture and regional security characteristics of the Panchamrit. According to Modi, "in the present era, which can be considered an era of knowledge, our roles and responsibilities have increased. We have to emerge as a vishwa guru, not only to give new direction to the world, but also to protect our own heritage" (Martin, 2015). He also portrayed India to be the best of both worlds as India was young in terms of demographics while simultaneously being one of the most ancient civilizations of the world. Two major themes under the ancient heritage banner are Buddhism and yoga. Buddhism and yoga are earnestly exploited by India so that it is recognized as the world's spiritual capital. Even before Modi took power, former governments placed a lot of emphasis on using Buddhism as a cultural tool. For the past decade, the Indian Council for Cultural Relations (ICCR) has organized several Buddhism themed conferences in East Asian countries such as Thailand (April 2010) and South Korea (May 2010). Buddhism has been the catchphrase associated with most of Modi's East Asian country visits and his Look East/Act East policy. Modi has explicitly claimed that "without Buddha, this century cannot be Asia's century" (Pethiyagoda & that during all his visits abroad, a day is reserved for visiting a Buddhist temple (Aurora 2015).

Buddhism-

The charm of Buddhism was skillfully



deployed in India's immediate neighborhood: Nepal, Sri Lanka and Bhutan (one of the first countries Modi visited as a Prime Minister). Modi's Kathmandu visit was characterized by his 4 Cs agenda namely cooperation, connectivity, culture and constitution and he even gifted a Bodhi sapling to Nepal, reiterating the cultural angle (Pethiyagoda, 2015). As Pethiyagoda (2015) claims, cultural connect was perhaps most beneficial in Sri Lanka as it helped reduce animosity and foster a more friendly bilateral relationship. Modi invoked the ancient Indo- Lankan Buddhist connection, dating back to the Mauryan Empire under Ashoka. He also made a strategic choice to visit Sri Lanka's ancient capital, Anuradhapura and the Jaya Sri Mahabodhi which served as a witness to historically strong Indo-Lankan ties (De Silva, 2015). In addition, he inaugurated the India funded Jaffna Cultural Centre and paid a visit to Colombo's Mahabodhi Temple (Pratap, 2015:59). Similarly, in South Korea, Modi replanted a Bodhi tree sapling India had sent earlier. This in turn served to create closer economic ties between both countries, resulted in an influx of Foreign Direct Investment (FDI) from South Korea primarily to improve infrastructure and help build smart cities (India Tomorrow.net, 2015). In addition, it enabled Modi to lure South Korean companies to invest in the Indian manufacturing sector to boost his coveted "Make in India" initiative, deepen defence cooperation and enhance technology transfer between both countries among other objectives (India Tomorrow.net, 2015).

The most publicized state visit was Modi's China visit. Given that China is experiencing cultural renaissance under current President Xi Jinping, Modi seized the opportune moment to make Buddhism an underlying theme during his state visit. Once again, he chose to land in Xian first instead of Beijing to visit the Wild Goose Pagoda, emblematic of Xuanzang's monumental travel to India and gifted a Bodhi sapling to the Xian government (Aneja, 2015). Modi played the culture card in China to advance India's economic interests; India desperately needed Chinese FDI to shrink the balance of payment gap with China and

the 24 agreements signed during Modi's visit were mainly trade agreements, agreements to establish twin cities and cooperation in scientific research (De Silva, 2015). Still, the cultural overtone of his trip failed to yield satisfactory results on the strategic front as China perceived an inadequate balance between India's hard power and soft power, hence undermining India's hard bargain potential.

Stobdan (2016) indicates that there are a few bottlenecks when India uses Buddhism as an outreach factor. Firstly, India has less than one percent of Buddhists and there exist major rifts plaguing the Mahayana tradition in India. In addition, Buddhism has been completely transformed in India, having been eliminated from the subcontinent by Islam at the end of the thirteenth century. Hence, modern day Indian Buddhism is devoid of the original teachings and practices and has been instead subsumed in the Hindu narrative. In order to create a common link with other East Asian countries, Modi has resorted to scraping the surface using ancient heritage sites in India instead of more deeper and substantial religious discussion. Also, as Pethiyagoda (2015) illustrates, Modi government's Buddhism focus is also apparent in some of the official government initiatives. On 4th May 2015, India initiated and hosted International Buddha Purnima Diwas to celebrate the birth of Lord Buddha. Incidentally, it was on this same date that Modi made his first appearance on the Chinese microblogging website Weibo to reiterate the ancient civilizational link between the two Asian giants. Furthermore, New Delhi would have a center for Buddhist worship and learning and would host an International Buddhism conference in 2016. Buddha diplomacy is being flaunted by the Modi government for two key foreign policy goals; a strategic one and an economic one; namely to offset Chinese soft power and to stimulate religious tourism in India. Buddhism is perceived to be a central tool in rebalancing power dynamics in East and South East Asia where both China and India compete for geopolitical influence. Hence, while China has taken steps to build and preserve Buddhist



monasteries in Myanmar, Cambodia, Thailand, Modi's strategy is to visit monasteries during his trips to East Asia and present countries with saplings from the sacred Bodhi tree in Bihar. In the light of economic competition, Buddhism can either mellow bilateral relations or help India gain leverage by roping in the support of East Asian countries.

Cultural appropriation rivalry between India and China over Buddhism has intensified ever since Modi came into power. While the Chinese government views Lumbini in Nepal (Buddha's birthplace) as the focal point of religious tourism, the Indian government asserts that Bodhi Gaya in Bihar is much more important since that is where Buddha attained enlightenment, and is actively marketing that destination (Nandy, 2015). To use this to its full advantage, India has been considering the option of issuing visa-on-arrival to Buddhist tourists visiting the country for religious tourism. The Indian Ministry of Tourism and Culture in collaboration with the World Bank will also be developing a fast track Buddhist Tourist Circuit (Martin, 2015). Apart from Buddhism, the pragmatic Modi government is using other religions to underline strong ties with countries, especially Central Asian countries which are vital for India's growing energy appetite as part of its Connect Central Asia policy. Modi expressed that Islam tied India and Central Asia and softened his staunch Hindu nationalist stance by claiming that "the Islamic heritage of both India and Central Asia is defined by the highest ideals of Islam – knowledge, piety, compassion and welfare" (Pant, 2015). Despite these endeavours, Modi has not yet adopted an institutional approach to incorporate religious aspects in its foreign policy – there exists no formal department similar to the US State Department's Office of Religion and Global Affairs, for example, to supervise religious outreach initiatives.

Yoga -

Among various soft power assets of India, yoga is a prominent one. While introducing a proposal to celebrate yoga as an international event at the 69th session of the United Nations General

Assembly, Prime Minister Modi stated, "yoga is an invaluable gift from our ancient tradition. yoga embodies unity of mind and body, thought and action ... a holistic approach [that] is valuable to our health and our well-being" (UN, 2016a). According to the United Nations website, "yoga is an ancient physical, mental and spiritual practice that originated in India. The word "yoga" derives from Sanskrit and means to join or to unite, symbolizing the union of body and consciousness ... International yoga Day aims to raise awareness worldwide of the many benefits of practicing yoga" (UN, 2016b).

One of the major recognitions of India's soft power was the United Nations' approval of 21 June as International Yoga Day-the first of which was 21 June 2015. Modi claimed that yoga was India's gift to the world and it led to a peaceful harmony of the body and the mind and helped "discover the sense of oneness with yourself, the world and the nature" (Mohan, 2014). The World Yoga Day was widely welcomed, especially since Modi kept religion out of his yoga discourse and capitalized on the global yoga boom and popularity. During the International Yoga Day, in addition to a spectacular yoga parade in New Delhi, the Indian Armed Forces also celebrated the day with great pomp (Forces Display Soft Power, 2015). The world's highest battlefield, Siachen Glacier, witnessed soldiers practicing yoga despite sub-zero temperatures and as part of the "Yoga Across Oceans" initiative, the Indian Navy members had yoga sessions stretching from the Mediterranean waters to South China Sea. Internationally about 125 million people practice yoga. In 2016, on the yoga day at Dubai, led by Indian yoga guru, Baba Ramdev, 100,000 people participated, creating Guinness Book record. In recent days, there have also been attempts to explore the utility of yoga in bringing peace in conflict situations. Yoga can play a positive role in bringing peace to conflict situations (Mahapatra, 2013).

Ayurveda -

Besides Yoga, Ayurveda (which can be translated as "science of life"), an ancient practice,



is another Indian soft power tool. According to Sharma (1981: v), “Ayurveda is one of the branches of the Vedas”. Ayurveda has become increasingly popular in the developed world, and it is seen in conjunction with yoga. At present, there are about 2000 Ayurvedic Retreat centers around the world, and out of which about 100 centers are based in the United States. Association of Ayurvedic Professionals of North America (AAPNA) (2016) aims to bring “the healing science of Ayurveda and its modalities to the forefront of integrative medicine in the West”. In November 2014, Indian government upgraded the Department of Ayurveda, yoga and Naturopathy, Unani, Siddha and Homoeopathy, founded in November 2003, into a fullfledged ministry to institutionalize India's ancient heritage endowment as well as to help Ayurveda attain the same exalted status as Chinese traditional medicine through better packaging and promotion (Martin, 2015).

Yoga has generally been used for image building by India and as a means to allay fears associated with its hard power build-up. This is the Indian counterpart to China's concept of “Peaceful Rise”. India happens to be the world's largest weapons importer, primarily from countries such as France, United States, Israel and Russia and Modi's ambition of developing a prosperous domestic defense industry points to India's growing military power aspirations (Tandon, 2016). In order to gain support for this objective and to establish itself as a powerful regional hegemon in South Asia, it is imperative that India's international image is untarnished and that it is largely viewed as a peaceful, spiritual, non-threatening and benevolent ally. In fact, Australian Prime Minister Tony Abbot agreed to sell uranium to India mainly because of its non-threatening position in the international arena and his belief that India had a spotless track record when it came to non proliferation. (Tandon, 2016).

Both yoga and Buddhism are influential branding mechanisms for India. Having armed forces take part in the World Yoga Day was a smart move as it projected a peaceful Indian military that

refrained from aggression; a completely opposite image compared to the current image of the Chinese military, thereby increasing international goodwill for India. Some other attempts to highlight ancient heritage are the use of Sanskrit and the power of zero, both emphasizing India's world teacher posture. Sanskrit can be used to appeal to countries like Indonesia, the biggest and most powerful ASEAN member whose language has been greatly influenced by Sanskrit as well as Mongolia, an important country for the purpose of strategic encirclement of China, where rulers, even during present times, would rather have their names written in Sanskrit than in their own language (De Silva, 2015).

Sanskrit -

India has been a melting pot of religions, languages and cultures. Sanskrit played an important role in building the identity of India and its soft power. According to Hart (1984: viii), Indian scholars had accumulated some 160,000 texts in Sanskrit since long time. While Sanskrit dominated the landscape for significant part of its history, other languages and religions gradually became an inseparable part of Indian culture and tradition.

In June 2015 Sanskrit Conference in Bangkok India stressed the importance of mastering Sanskrit to solve some of the biggest problems plaguing the world today such as poverty, global warming and terrorism (Pant, 2015). By terming the language as “modern and universal”, Modi government's plans to propagate the ancient language globally by means of a \$20,000 International Sanskrit Award to scholars contributing significantly to the language were also announced. Following in the footsteps of yoga and Sanskrit, India decided to sponsor an “International Conference of Zero” and gifted a bronze bust of Aryabhata to the UNESCO Headquarters to showcase its age-old intellectual tradition and contributions.

Democracy -

Previous Indian governments have recognized democracy as one of India's most valuable assets. In 2000, India became a founding



member of the Communities of Democracies and joined the UN Democracy Fund in 2005, being its second major donor after the United States (Sudhindra, 2015). However, India has traditionally been reluctant to actively promote democracy overseas (especially given the disastrous consequences of democracy export attempts by the United States in the Middle East) and has preferred to set an example instead. Nevertheless it has quietly helped young democracies asking for India's assistance. For instance, much of the UPA government's Africa policy revolved around institution building, mainly to assist democracy transitions. Like his predecessors, Modi is not a vociferous advocate of democracy promotion abroad yet he has smartly used democracy as a talking point during his diplomatic engagements. For example, during his travels to Bhutan, Nepal, United States, Australia, South Korea, Japan and Myanmar, he has constantly played up India's democracy card to facilitate strategic engagement with the West and unite with other Asian democracies on the basis of shared values. He has often proclaimed that democracy made India an important global partner. An interesting case is Modi's visit to Mongolia on the latter's 25th democratic anniversary (Pant, 2015). The buzzwords of this trip were Buddhism and democracy where Buddhism was said to have made India and Mongolia "spiritual neighbors". Modi was the first Indian Prime Minister to ever visit Mongolia and acclaimed it as the "new bright light of democracy" thereby differentiating India and Mongolia from China. These efforts, coupled with Modi's \$1 billion aid package to Mongolia served as a measure to strategically encircle China as China was doing to India by helping Nepal and Pakistan economically in return for greater influence in those countries.

Economic Aid -

Modi also used the policy of foreign aid and soft loans to promote India's policies in developing countries. During his visit to Fiji in November 2014, first by an Indian prime minister in 33 years, Modi offered two lines of credit totalling US\$75 million for the sugar industry and a grant of \$5

million for village, small and medium industries. During the visit to Fiji and other Pacific nations, his government announced Special Adaptation Fund to provide technical assistance and training for capacity building to the Cook Islands, Tonga, Tuvalu, Nauru, Kiribati, Vanuatu, Solomon Islands, Samoa, Niue, Palau, Micronesia, Marshall Islands, Fiji and Papua New Guinea (Chaudhury, 2014). During his visit to Mongolia in May 2015, Modi announced a \$1 billion credit line for infrastructure development (The Hindu, 2015).

While participating in the third India-Africa Forum Summit, attended by 41 Heads of State and Government and officials from 54 African countries, in December 2015, Modi offered Africa a concessional credit of \$10 billion over 5 years and a grant assistance of \$600 million. Besides other development activities, the assistance also included 50,000 scholarships in India to Africans (Roy, 2015). In December 2015, while inaugurating Afghanistan parliament, constructed by India at \$90 million, Modi said, "This Parliament Complex is a small tribute to your progress as a nation and a democracy. And, it will stand as an enduring symbol of the ties of emotions and values, of affection and aspirations that bind us in a special relationship" (Times of India, 2015). In June 2016, he along with Afghanistan President Ashraf Ghani inaugurated \$290 million Salma Dam, also known as Afghan-India Friendship, in Herat province of Afghanistan. India's strategy in Afghanistan differs from that of Pakistan who uses coercive tactics such as Taliban mercenaries to retain control. On the other hand, India has heavily invested in Afghan infrastructure building, such as highways, hospitals, electricity projects as well as institution building (law enforcement, judiciary, Kabul Parliament) (Qureshi, 2014). Indian companies, especially its steel and mining companies, have largely benefitted from such involvement with the latter having won the mining rights to Afghanistan's most abundant iron ore deposit field (Mullen et al. 2012). From the Indian perspective, the choice of an economic intervention instead of a military one has helped it



gain a lot of goodwill and has kept Pakistan at an arm's length.

India is gradually emerging as a major foreign aid donor country. In 2011, India spent over \$1.5 billion in foreign aid, overtaken only by China among developing country donors, even though it remains a major aid recipient (Mullen et al. 2012). In the 1950s, India's financial condition only permitted it to give in-kind aid such as technical assistance to its smaller neighbors like helping Bhutan build its hydroelectric facilities through knowledge transfer. However, India is now able to make cash transfers, not only to countries in its immediate neighborhood like Bhutan and Nepal, but to a much larger variety of recipients such as African countries. India has kept aside \$1.6 billion as foreign aid for the year 2015-2016 and is creating its own foreign aid agency named the India Agency for Partnership in Development (IAPD) which would be able to spend an estimated \$11.3 billion in the next 5-7 years (Know Everything About How Much India, 2015).

India has historically allotted 63% of its foreign aid budget to Bhutan primarily to support the latter's hydropower sector which would in turn consolidate India's regional power status. The second largest recipient of Indian aid is Afghanistan, where India has played an important role in big infrastructure projects, followed by Sri Lanka, Nepal, Bangladesh, Myanmar, Maldives and African countries (Know Everything About How Much India, 2015). Africa and Afghanistan are two very strategic reasons for aid disbursement, serving ulterior geopolitical motives vis-à-vis Pakistan and China respectively. In Africa, India and China are both intensely competing for African energy supplies, especially crude oil, to satisfy their yawning energy appetites. Consequently, taking into account the continent's usefulness as an energy reservoir, generous aid packages are earmarked for Africa.

Modi has more or less followed the aid policies formulated by the administrations since the 1990s. His Afghanistan policy especially depicts more continuity with Manmohan Singh's approach than differences. In September 2016, he

offered \$1 billion to Afghanistan for nation building (Busvine and Kumar, 2016). Nevertheless, Sharma (2015) shows that Modi's aid packages are bigger than the ones offered in previous years, in terms of amount and scope. For example, during the April 2015 Nepal Earthquake, the Modi administration injected \$67 million in Nepal during Operation Maitri (biggest disaster relief assistance till date) and promised to give approximately 15% worth of the reconstruction costs. Also, a \$2 billion line of credit was offered to Bangladesh which happens to be the largest financial assistance by India to another country. Moreover, during Modi's Vietnam visit, he presented \$500 million defence line of credit (LoC) to the host nation which is the biggest amount of defence LoC India had ever given out (Mitra, 2016).

Bollywood -

Bollywood has been one of India's biggest cultural exports from Africa to the Middle East and East Asia. However, the Indian government very rarely uses Bollywood as an official soft power tool in its foreign policy. This might actually prove to be beneficial since as Nye remarked, in today's world, the best kind of propaganda comes from things which are not meant to be propaganda, thereby increasing their credibility. Afghanistan is perhaps the country where the craze for Bollywood movies has indirectly acted as a catalyst for a closer and warmer Indo-Afghan bond.

Even India's traditional rival, Pakistan, is smitten by the charm of Bollywood movies. In spite of a long official ban on Bollywood movies which was lifted in 2008, Pakistanis still managed to watch pirated copies of Indian movies. Another landmark development was the release of the classic movie *Sholay* in Pakistan on March 23, 2015 in theatres, forty years after its release in India (Soft Power of Bollywood, 2015). Despite this time lag, movie theatres were fully booked, vouching for *Sholay*'s runaway success in Pakistan. The year 2015 was also the year when a Bollywood movie succeeded in influencing political decisions in Pakistan. The 2015 movie



Bajrangi Bhaijaan where a kind Indian man helps a mute Pakistani girl return home, overcoming multiple obstacles, prompted the Pakistani government to let Geeta, a deaf and mute Indian girl, stranded in Pakistan for thirteen years finally return to India and be reunited with her family (Pillai, 2015). Therefore, Bollywood movies strengthen people-to-people connect in the neighboring countries, even though it is not a conscious move by the Indian government. Similarly, in Myanmar, according to the local people, Indo-Burmese relations revolve around 5 B's namely Buddhism, Business, Bollywood, Bharatnatyam and Burma teak, and Bollywood movies are a roaring success (India-Myanmar Ties, 2015).

Apart from Asia and Africa, Bollywood movies are making their mark in many East European countries like Poland and Lithuania as well as in Russia where Indian movie stars like Arjun Rampal feature in television commercials. The "King of Bollywood", Shah Rukh Khan, is extremely popular in Poland where there have been a number of Shah Rukh Khan movie festivals (Bhutani, 2015). These factors could give the Indian government some much needed diplomatic leeway in its interactions with East Europe and some small Asian countries captivated by the magic of Bollywood.

The Indian government has had a fetish for Bollywood stars when it came to choosing the brand ambassador of its main tourism campaign, "Incredible India". While Aamir Khan served as the campaign's brand ambassador since its inception, in an unprecedented step, the Indian government directly appointed Bollywood megastar Amitabh Bachchan and Priyanka Chopra as Aamir Khan's successors in 2016. The choice of Bollywood stars is an excellent marketing move as these are faces widely recognized in almost every corner of the globe and might subsequently attract a large number of tourists to the country.

The Modi Brand -

Modi is seen as a proactive and bold political leader who stands his own ground and believes that India is second to none on the global

stage. He has made efforts to cultivate people-to-people ties, as can be seen from his decision to visit Xi Jinping's hometown and invite him to his hometown as well. Another instrument he's wielding is digital diplomacy. Martin (2015) demonstrates some of Modi's successful public relations efforts. Modi's Twitter has around 9.5 million followers and he has skillfully used this platform to demonstrate his close friendship with Japanese Prime Minister Shinzo Abe as well as extend a public invitation to President Obama for India's Republic Day Celebrations in 2015. Modi's surprise visit in Lahore on the occasion of Prime Minister Nawaz Sharif's birthday further supports Modi's personal relationship approach. These efforts are all ultimately directed at fostering stronger bilateral ties which would translate into commercial or strategic benefits for India.

Furthermore, in line with the previous governments' diaspora outreach initiatives such as the Pravasi Bharatiya Diwas introduced by Vajpayee in 2002, Modi similarly recognizes the untapped potential of India's large diaspora network (approximately 25 million people) and has put in tremendous effort to connect with them. Another striking feature about Modi is his choice of communicating in Hindi. By choosing vernacular over English, unlike other rival politicians often seen to be pandering to English, he has succeeded in increasing his Indianness quotient and in reaffirming India's great power status where it makes its own rules instead of playing by other countries' rules. In doing so, he seems to be taking a cue from Chinese leaders who also converse only in Chinese.

Conclusion -

In present-day world interdependence and technological advancement has made coercive methods of exerting power more expensive, resulting in a global shift towards soft power. Soft power has been globally recognised as a desired tool for expanding power and is a vital part of every nation's foreign policy. While the use of soft power in foreign policy has not been spearheaded by Modi, he has certainly been more forceful about



the projection. While previous governments have also used soft power to support foreign policy, their efforts were comparatively more ad-hoc and lacked a well formulated and consistent approach. On the other hand, the Modi government is taking baby steps to develop a cohesive, strategic and institutionalized approach to the use of soft power which would most likely increase its effectiveness in foreign policy. Modi's government is still in the nascent stages of making India a soft power powerhouse but as compared to the previous governments, Modi has certainly been more successful in institutionalizing and developing a more consistent and strategic soft power approach.

References

- AAPNA. (2016) "Vision & Mission", <http://aapna.org/home/vision>.
- Aneja, Atul. (2015, May 11). Soft Power Set to Define Prime Minister Narendra Modi's China Visit. The Hindu, <http://www.thehindu.com/news/international/social-media-bollywood-and-yoga-to-dominate-modis-china-visit/article7194559.ece>
- Bhutani, Surender. (2015, March 31). Bollywood's Soft Power Visible All over Poland. The Indian Diaspora. Retrieved from http://theindiandiaspora.com/news-details/Spotlight/primary_news/bollywoods-soft-power-visible-all-over-oland.htm.
- Busvine, Douglas, & Kumar, Manoj. (2016, September 15). India pledges \$1 billion in aid to Afghanistan before donor meeting. <http://in.reuters.com/article/india-afghanistan-ghani-modi-aid-idINKCN11K25E>
- Chaturvedi, Sachin. (2012, September 05). Aid from India, Coming to a Country near You. The Hindu. <http://www.thehindu.com/-opinion/op-ed/aid-from-india-coming-to-a-country-near-you/article3859607.ece>.
- Chaudhury DR (2014) "Narendra Modi doles out financial largesse to Fiji & 13 other Pacific Island nations". Economic Times 20 November, http://papers.economictimes.indiatimes.com/2014-11-20/news/56303964_1_president-xijinping-cooperation-united-nations.
- Chung, Lawrence. (2015, May 14). Yoga and Modi's Soft-power Position on China. South China Morning Post; <http://www.scmp.com/news/china/diplomacy-defence/article/1795974/indian-prime-minister-looks-yoga-add-soft-power-twist>.
- De Silva, Bandu. (2015, May 29). Emerging Cultural Emphasis In India's Foreign Policy Under Modi. Colombo Telegraph. Retrieved from <https://www.colombotelegraph.com/index.php/emerging-cultural-emphasis-in-indias-foreign-policy-under-modi/Forces-Display-Soft-Power-From-Siachen-to-South-China-Sea>.
- (2015, June 21). The New Indian Express. <http://www.newindianexpress.com/nation/Forces-Display-Soft-Power-From-Siachen-to-South-China-Sea/2015/06/21/article2878979.ece>.
- The Hindu. (2015) "Mongolia gets \$1-bn credit gift". 19 May, <http://www.thehindu.com/news/national/mongolia-integral-part-of-indias-act-east-policy-modi/paper7216207.ece>.
- The Hindu. (2016) "India ranks 76 in Corruption Perception Index". January 27, <http://www.thehindu.com/news/international/india-ranks-76-in-corruption-perception-index/paper8158407.ece>.
- India-Myanmar Ties: Buddha, Bharatanatyam and Bollywood. (2015, January 15). Youth Forum on Foreign Policy, <https://yffpindia.wordpress.com/2015/01/15/india-myanmar-ties-buddha-bharatanatyam-and-bollywood>.
- http://in.rbth.com/blogs/tatar_straits/2015/10/10/the-re-emergence-of-indian-soft-power-in-rusia_481335.
- Indian Express. (2014a) "Full Text: Prime Minister Narendra Modi's speech on 68th Independence Day." 16 August, <http://indianexpress.com/paper/india/india-others/full-text-prime-minister-narendra-modis-speech-on-68th-independence-day>.
- Indian Express. (2014b) "Highlights of Narendra Modi's Address in Nepal Parliament". 3 August, <http://indianexpress.com/paper/india/politics/live-pmmodi-arrives-in-kathmandu-on-a-2-day-visit>.
- Indian Express. (2016a) "10 quotes from Narendra Modi's yoga Day speech: 'Make yoga a part of one's life'." 21 June, <http://indianexpress.com/paper/india/indianews-india/ten-quotes-from-narendra-modis-address-on-international-yogaday-in-chandigarh-2865991>.
- Indian Express. (2016b) "South Africa transformed Mohandas into Mahatma: PM Modi in Johannesburg". 9 July, <http://indianexpress.com/paper/india/indianews-india/live-narendra-modi-south-africa-johannesburg-speech-tour-latest-2902188>.
- Know Everything About How Much India Receives And Donates Foreign Aid. (2015, November 06). The Logical Indian. <http://thelogicalindian.com/story-feed/exclusive/know-everything-about-how-much-india-receives-and-donates-foreign-aid>.
- Lakshman N (2014) 'Vasudhaiva Kutumbakam' is India's Philosophy: Modi". The Hindu 28 September, <http://www.thehindu.com/news/national/vasudhaivaku-umbakam-is-indias-philosophy-modi/paper6453203.ece>, accessed 22 June 2016.
- Martin, Peter. (2015, January 25). Yoga Diplomacy. Foreign Affairs. <https://www.foreignaffairs.com/articles/india/2015-01-25/yoga-diplomacy>.



- ☛ Mir, Haroun. (2007, March 16). Indian 'idol' in Afghanistan. The Hindu Business Line. <http://www.thehindubusinessline.com/-todays-paper/indian-idol-in-afghanistan/article1682196.ece>.
- ☛ Mitra, Devirupa. (2016, September 04). India and Vietnam Upgrade to Comprehensive Strategic Partnership. The Wire. <https://thewire.in/63957/india-and-vietnam-upgrade-to-comprehensive-strategic-partnership>.
- ☛ Mohan, C. Raja. (2014, December 15). Modi's Diplomacy: Yoga, Democracy, and India's Soft Power. Carnegie Endowment for International Peace. <http://carnegieendowment.org/2014/12/15/modi-s-diplomacy-yoga-democracy-and-india-s-soft-power>.
- ☛ Mukherjee, Rohan. (2014). The False Promise of India's Soft Power. Geopolitics, History, and International Relations, 6(1), 46-62, doi : 10.2139/ssrn.2246839.
- ☛ Mullen, Rani, and Ganguly, Sumit. (2012, May 08). The Rise of India's Soft Power. Foreign Policy. <http://foreignpolicy.com/2012/05/08/the-rise-of-indias-soft-power>.
- ☛ Nandy, Chandan. (2015, May 04). For Modi Regime, Buddhism Is A Soft Power Approach for Hard Power. The Quint. <http://www.thequint.com/world/2015/05/05/for-modi-regime-buddhism-is-a-soft-power-approach-for-hard-power>.
- ☛ Nye JS (1990) Soft Power. Foreign Policy; 80 (Autumn): 153–171.
- ☛ Nye JS Jr (2002-2003) Limits of American Power. Political Science Quarterly; 117 (4): 545–559.
- ☛ Nye, Joseph. (2006, September 25). "Springing Tiger," Harvard University Kennedy School of Government, India Today. <http://www.hks.harvard.edu/news-events/news/news-archive/springing-tiger>.
- ☛ Nye JS (2008) Public diplomacy and soft power. The Annals of the American Academy of Political and Social Science; 616 (1): 94–109.
- ☛ Nye JS (2009a) Get Smart: Combining Hard and Soft Power. Foreign Affairs; 88 (4): 160–163.
- ☛ Nye JS (2009b) Soft power and smart power In: Campbell KM and Price J (eds).
- ☛ Panchsheel Gives Way to Panchamrit. (2015, April 04). The Telegraph. http://www.telegraphindia.com/1150404/jsp/nation/story_12587.jsp#.Vy6KuyGfk4A.
- ☛ Pant, Harsh. (2015, August 20). New Delhi's Soft Power Push. Yale Global. <http://yaleglobal.yale.edu/content/new-delhi's-soft-power-push>.
- ☛ Pethiyagoda, Kadir. (2015, June 01). Modi Deploys His Culture Skills in Asia. Brookings India. <https://www.brookings.edu/opinions/modi-deploys-his-culture-skills-in-asia-2>.
- ☛ Pillai, Pooja. (2015, October 26). From Bajrangī Bhaijaan to Geeta: When Soft Power Shows India and Pakistan the Way. The Indian Express. <http://indianexpress.com/article/-explained/from-bajrangī-bhaijaan-to-geeta-when-soft-power-shows-india-and-pakistan-the-way>.
- ☛ Qureshi, Aurangzeb. (2014, September 03). How India Is Using 'Soft Power' to Secure Energy Interests. Foreign Policy Journal. <http://www.foreignpolicyjournal.com/2014/09/03/how-india-is-using-soft-power-to-secure-energy-interests>.
- ☛ Roy S (2015) "PM Modi offers Africa \$10-bn loan, says projects to be monitored". Indian Express 25 December.
- ☛ Salient Features of India-South Korea Joint Statement on Strategic Partnership. (2015, May 18). India Tomorrow.net. <http://www.indiatomorrow.net/eng/salient-features-of-india-south-korea-joint-statement-on-strategic-partnership>. <https://thewire.in/63957/india-and-vietnam>.
- ☛ Sharma, Rajeev. (2015, June 26). From Nepal to Vietnam: PM Modi is raining money on India's neighbours to counter China. First Post. <http://www.firstpost.com/world/from-nepal-to-vietnam-pm-modi-is-pouring-money-on-indias-neighbours-to-counter-china-2313342.html>.
- ☛ Soft Power of Bollywood. (2015, February 14). The Tribune, <http://www.tribuneindia.com/news/editorials/soft-power-of-bollywood/41700.html>
- ☛ The Soft Power 30. (n.d.). <http://softpower30.portland-communications.com/find-out-more>.
- ☛ Stobdan, P. (2016, November 28). To Deploy the Soft Power of Buddhism, India Needs to Embrace the Sangha. [https://thewire.in/83060/buddhism-soft-power-india-china/Sudhindra, Uma. \(2015, December 08\). From Buddhism to Bollywood - The Investment in Soft Power](https://thewire.in/83060/buddhism-soft-power-india-china/Sudhindra, Uma. (2015, December 08). From Buddhism to Bollywood - The Investment in Soft Power).
- ☛ Tandon, Aakriti. (2016, February 29). The Modi Government and India's Projection of Its Soft Power. The Round Table. <http://www.commonwealthroundtable.co.uk/commonwealth/the-modi-government-and-indias-projection-of-its-soft-power>.
- ☛ UN. (2016a) "International Day of yoga: Background Information", <http://www.un.org/en/events/yogaday/background.shtml>.
- ☛ UN. (2016b) "International Day of yoga", <http://www.un.org/en/events/yogaday>.
- ☛ Vivekananda International Foundation. <http://www.vifindia.org/print/2785>.
- ☛ Wilson EJ III (2008) Hard power, soft power, smart power. The Annals of the American Academy of Political and Social Science; 616 (1): 110–124. ♦♦



Received: 20 Jan., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

Stress Management Through Yoga, Meditation and Positive Thinking



- Prof. Pratibha Srivastav
Head, Dept. of Psychology,
M. M.V. (P.G.) College,
Kanpur-208011 (U.P.)

E-mail:
pratibhasri1504@gmail.com

Abstract

The 20th Century was rightly termed as the century of stress and conflict. Today stress is a common phenomenon of everyday life. In all walks of life, people suffer from some degree of stress due to factors known and unknown.

In modern society, there is a gulf between people rich-poor, backward and downtrodden and different religious sects, classes and caste. Such establishment has caused anxiety, stress depression and hypertension.

Today there is a need to reform ills of society in order to attain peace. It is very difficult to eliminate the source of disease but at the same time it is not very difficult to adopt those techniques which will ease out the stress and equip the individual to fight the devil of disease. Through a number of studies, it has been revealed that the practice and training of Yoga, Meditation and Positive Thinking has produced relief to Physiological, Psychological and other mental related disorder. The present theoretical paper is an attempt to highlight the role of Yoga, Meditation and positive thinking in managing stress and specially how positive thinking can be handy for living healthy life.

Keywords : *Stress Management, Stressors, Yoga, Mediation, Positive Thinking.*

Introduction-

The aim of the present theoretical paper is to highlight the concept of stress and also discuss the role of positive thinking and Yoga techniques to get rid of stress.

The present world is said to be a world of achievements, is also a world of stress. Everyone seems to be talking about stress in daily conversation, television, newspaper, organizations etc. People of today generally are living in the realm of turbulence and frustration. Advancement of technology, ecological change, socio-economical misbalance, changing family relationship and so many dormant factors have affected our life. There is a lack of love, affection, peace, co-operation, assimilation and accommodation in every walk of life. The material development have been curbed the path of truth, beauty and welfare. In the lack of good sense of



huminity, people always remain in emotional stress and anxiety.

Concept of Stress-

Stress may be considered as any physical, chemical or emotional factor that causes bodily or mental tension and that may be a factor in diseases causation. Physical and chemical factors that can cause stress include trauma, infections, toxins, illness and injuries of any sort. Emotional causes of stress and tension are numerous and varied. While many people associate term “Stress” with Psychological stress, Scientists and Physicians use this term to denote any force that impairs the stability and balance of bodily functions.

The term 'stress' has been derived from technical Science where it indicates an excessive and detrimental overloading of objects. **Selye (1950)** defined stress as a nonspecific response of the body to any demand. **Levi (1987)** defined stress as conditions causing body to readapt. When the personal resources and environmental demands do not match, stress arises. **Zimbardo (1988)** defined stress as “the pattern of specific and nonspecific responses an organism makes to stimulus events that disturbs equilibrium and tax or exceed its ability to cope”.

The level of stress has been increasing with increasing complexities of our life. In this modern era of technology and competition the stress is on everyone's life. Stress is a life cycle crisis. Stress is the consequences of person's appraisal processes, that the personal resources are or not sufficient to meet the demand of the environment. Recent researches has shown that like the natural direction stress has also four directions: eustress, distress, hypostress and hyperstress.

It needs to be noted that stress is not always bad, it is, in fact, a basic ingredient of life. Our system is equipped with certain innate “Stress alarms” that allow people to function effectively in many situations. Without undergoing any stress there would not be constructive or creative activity. What we need is to reduce the amount of negative stress (eustress).

Sources of Stress -

There are varieties of sources of stress. **Pestonjee (1992)** has outlined three important sectors of life which stress may arise-Job and organization, Social sector and Intrapsychic sector **Taylor (1995)** has concluded that there are three major antecedent sources of stressful behaviours-stressful life events, stress in workplace, and stress in families. **Vinokur and Selzer (1975)** found life stress to be related to the occurrence of depression, anxiety and tension. There are three general categories of stressors –

(a) Catastrophic events, such as earthquakes, floods, fires, wars, accidents, violent physical attacks and sexual assaults.

(b) Major life events, such as death of a spouse or family member, divorce, losing one's Job, disability or illness.

(c) Daily Hassles, such as living in a noisy neighborhood, commuting to work in heavy traffic, waiting in a long line.

Concept of Stress in Ancient Indian Culture-

The concept of stress is explained in the traditional texts of Indian culture. The body mind relationship which is hallmark of modern stress studies was emphasized in the 'Ayurvedic' system of medicines. There are two Sanskrit words “Klesha and Dukha” which approximates modern concept of stress. The word 'Klesh' means cause of pain' and are not mental processes but are a set of 'hindering load' on our mental process. 'Dukha' refers to the phenomenon of stress itself and 'klesh' is the stressor aspect.

Buddha emphasizes 'abhidharma' a psychological theory which emphasizes that if act is motivated by evil mental state, it inevitably leads to stress and pain and if its motive is pure happiness follows the actions. Besides this, Gita, Charakasmhita and Ayurveda provides an excellent illustration of stress and how it is to be reduced.

Relevance of Yoga and Meditation in Combating Stress-

In the Sixth century B.C. India became the birth place of popular religious movement known



as a Buddhism. It left a lasting influence not only on Indian life and culture but also far and wide. As a religion Buddhism is basically a method of cultivating the mind with the ultimate aim to strike at the roots of sufferings which recently are termed as stress.

If we follow Buddha's four noble truth and eight fold paths, we can easily reduce sufferings of the life, we need change our attitude towards life and value preferences that gives us more contentment, calm, peace and poise and harmony. Buddhist Philosophy proposes noble 8 fold path to destroy craving and to achieve liberation (Moksha in religious sense and stress management in psychological terms), while the latest stress coping techniques that rely on self-efficacy, yoga, meditation, rationality etc are just the extension of Buddhist philosophy in some way or other. So "**Buddham Sharnam Gachhami**" still has the appeal not as a religious faith but for stress management also.

Buddha laid great emphasis on yoga and meditation for controlling and preventing the psycho-physical ailments. Yoga literally means to join to yoke or bind together. Yoga thus stands for union and control. It is the union of mind with the inner most centres of one's own being, the self of Atman, it also implies self control and self discipline. Yoga thus constitutes psychophysical, moral and spiritual training which aims at building the totality of man (Nanda – 2007).

According to Patanjali's integrated Yoga, yogic practices are classified as –

- ☛ Yama or improvement in our social behaviour.
- ☛ Niyama or improvement in our personal behaviour.
- ☛ Physical Posture.
- ☛ Concentration.
- ☛ Meditation.
- ☛ Attainment of Super consciousness.

Now a days Yoga is opening a new vistas of life in which one can lead a peaceful life.

It has reached almost every doorstep of the

world. The discipline of yoga is basically a spiritual science, which leads to liberation and was not developed for the purpose of treatment. But it has been observed through the researches that the regular practice of yoga not only promotes the healthy condition of both the body and the mind, but also helps to control diseases to a greater extent. Most of the modern day mental and physical health problems are because of faulty life-style and yoga is the best means to overcome these disorders. One can take the sound sleep and concentration on the desired goal effectively. He/she can control his/her worries, tensions, distress, conflicts, depression and emotional disturbances.

A large number of researches are available now to prove the therapeutic potential of Yoga in many disorders all over the world. A few important studies reported on the practice of Yoga are Singh, V. et al, (1987), Vinod. S.D. (1991), Murthy, P.G. et al. (1988). All studies revealed that Yoga practices are very helpful in reduction of stress, anxiety and tension.

An ordinary person many consider meditation as a worship or prayer. But it is not so. Meditation means awareness. Whatever you do with awareness is meditation. Meditation is not a technique but a way of life. Meditation means a cessation of the thought process. According to Pranav Pandey (2004) "Meditation is thoughtless condition of mind. Such as magnet attracts all the pieces of iron spreader over all directions. So the meditation link cosmic energy and subdue all the worldly carvings".

Meditation is the key for opening the doors of mysteries to your mind. Its Sanskrit derivation 'medha' mean wisdom. In yogic approach meditation is the group of Sanskrit words Dharma Dhyana and Samadhi.

Meditation is an intensely personal and spiritual experience which requires the control of the power of concentration and practices. In the context of Buddhism, it is a practice of stilling and purifying the mind in order to gain insight. The desired purpose of each meditation technique is to



channel our awareness into a more positive direction by totally transforming ones state of mind. The entire process of meditation usually entails the three stages-concentration (Dharna), meditation (Dhyana) and enlightenment of absorption (Samadhi).

In today's era modern psychologists have begun to discover various therapeutic benefits of meditation practices. The state of relaxation and the altered state of consciousness both induced by meditation are especially effective in psychotherapy.

Modern Psychological studies are evidence that meditation is the antidote on stress. According to **Traver (1989)** meditation plays a positive role in reducing stress level in academic, social and personal field. **Nelson and Nelson (1981)** reported that positive attitude towards life makes an individual to be stress free. Individual with mature personalities use constructive personal resources to reduce the stress. Constructive personal resources include – self esteem, perceived control over one's life, information processing skills etc. **Sussman (1989)** found that individuals who talked about the event- experience less stress as compared to those who thought about it.

Goleman & Schwartz (1976), Patel (1993), Vahia & Jeste (1973) reported that meditation plays effective role in stress management.

Meditation is the system of thought that incorporates exercises to attain bodily or mental control and well- being as well as enlightenment. – **John, W. Santrocle (1991)**. It works on our nervous system and gives a perfect immune system, which provide us low quantity peaceful and tension less mind. **Devitson, Dr. Richard (2003)**. **Awasthi S. and Dwivedi S.K. (2008)** got in our Study “meditation effects on pituitary glands and decrease the quantity of adrenaline and cortisol hormones and maintain the level of CRF, which makes stress less mind”. **Dwivedi S.K. (2007)** got that yog nidra decreases the level of stress and anxiety. **Bowen.S., Chawala.N (2006)** found in his study that meditation improves immune system, by

the help of perfect immune system, we can perform or endure the stress full conditions.

Role of Positive thinking in Stress management–

Positive thinking is mental attitude that admits into the mind through words and images that are conducive to growth, expansion and success. A positive mind anticipates happiness, Joy, health and a successful outcome of every situation and action, whatever the mind expects, it finds. The power of positive thinking can change and improve our life. Positive thinking is a habit that is right practice. By practicing positive thinking every day, we create a state of mind where we are constantly positive – it becomes a state of being positive. By doing this atleast we will find an amount of positive energy that will creates a positive situation for us every day.

One approach to positive thinking given by **Martin (1991)** is called the three C'S – commitment, control and challenge.

Commitment – Make a positive commitment to yourself, to learning, work, family, friends, and nature. Praise yourself and others. Always dream of success, be enthusiastic.

Control – Set goals and priorities for what you think and do. Develop a strategy for dealing with problems learn to relax. Be honest with yourself.

Challenge – Be courageous. Do your best and don't look back. Try new things. Consider several options. Meet new people. Keep track of your mental and physical health. Be optimistic.

Martin (1991) has shown that people with these characteristics are winners in good times and survivors in hard times. Commitment, control and challenges help to build self-esteem, reduce stress, live healthier and promote positive thinking.

The positive thinking can be developed by positive self talk, healthy attitudes, financially sound, hopefulness, new ideas, sense of responsibilities etc. In short, positive thinking helps in reducing stress which in turn leads to improved health. Apart from positive thinking there are many other ways and means by which



stress can be reduced to be minimum.

The Stress can be controlled by –

☛ Active coping (eg. 'I have been taking action to make the situation better).

☛ Planning (e.g. I have been trying to come up with a strategy what to do).

☛ Positive reframing (e.g. 'I have been looking for something good in what is happening).

☛ Using emotional support (e.g. I have been getting support – from others).

☛ Denial (e.g. 'I have been saying to myself it is not real).

☛ Self control (e.g. I tried to keep my feelings to myself).

There are number of coping strategies to cope up with the stress. In order to manage stress through positive thinking, the first step to realize that we are stressed. We should check symptoms of the stress. Pay attention to our thoughts and our actions to find out the reason for stress. Pay attention to our thoughts especially the repetitive once. These repetitive thoughts are the main reason for draining our energy and causing most of the unnecessary stress. Again use meditation to avoid these repetitive thoughts.

Conclusion and Suggestions -

The theoretical discussion makes it crystal clear that positive thinking and Yoga not only reduce stress but also helps in maintaining and promoting physical as well as mental health. These are the powerful gift that all we have, but a large number of people are not aware of it. When our state of mind is generally optimistic, we are able to handle everyday stress in a constructive way. Optimists enjoy better health, stronger relationships, are more productive, and experience less stress. This is because optimists tend to take more risks, and blame external circumstance if they fail, maintaining a “try again” mind set; this makes them more likely to succeed in the future, and less upset by failure in general. Pessimists, on the other hand, tend to blame themselves when things go wrong, becoming more reluctant to try again with each negative experience in life. When

we understand this, it becomes clearer how optimism and positive self-talk can impact our health levels.

References

1. Awasthi, S. and Dwivedi, S. (2008) The effect of Gayatri mantra on stress. J. of Humanistic Behaviour, Vol – 32, pg – 44, 46.
2. Davidson, Dr. Richard (2003) Boasts immune system J. of psychosomatic meditation. Vol – 6, p – 48.
3. Dohrenwood, B.S. (1974) stressful life events. Their Nature and effects. Wiley New York.
4. Dwivedi, S.K. (2007) The effect of Yognidra on Anxiety. Shodh – Dhara, Vol – 11, Pg. 83, 84.
5. Lazarus, R.S. and Folkman, S. (1966) Psychological stress and coping process, New York Academic press.
6. Mridula, M. and Sinha, R.K. (2001). Effect of Yogic practices on depression and Anxiety. J. of psychology and mental health. vol- 8, pg – 23 – 27.
7. Nelson and Nelson (1987) Personal and family stress management. J. of Home economics, vol. 73, pg – 34 – 36.
8. Pandey, P. (2004) Akhand Jyoti, published by Vedmata Gayatri Trust, Mathura, U.P. India P. 23 – 24 .
9. Pestonjee, D.M. (1992) Stress and coping. The Indian experience, Sage, New Delhi.
10. Rao, K. Ramakishan (2003) psychology in India Revisited. Sage publication, New Delhi. Vol. – 2, Pg – 44 – 60.
11. Selye, H. (1956) The Stress of Life. New York. Mc. Graw Hill.
12. Singh, A.K. (2004) Modern Abnormal psychology (ed – IV), published by M.L.B.D. Patna, Bihar. Pag – 250 – 253.
13. Sarason, I.G. & Siegel, J.M. (1978) Assessing the impact of life changes. Development of the life experience survey J. of consulting and clinical psychology, vol. 46, pg – 932 – 946.
14. Peale, N.V. (1996) The Power of Positive Thinking. (Books available online at Barnes & Noble. Com). Random House publication.
15. Vinod, S.D. (1991) Evaluation of the effect of Yoga on Anxiety in youth in relation to anxiety inducing areas of life. Yoga Mimansa, 30, pg – 25 – 30 .
16. Zimbardo, P.G. (1980) psychology and life (12th edition) Glenview, IL : Scott.



Received: 22 Jan., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

The Effect of Collaborative Learning on Academic Achievement of College Students



- Dr. Umendra Singh
Assistant Professor -
Department of Teacher
Education,
Dharm Samaj College, Aligarh-
202001 (Uttar Pradesh)

Raja Mahendra Pratap Singh
University, Aligarh (U.P.)

Email:
usds1979@gmail.com

Abstract

The present study was conducted to examine the effect of collaborative learning on academic achievement of college students. For this purpose, the researcher used pre-test post-test control group design. For sample, 54 male students enrolled in 11th grade in subject of biology of a government aided inter college of Aligarh city were chosen through simple random sampling technique. These students were divided in two groups which then divided in experimental and control group randomly. First of all, pre-test was conducted to both groups. Then experimental group was taught by collaborative learning model while control group was treated with conventional learning model for five months. In order to identify the difference in academic achievement scores of students, post-test was administered to both groups. The data was analyzed using independent sample t-test and paired sample t-test. The results showed that there was no significant difference between experimental and control group in pre-test while there was a significant difference between the two groups in post-test. To compare the effect of collaborative learning on academic achievement of students paired sample t-test's results showed that there was a significant difference between scores of experimental and control groups before and after treatment. It can be concluded after analyzing the data that collaborative learning had a positive effect on academic achievement of college students.

Key Words- Collaborative learning, Academic Achievement, College students.

Introduction-

Instruction in the classroom produces learning. Many elements, including the classroom setting, student motivation, pedagogical expertise, technology use in the classroom, instructional tactics, and teacher abilities, all have a significant impact on how well students learn. More student participation in activities leads to more effective learning, according to Sarwat and Hussain (2012). Students' involvement in the teaching-learning



process is therefore closely linked to their ability to learn. Good teachers have always chosen to implement learner centred educational practices. Instructors that fit this description create and provide learning activities that students actively participate in. Both group projects and individual work are used by teachers as instructional strategies in the classroom.

Effective learning, according to Hussain and Sarwat, is an interactive process that involves students in various activities to complete their academic assignments. The students execute tasks assigned to them cooperatively by working on them both alone and in small groups. Collaborative learning is this type of learning that occurs in small groups of learners by taking on tasks and supporting one another. A scenario known as "collaborative learning" occurs when two or more students attempt to study something collaboratively. During this process of learning, students make use of each other's abilities and resources. The underlying theory of this learning is that teachers can generate knowledge in a population of students who actively engage with one another by exchanging experiences and adopting asymmetrical roles. A project or task is assigned to each team in the collaborative learning approach, which is a kind of team-based instructional learning. Each member of the team completes a minor portion of the project on their own before combining all of their contributions to deliver the work as a completed assignment or project. The team as a whole and each member individually are being evaluated for this effort.

According to Johnson and Johnson (1998), which were quoted by Jain, R.; Rao, V. & Sunda, H. (2016), collaborative learning is predicated on the idea that knowledge is a social construct. Gokhale, A. A. (1995) was used by Laal, M. and Ghodsi, S. M. to support the idea of collaborative learning, which is the matching and grouping of students in order to achieve a learning goal, has been widely researched and advocated.

Collaborative learning is a type of

instruction where students of different ability levels cooperate in small groups to achieve a common objective. Both their own and each other's learning is the responsibility of the students. As a result, one learner's success encourages the success of others. Therefore, groups of learners searching for understanding, meaning, or answers, or creating an artefact or result of their learning, are typically used to show collaborative learning. Group projects, cooperative problem-solving exercises, group writing, fishbowl discussions, case studies, team-based learning, and several other activities are examples of collaborative learning activities.

Academic success is now regarded as a critical component of social and personal advancement. The academic success of students in schools and colleges is the central focus of the entire educational system. Learners' academic progress is influenced by a number of factors, including instructional tactics, achievement motivation, and cognitive styles. Interesting, relevant, and purposeful teaching-learning strategies should be used when instructing pupils in order to meet both short- and long-term learning objectives. Students who exchange their thoughts, experiences, and perspectives with classmates can learn more effectively (Jonassen & Kwon, 2001).

Collaborative learning has a favourable impact on learning outcomes, social skill development, and self-esteem in face-to-face classroom settings (Johnson & Johnson, 1996). It is highly advised that students work in a collaborative, rich setting to enhance their metacognition, social skills, and cognitive performance (Paris & Winograd, 1990). Van Boxtel, Vander Lindon, and Kanselar (2000) assert that cooperative learning exercises support students in elaborating and rearranging their knowledge by assisting them in discovering reasons for what they understand. Chandra (2015) discovered that learning strategies had an impact on English proficiency. The English performance scores of undergraduate students who use



collaborative learning versus solo learning approaches differ significantly.

According to Revathi (2016), students in three categories students with special needs, students with cognitive impairments, and peers who are not disabled performed better academically when they used collaborative learning strategies. According to Isik & Tarim (2009), the CLMI approach significantly affects academic achievement more than the traditional method does. According to a number of other research, student collaboration significantly affects their academic performance (Borokhovski, Bernard, Tamim, Schmid & Sokolovskaya, 2016; Fjemestad, 2004; Schmid et al, 2014).

Significance of the Study-

Successful learning, in the opinion of Pange & Pange (2011), should provide a profound comprehension as opposed to memorization and imitation. Because collaborative learning helps students learn more effectively and efficiently, it may help to create and improve instruction (Ruengtam, 2012). Studying the impact of collaborative learning on academic attainment across several topics at the high school and college levels has become essential. Students' academic performance will increase if collaborative learning is introduced for a variety of disciplines. In addition, this tactic will help to make learning more relevant and engaging for students who may have previously found it dull. There is a dearth of empirical evidence, particularly at the college level, to support collaborative learning at different levels. So, to convince instructors to use collaborative learning in their teaching in different subjects, it is very important to collect strong empirical evidences in favor of this instructional strategy at college level.

Objective of the Study-

The present study aimed to determine the effect of collaborative learning on academic achievement of college students.

Hypothesis of the Study-

There is no significant mean score

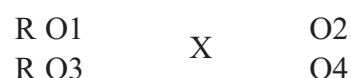
difference between the academic achievement scores of experimental and control groups after intervention.

De-limitation of the Study-

- Only 54 students taking the biology course were included in the study's sample.
- The instructional module included ten equal-difficulty units in biology for the 11th standard.
- In the experimental group, the instructional module's activities were based on the collaborative learning approach.

Material, Method and Procedure-

The present study was dealt significantly by using experimental research method. The pre-test post-test control group design was used in this experimental study. The systematic description of this research design is described in following figure.



This research design was selected on the basis of nature of the problem and the hypothesis of the study. This design consisted of two groups- experimental group (27 students) and control group (27 students). The experimental group was treated with collaborative learning model while the control group was taught by conventional learning model.

Sample-

The sample of this study consisted of all 11th grade students enrolled in biology section of a government aided inter college (U.P. Board) of Aligarh city. There were five sections (1 art, 1 commerce, 2 mathematics and 1 biology) in that college. First of all, one section was selected out of five by simple random sampling technique. In this section, there were 54 students. All students were male. So, there was no diversification in terms of gender. Age range of the sample was 15 to 17 years old. These 54 students were divided in two groups on the basis of their pre-test scores. After that these two groups were randomly assigned in



experimental and control group.

- ☛ Total Students (54)
 - Experimental Group (27)
 - Control Group (27)

Instrument-

A standardised test called the "Achievement Test in Biology," created by Dr S. C. Gakhar and Himadri, was used to assess the sample's academic achievement. There were 53 multiple-choice questions on this exam. The test used for both the pre-test and the post-test was the same.

Procedure-

A pre-test was conducted by the researcher to deal with the pre-existing differences between the experimental and control group. After this pre-test, the treatment was given to experimental group. To control the effect of teaching quality, both the groups were treated by the same teacher who was the subject expert. The teacher taught both groups the same content from the syllabus which was prescribed in 11th grade's book of biology subject. The experimental group was taught by collaborative learning model while control group was treated with conventional learning model over a period of 20 weeks. After this duration of implementation, post-test was applied to both the groups.

Data Analysis-

In this present study, independent sample t-test was used to examine whether there is a significant difference between pre-test and post-test scores of both groups. To determine the effect

of collaborative learning on academic achievement of students, paired sample t-test was used.

Verification of Hypothesis-

There is no significant effect of collaborative learning on academic achievement of college students.

1. Pre-test results were analysed to see if there is a statistically significant difference between the mean scores of students in the experimental and control groups. **(See Table-1)**

According to table-1, the t-value is 1.885 and is not statistically significant when compared to df 52 at the 0.05 level. It shows there is no discernible mean difference between the experimental and control groups. It indicates that before intervention, academic achievement in the subject of biology was similar in both the experimental and control groups of students.

1. Post-test scores of students in the experimental and control groups were compared in order to see if there was a statistically significant difference between them. **(See Table-2).**

In accordance with table-2, the t-value is 10.569, which is significant at the 0.05 level with df 52. According to this, there is a sizable mean difference between the experimental and control groups. It indicates that following intervention, students in the experimental and control groups had differing academic achievement levels in biology.

1. Pre-test and post-test data were compared in order to ascertain whether there is a statistically significant difference between pre-test and post-test

Table 1

Independent Sample T-test Results of Experimental and Control Groups Pre-test Mean Scores

Group	N	Mean	SD	df	t	p
Experimental	27	22.04	3.39	52	1.885	2.000 at 0.05 level
Control	27	20.40	3.02			

**Table-2****Independent Sample T-test Results of Experimental and Control groups' Post-test Mean Scores**

Group	N	Mean	SD	df	t	p
Experimental	27	37.50	5.55	52	10.569	2.000 at 0.05 level
Control	27	24.50	3.18			

Table-3**Paired Sample T-test Results of Experimental group's Pre-test and Post-test Mean Scores**

Test	N	Mean	SD	df	t	p
Pre-test	27	22.04	3.39	26	15.820	2.779 at 0.01 level
Post-test	27	37.50	5.55			

Table-4**Paired Sample T-test Results of Control group's Pre-test & Post-test Mean Scores**

Test	N	Mean	SD	df	t	p
Pre-test	27	20.40	3.02	26	24.880	2.779 at 0.01 level
Post-test	27	24.50	3.18			

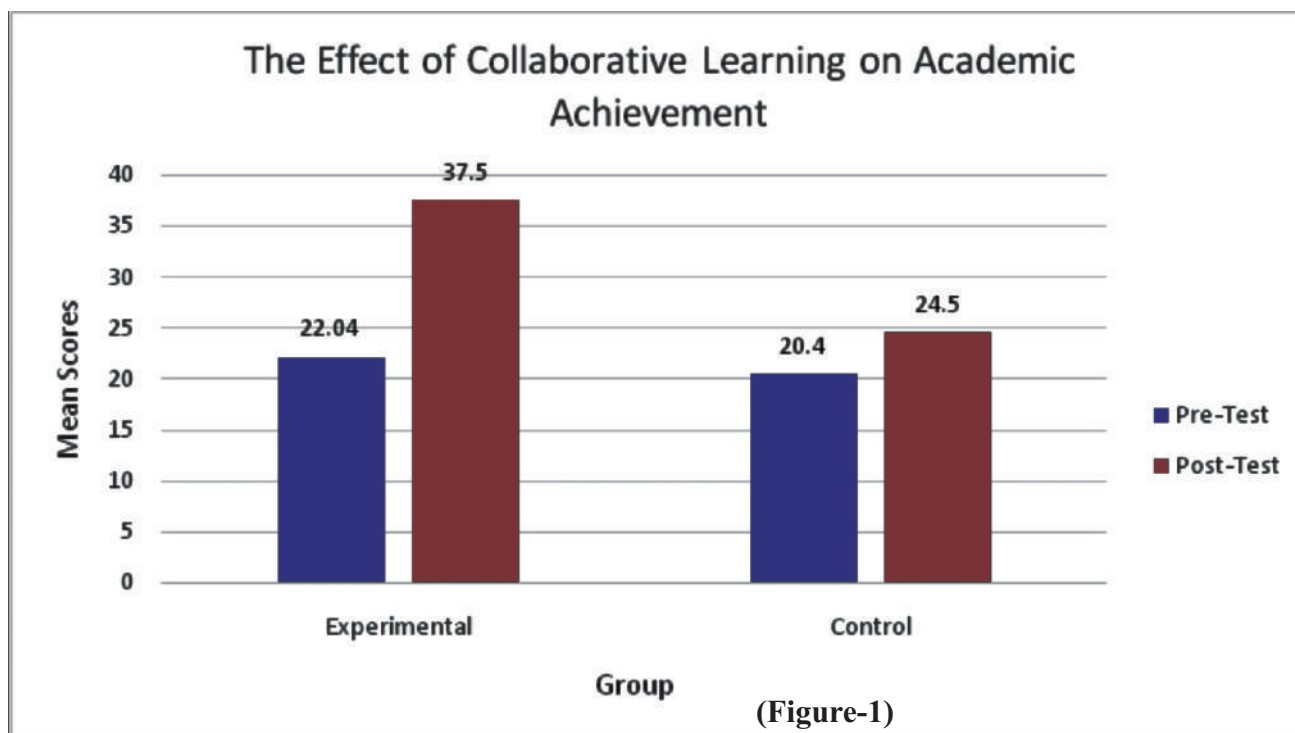
scores in the experimental group. (See Table-3)

As table-3 showed that the calculated t-value (15.820) is greater than the critical value (2.779) at the 0.01 significance level. This indicates that there is a statistically significant difference between the means of the two groups. The p-value associated with the t-value is lower than 0.01 (since the significance level is set at 0.01). This means that there is a low probability of observing such a large difference in means between the two groups due to random chance alone. Therefore, based on the pre-test and post-test scores, we can conclude that the collaborative

learning process (experimental group) has resulted in a significant improvement. The difference in means between the two groups (as indicated by the t-value) suggests that collaborative learning has had a positive impact on the students' academic achievement.

1. Pre-test and post-test scores in the control group were compared to see if there was a statistically significant difference between them. (See Table-4)

As demonstrated by table-4, the computed t-value (24.880) is higher than the crucial value (2.779) at the significance level of 0.01. As a result, the



means of the two groups are statistically different from one another. The significance threshold is set at 0.01, therefore the p-value corresponding to the t-value is less than 0.01 (because it is). The likelihood of seeing such a significant variation in averages between the two groups only by chance is therefore quite low. Therefore, based on the pre-test and post-test results, we may infer that the traditional learning approach (control group) has likewise produced a notable improvement in terms of academic achievement. (See Figure - 1)

Discussion and Conclusion-

The purpose of this study was to ascertain how college students' academic progress is impacted by collaborative learning. The students were divided into two groups at random the experimental group and the control group in order to obtain the sound results. A pre-test was administered to determine whether the mean scores of the two groups differed significantly. Following that, the experimental group received therapy (the collaborative learning model), while the control group received treatment (the traditional learning model) for a period of five months. A post-test was then given to determine

how the experimental and control groups' interventions differed. The findings demonstrate that college students' academic achievement is positively and significantly impacted by collaborative learning. This conclusion is consistent with the findings of a few research that have been done in this subject. Isik & Tarim; 2009, R. Kumar; 2017, Su & Liang; 2017, Chandra; 2015, Revathi; 2016, Shivanjani & Kumar; 2018, and so on. Collaborative learning offers numerous advantages as it helps students develop their social skills and academic confidence. With this method, students attempt to accomplish the same objectives while working in small groups. These constituents aid students in cultivating their individuality. Sultan and colleagues (2020) discovered that cooperative learning is remarkably more effective in building students' social skills and academic confidence.

The current study examined the impact of collaborative learning on 11th grade students' academic achievement. In future studies, this study could be helpful in examining the impact of collaborative learning on students' academic progress across grade levels. The impact of



collaborative learning on academic attainment in the field of biology has been demonstrated by the study's findings. Thus, more research on several other topics may also be done. To improve the generalizability of the current study's findings, additional research may be done with a larger sample size.

References

1. Borokhovski, E.; Bernard, R. M.; Tamim, R. M.; Schmid, R. F. & Sokolovskaya, A. (2016). Technology Supported Student Interaction in Post-secondary Education : A Meta-analysis of Designed versus Contextual Treatments. *Computer & Education*. 96, pp 15-28.
2. Chandra, R. (2015). Collaborative Learning for Educational Achievement. *International Journal of Research & Method in Education*. Vol-5, Issue- 2.
3. Fjemestad, J. (2004). An analysis of Communication mode in Group Support System Research. *Decision Support System*, 37(2) pp 239-263.
4. Isik, D. & Tarim, K. (2009). The Effects of the Cooperative Learning Method supported by Multiple Intelligence Theory on Turkish Elementary Students' Mathematics Achievement. *Asia Pacific Education Review*. 10(4) pp 465-474.
5. Jain, R.; Rao, V. & Sunda, H. (2016). Multiple Intelligence based Cooperative and Collaborative Learning. *International Journal of Applied Engineering Research* Vol-11(7) pp 5032-5037.
6. Johnson, D. W. & Johnson, R. T. (1996). Cooperative Learning and Traditional American Values: An Appreciation. *NASSP Bulletin*, 80(579), pp 63-66 .
7. Jonassen, D. H. & Kwon, H. I. (2001). Communication Patterns in Computer-Mediated and Face to Face Group Problem Solving. *Educational Technology Research and Development*, 49, pp 35-51.
8. Kumar, R. (2017). The Effect of Collaborative Learning on Enhancing Student Achievement: A meta-Analysis. A Thesis, Concordia University, Montreal, Canada.
9. Laal, M. & Ghodsi, S. M. (2012). Benefits Of Collaborative Learning. *Procedia- Social and Behavioral Sciences* 31, Elsevier. pp 486-490.
10. Paris, S. G. & Winograd, P. (1990). How Meta-Cognition can promote Academic Learning and Instruction? In B. F. Jones & L. Idol (Eds), *Dimensions of thinking and cognitive instruction* pp 15-51.



विशेष

प्रकाशन शोधकर्ताओं के लिए शोध प्रक्रिया का अन्तिम और अत्यन्त महत्वपूर्ण चरण होता है। शोध समाज की एक मूल्यवान उपलब्धि है, जिसके लिए इसे समाज के बीच आना ही चाहिए ताकि समस्त मानवता इसका लाभ उठा सके। वर्तमान में बेलगाम होती महंगाई, कम्प्यूटर टाइपिंग, कागज, मुद्रण सामग्री एवं प्रिंटिंग की दरों में उत्तरोत्तर बढ़ोत्तरी शोधार्थियों के द्वारा प्रकाशित होने वाले शोध-पत्रों के अवसरों को सीमित एवं संकुचित करते हैं।

संगोष्ठियों में शोध प्रपत्र का वाचन शोधार्थियों एवं शोधविदों के लिए एक महत्वपूर्ण अवसर होता है। अपने गुणवत्तापरक शोध कार्य को इन संगोष्ठियों के माध्यम से जनमत के बीच लाने का माध्यम बनता है। ऐसे अवसरों का लाभ उठाना ही हम सभी के लिए हितकर है, हम सभी आये और समाज में आगे बढ़कर अधिक से अधिक सहयोग देकर इसे सफल बनाने के कार्य में हाथ बंटायें।

- प्रबन्धक सम्पादक



Received: 26 Jan., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

A Major challenge to National Security : Terrorism



- Dr. Rama Bhatia
Associate Professor-
Department of Defense and
Strategic Studies,
D.A.V. College, Kanpur-208001
(U.P.)

E-mail:
dr.ramabhatia48@gmail.com

There are two main components of security of any nation - external and internal. It is not possible to prioritize one over the other which means that both the components are equally important. India is a unique and vast country in the world where people of different religions and castes live. Today, the country is facing a grievous problem in the form of terrorism. How terrorism in Kashmir wants to break the unity of India is the most important question of present times. How to end terrorism in Kashmir is a major challenge for the nation as it has deeply rooted in the minds of people living in Kashmir. Terrorism has assumed a monstrous form to engulf not only politics but also the economic and social aspects.

India's internal security is a very sensitive, important and challenging issue, which is extremely necessary to ensure the defense and security of the country. That is why it has now become the responsibility of common man to know and understand the challenges of internal security. The general and simple meaning of internal security is the security within the border area of a country. Due to the changing nature of war, internal security is being challenged by criminal misdeeds like proxy Jihadist incidents, targeted violence, riots, etc. Kautilya has described internal security in two forms, the first is creating internal crisis by internal people and the second involves efforts to create internal disaster with the help and support of outsiders. Both these forms of internal security are quite evident in the form of terrorism Kashmir faces. This external sponsorship blurs the lines between internal and external security, draining significant military and financial resources.

The reality is that for the internal security of India, many poisonous snakes are standing with their hoods raised and are ready to bite even if the slightest mistake is made. The Jihadi terrorist incident in Pahalgam also gave birth to a four day but unique war in the world in which Pakistan was forced to surrender in just four days. Even the terrorist attack in the Taj Hotel, Mumbai continues to haunt the people till date.

Today, a variety of challenges stand before us which include Jihadi terrorism, separatism, extremism, naxalism, casteism, communalism, organized crime, regionalism, linguistic



discrimination and racialism along with fear, hunger and corruption, cyber-attacks, data theft, hacking, smuggling, economic crimes, border infiltration, drug and human trafficking, etc. are a big crisis for the country. India has a large variety of these incidents such as the Pahalgam Attack, the popular Khalistan Movement in Punjab, the ethno-nationalist insurgencies in the northeastern states, the tensions between Hindi and Marathi speakers in Maharashtra etc. to showcase as an example.

The ramifications of these unpleasant events are beyond measure. Terrorism inflicts a tragic toll culminating into the loss of innumerable innocent lives and engenders mental and psychological trauma in the minds of the people living in the society. Economically, it deters foreign investment as nations usually despise political instability. Moreover, it disrupts vital trade and commerce, and diverts substantial government funds towards security and defense, away from essential public services and infrastructure projects. Politically, it is a direct attack on the fundamental rights of citizens especially their right of life and liberty mentioned in Articles 21 of the Indian Constitution. However, the toughest nut to crack is the social fear and mistrust among different communities which threatens the pluralistic character of the country.

To deal with this, security forces, police forces, intelligence agencies, justice and law and order along with ordinary citizens will have to play an important role. It is also necessary to know that terrorism in India not only affects the country's economic condition and political system, but it also has an indirect impact on the country's national unity and integrity, sense of brotherhood, belongingness and self-defense and self-confidence. There are many important aspects of India's internal security which include protecting national sovereignty, maintaining territorial integrity, accepting the sovereign power of democracy making national progress at the global level, making the internal environment peaceful, harmonious and progressive and creating an

environment for the citizens of the country which is just, rational and prosperous, the rules laid down by the authority should be followed and the livelihood and life of its citizens should be protected from dangers of all kinds.

The Pahalgam attack was not only an act of Jihadi terrorism but it is also a big warning and a serious challenge to India's internal security system. Although the police administration has a special role in dealing with internal security challenges, the police administration works to maintain a just system in the internal security of the country, curb crimes and investigate them, as well as fulfilling the moral responsibility of protecting its people. The police administration cooperates with administrative officials, local residents and other communities to maintain tight security and curb law violations. The primary purpose of this is to secure and protect the rule of law, which highlights the Right to Equality i.e. everyone is subject to the same law and no one is above the law. The police administration is also responsible for maintaining public order and security. Police also identifies, mediates and combats terrorism, separatism, extremism, naxalism, gang and community violence and establishes peace, security and cooperation. The slogan of the police is service, security and cooperation. It is well known who is served, who is provided security and who is provided cooperation and sympathy. Although the police administration has its own problems, it is necessary to pay attention to them so that it can also fulfill its responsibilities in the right manner. Attention should also be paid to development and proper arrangement of the police on the basis of balance between the people and the police so that they are not exploited themselves nor are they able to exploit the public.

Another cause of terrorism are the secret groups or organizations or sleeper cells in the country who remain inactive for a long time to achieve their goals, and then suddenly become active and attack on receiving information in the form of orders. To prevent such attacks, the role of



security forces and police forces as well as common citizens in internal security is imperative because through their active role, they cannot only strengthen the internal security system but can also prevent major events by gathering prior information. For this purpose, the country even has intelligence agencies like RAW (Research and Analysis Wing), IB (Intelligence Bureau), NIA (National Investigation Agency) which track the activities of such sleeper cells. Therefore, if ordinary citizens, along with these agencies, also know, understand and adopt their responsibilities then disaster can be dealt easily and internal security can be strengthened. It is also very significant to understand the impact of these responsibilities, to increase social harmony and to end communal tension with immediate effect. Even an ordinary person can bring about extensive change in the country and society by establishing moral values and can awaken the sense of responsibility. For this the following points must be paid attention to-

- ☛ Follow safety instructions in public places and be prepared for emergency situations to ensure safety of self and society.

- ☛ Understand issues like cybercrime, terrorism, human trafficking, and misinformation.

- ☛ Report suspicious activities to police or security forces as soon as possible and also make people aware of security so that the enemy's plan can be failed as soon as possible and security can be ensured through vigilance.

- ☛ In case of any suspicious security situation, you should immediately perform your duties and become a barrier and informer by using helplines, local police, or cybercrime portals to report anomalies. Take initiatives for group based security. Create strong voluntary organizations on the basis of education, awareness, cooperation and empathy.

- ☛ Avoid spreading unverified news or any other false information.

- ☛ Avoid language-based, religious, or

regional discrimination that can fuel internal unrest.

- ☛ Cooperate with the organization in completing rescue and relief operations immediately by awakening the sense of responsibility through quick collective safety and response.

Apart from this, even the Indian Government has responded to this hazardous issue with a multi-faceted strategy. It blends diplomatic and developmental endeavors with strong security measures. Laws like the Unlawful Activities (Prevention) Act (UAPA) have reinforced the legal system and many other initiatives have been taken to methodically bring down terrorist networks. In addition to this, counter-insurgency operations are perpetually being carried out by military and paramilitary forces to strengthen internal security of the citizens. However, addressing the underlying causes of extremism is becoming more and more important as it is realized that a security-centric approach alone is insufficient. This includes targeted developmental projects aimed at alleviating poverty as well as engaging in diplomatic efforts to build international consensus against state-sponsored terrorism.

In conclusion, terrorism continues to be a formidable challenge to India's internal security, but the nation has consistently worked to counter it with a comprehensive and resilient approach. The versatile nature of the threat—from externally supported groups to internal extremist movements demands a firm and incorruptible strategy.

Reference

1. "Rashtriya Raksha Aur Suraksha" - Dr. Lallanji Singh, Page No,-122.
2. "Aantarik Suraksha Ki Chunautiyan" - Dr. S. K. Mishra, Hindi Vivek, June, 2025.





Received: 02 Feb., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

Agriculture and Rural Livelihood in Chandauli District : Demographic Implications



- Sandeep Kumar Singh
Assistant Professor -
Department of Geography,
Sakaldiha (P. G.) College,
Sakaldiha, Chandauli-232109
(U.P.)

E-mail:
vishnudefence@gmail.com

- Prof. Pankaj Kumar Singh
Professor -
Department of Geography,
Uday Pratap College, Varanasi -
221002 (U.P.)

E-mail:
pankajkrsingh2@gmail.com

Introduction -

Agriculture has historically been the backbone of India's economy, employing nearly half of the workforce and contributing significantly to rural livelihood and food security (Sharma, 2012). Despite the rapid growth of the service and industrial sectors in recent decades, agriculture continues to sustain the rural majority, shaping both socio-economic opportunities and cultural identity (Rao, 2005).

In this context, the Chandauli district of Uttar Pradesh occupies a unique position. Popularly known as the "Rice Bowl of Eastern Uttar Pradesh" due to its extensive paddy cultivation, Chandauli's agrarian dominance defines its economy as well as the everyday life of its population (Census of India, 2011). Agriculture here is not only a source of income but also a way of life, closely linked with demographic patterns such as population growth, rural density, and workforce participation.

However, growing demographic pressure in rural areas has begun to alter the dynamics of agrarian livelihoods. Rapid population growth increases pressure on landholdings, while high rural density intensifies dependence on agriculture, often leading to fragmentation of farms and disguised unemployment (Bhalla & Singh, 2001). The limited capacity of agriculture to absorb the rising labour force creates livelihood vulnerabilities, compelling rural households to diversify income sources through migration, non-farm employment, or supplementary economic activities (Sharma, 2012).

The present study, therefore, attempts to analyse the relationship between demographic change and agricultural livelihood in Chandauli district. The objectives are threefold-

1. To examine the impact of population pressure on agricultural practices and land-use patterns.
2. To understand the structure of rural livelihood, particularly its dependence on agriculture and allied sectors.
3. To explore the demographic implications of agricultural dependence, including rural work participation, migration trends, and livelihood diversification.

The analysis is based on both primary and secondary data sources. Major datasets include the Population Census of India



(1991, 2001, 2011), the District Census Handbook for Chandauli, Agricultural Census (2010-11), and National Sample Survey Office (NSSO) reports. In addition, relevant scholarly works have been consulted to build a conceptual foundation for linking agriculture with demographic dynamics (Rao, 2005; Bhalla & Singh, 2001; Sharma, 2012).

Geographical Profile of the Study Area-

Chandauli district is situated in the eastern part of Uttar Pradesh, bordering Bihar on the east. Geographically, it lies between 24°56' N to 25°35' N latitudes and 83°03' E to 83°27' E longitudes, covering a total geographical area of about 2,484 sq. km (District Census Handbook, Chandauli, 2011). The district forms part of the eastern Gangetic plain, which is among the most fertile regions of India due to the presence of alluvial soil deposited by the Ganga and its tributaries (Singh, 2009).

The agro-climatic conditions of Chandauli are highly favourable for agricultural production. The district experiences a sub-tropical monsoon climate, with hot summers, cool winters, and annual rainfall ranging from 1,000 to 1,200 mm, most of which is received during the southwest monsoon season (June–September) (Sharma, 2012). The fertile alluvial soil, coupled with assured monsoon rainfall, supports intensive crop cultivation and makes agriculture the dominant economic activity.

Agricultural practices in Chandauli are diverse but largely centered on food grains. Paddy (rice) is the principal crop, giving the district the epithet "Rice Bowl of Eastern Uttar Pradesh." Besides rice, other major crops include wheat, pulses, sugarcane, oilseeds, and a variety of vegetables that contribute both to subsistence and commercial farming.³

(Government of Uttar Pradesh, 2015). This diversified cropping pattern is also supported by the spread of irrigation through canals and tubewells, though dependence on monsoon rainfall remains significant (Bhalla & Singh, 2001).

Demographically, Chandauli has a

predominantly rural character, with more than 80 percent of its population residing in villages (Census of India, 2011). The rural concentration not only determines the structure of the local economy but also reinforces the dependence of households on agriculture and allied activities such as dairy farming, poultry, and wage labour in agricultural fields (Rao, 2005). Consequently, the district's socio-economic landscape is deeply tied to its agricultural base.

Thus, the geographical profile of Chandauli underlines the symbiotic relationship between natural endowments, demographic structure, and rural livelihood. The fertile land, monsoon-dependent agriculture, and high rural population density collectively explain why agriculture remains the backbone of Chandauli's economy and an essential determinant of socio-economic development in the district.

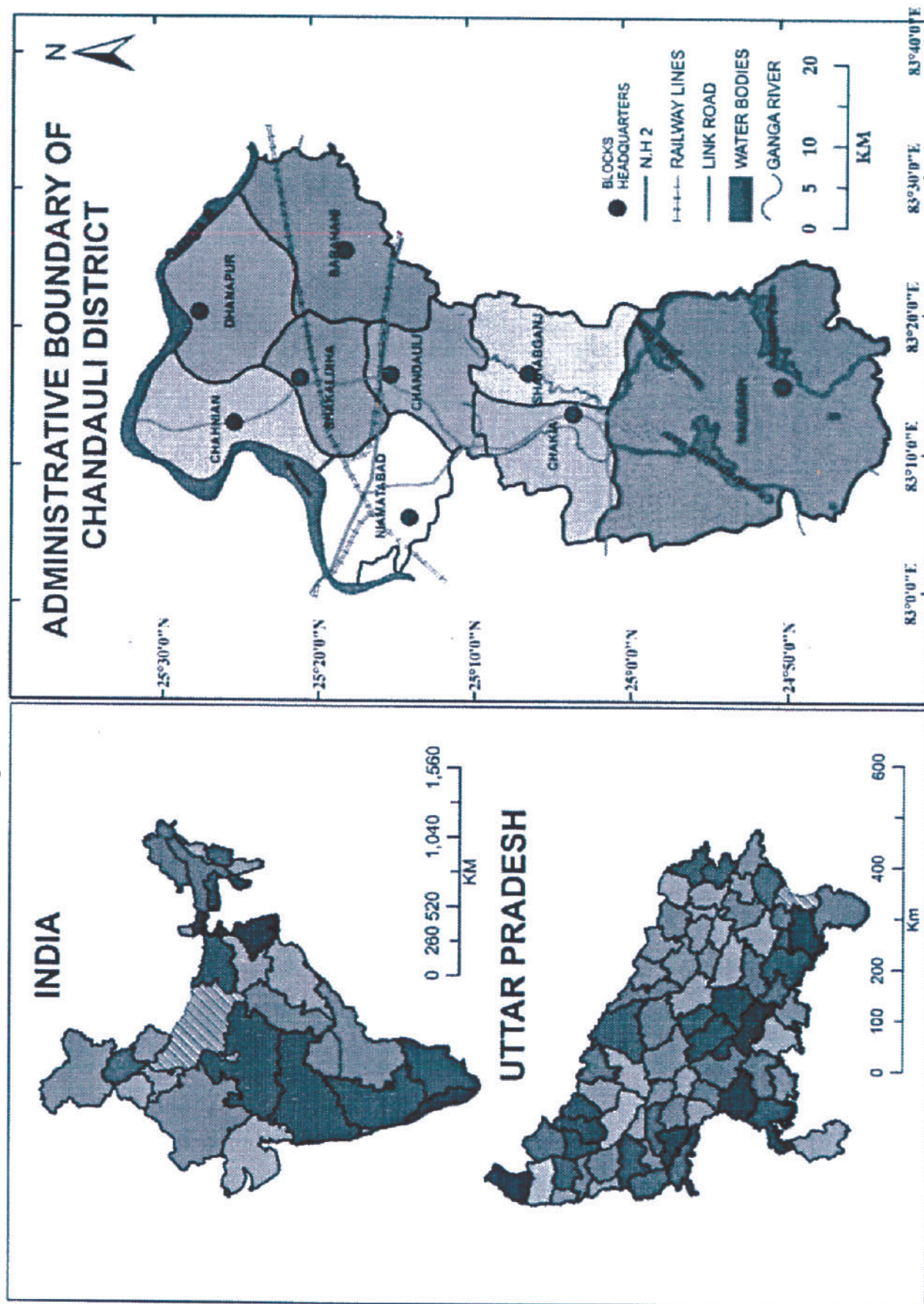
See Fig. 1: Location Map of the Study Area Database and Methodology

Database and Methodology -

This study relies entirely on secondary data sources. Demographic indicators such as population growth, density, literacy, and occupational structure have been drawn from the Population Census of India (1991, 2001, 2011) (Registrar General of India, 2011). Information related to agriculture, including cropping pattern, landholding size, and operational holdings, has been obtained from the Agricultural Census (2010–11), while irrigation, fertilizer use, and other district-level statistics have been consulted from the District Statistical Handbook, Government of Uttar Pradesh (2015).

The analysis adopts a descriptive and comparative approach. Ratio and percentage methods have been applied to highlight trends in population growth, work participation, and changes in agricultural characteristics over the two decades under study (Bhalla & Singh, 2001). Instead of primary surveys, the study synthesizes secondary datasets with insights from existing scholarly works to establish the linkage between

Fig. 1: Location Map of the Study Area





demographic change and agricultural livelihoods. This methodology provides a coherent understanding of how demographic pressure, landholding fragmentation, and population growth interact with rural livelihood patterns in Chandauli, while also reflecting the broader agrarian dynamics of eastern Uttar Pradesh.

Demographic Characteristics of Chandauli-

The demographic profile of Chandauli district between 1991 and 2011 reflects both the broader regional trends of eastern Uttar Pradesh and some localized variations shaped by migration, agricultural dependence, and literacy growth.

Population Growth Trends

(1991–2011) The population of Chandauli grew substantially during the two census decades under study. In 1991 (when the region was still part of Varanasi district), the area had around **1.5 million people**. This figure rose to **1.64 million in 2001** and further to **1.95 million by 2011** (Census of India, 2001; 2011). The growth rate during 1991–2001 was particularly high at **28.9%**, while the following decade (2001–2011) witnessed a slowdown to **18.8%**, reflecting declining fertility levels and

increasing out-migration. This trend corresponds with the demographic transition observed across the middle Gangetic plain (Bhalla & Singh, 2001). To illustrate these changes, Table 1 presents the comparative demographic indicators of Chandauli for 2001 and 2011.

The data clearly demonstrate not only a slowing population growth but also significant progress in literacy (from 59.7% to 71.5%) and a decline in the share of child population, signalling a demographic transition. However, the slight fall in the sex ratio (922 → 918) and child sex ratio (937 → 911) highlight persisting gender imbalances.

See Table-1 & 2 : Key Demographic Indicators of Chandauli District (2001–2011) Database and Methodology -

This study relies entirely on secondary data sources. Demographic indicators such as population growth, density, literacy, and occupational structure have been drawn from the Population Census of India (1991, 2001, 2011) (Registrar General of India, 2011). Information related to agriculture, including cropping pattern,

Table 1: Key Demographic Indicators of Chandauli District (2001–2011)

Description	2001	2011
Population (in lakhs)	16.43	19.53
Actual Population	1,643,251	1,952,756
Male Population	855,123	1,017,905
Female Population	788,128	934,851
Population Growth (%)	28.90	18.83
Area (Sq. Km)	2,541	2,541
Density (per km ²)	647	768
Proportion to UP Population (%)	0.99	0.98
Sex Ratio (per 1000)	922	918
Child Sex Ratio (0–6 Age)	937	911
Average Literacy (%)	59.72	71.48
Male Literacy (%)	74.04	81.72
Female Literacy (%)	44.13	60.35
Total Child Population (0–6 Age)	328,365	309,597
Child Proportion (0–6 Age %)	19.98	15.85

Source: Census of India, 2001; Census of India, 2011



landholding size, and operational holdings, has been obtained from the Agricultural Census (2010–11), while irrigation, fertilizer use, and other district-level statistics have been consulted from the District Statistical Handbook, Government of Uttar Pradesh (2015).

The analysis adopts a descriptive and comparative approach. Ratio and percentage methods have been applied to highlight trends in population growth, work participation, and changes in agricultural characteristics over the two decades under study (Bhalla & Singh, 2001). Instead of primary surveys, the study synthesizes secondary datasets with insights from existing scholarly works to establish the linkage between demographic change and agricultural livelihoods. This methodology provides a coherent understanding of how demographic pressure, landholding fragmentation, and population growth interact with rural livelihood patterns in Chandauli, while also reflecting the broader agrarian dynamics of eastern Uttar Pradesh.

Demographic Characteristics of Chandauli-

The demographic profile of Chandauli district between 1991 and 2011 reflects both the

broader regional trends of eastern Uttar Pradesh and some localized variations shaped by migration, agricultural dependence, and literacy growth.

Population Growth Trends (1991–2011) - The population of Chandauli grew substantially during the two census decades under study. In 1991 (when the region was still part of Varanasi district), the area had around **1.5 million people**. This figure rose to **1.64 million in 2001** and further to **1.95 million by 2011** (Census of India, 2001; 2011). The growth rate during 1991–2001 was particularly high at **28.9%**, while the following decade (2001–2011) witnessed a slowdown to **18.8%**, reflecting declining fertility levels and increasing out-migration. This trend corresponds with the demographic transition observed across the middle Gangetic plain (Bhalla & Singh, 2001). To illustrate these changes, Table 1 presents the comparative demographic indicators of Chandauli for 2001 and 2011.

The data clearly demonstrate not only a slowing population growth but also significant progress in literacy (from 59.7% to 71.5%) and a decline in the share of child population, signalling

Table 2: Chandauli Population 2011-2001

Description	2011	2001
Population	19.53 Lakhs	16.43 Lakhs
Actual Population	1,952,756	1,643,251
Male	1,017,905	855,123
Female	934,851	788,128
Population Growth	18.83%	28.90%
Area Sq. Km	2,541	2,541
Density/km ²	768	647
Proportion to Uttar Pradesh Population	0.98%	0.99%
Sex Ratio (Per 1000)	918	922
Child Sex Ratio (0-6 Age)	911	937
Average Literacy	71.48	59.72
Male Literacy	81.72	74.04
Female Literacy	60.35	44.13
Total Child Population (0-6 Age)	309,597	328,365
Child Proportion (0-6 Age)	15.85%	19.98%

Source: Census of India, 2001 & 2011



a demographic transition. However, the slight fall in the sex ratio (922 → 918) and child sex ratio (937 → 911) highlight persisting gender imbalances.

Rural-Urban Distribution-

Chandauli remains predominantly rural, with more than 80% of the population residing in villages in 2011. The urban population is concentrated in towns like Mughalsarai (now Pandit DeenDayal Upadhyay Nagar) and Chandauli headquarters, which function as transport and service hubs. The low level of urbanization highlights the dependence of the majority of households on agriculture and related activities, though emerging non-farm employment in transport and trade has started to absorb a fraction of the labour force (Sharma, 2012).

☛ Literacy and Its Implications -

Literacy improved considerably during the period under study. The literacy rate rose from about 55% in 1991 to nearly 72% in 2011, with a noticeable reduction in the gender gap (Census of India, 2011). Rising literacy, especially among younger cohorts, has important implications for livelihood diversification. Educated youth increasingly seek employment in non-farm sectors, including transport, retail, and service activities in nearby urban centers such as Varanasi, thus shaping the district's migration and employment patterns (Bhende & Kanitkar, 2010).

☛ **Sex Ratio and Migration-** The sex ratio in Chandauli improved only marginally, from 902 females per 1,000 males in 1991 to about 913 in 2011. However, male-dominated out-migration to metropolitan cities for employment has altered local demographic balances. Seasonal and long-term migration of young males for work in construction, trade, and services reduces male population share in rural areas, contributing to a relatively better sex ratio than neighboring districts with less migration (Premi, 2004).

☛ **Age Composition and Working Population-** The age structure indicates a relatively young population, with more than 30% below 15 years in 2001, gradually declining by 2011 as fertility fell. The proportion of the

working-age group (15–59 years) increased, providing a potential demographic dividend. However, limited local industrialization and dependence on small-scale agriculture restricts full utilization of this workforce, pushing many towards migration-based livelihoods (Chandna, 2016).

Overall, Chandauli's demographic characteristics between 1991 and 2011 point towards slowing population growth, gradual literacy gains, persistent rural predominance, and migration-driven socio-economic change. These features are central in understanding how demographic trends shape rural livelihoods in the district.

Agriculture and Rural Livelihood Patterns-

Agriculture forms the backbone of Chandauli district's economy and rural livelihood system. Often referred to as the "rice bowl of eastern Uttar Pradesh", the district's agrarian profile reflects both opportunities provided by fertile alluvial soils and challenges arising from demographic pressures and land fragmentation. An examination of landholding structures, cropping patterns, irrigation facilities, employment profiles, and livelihood diversification highlights the complex relationship between population dynamics and agriculture in the region.

☛ **Landholding Patterns -** One of the most striking features of Chandauli's agrarian economy is the predominance of small and marginal landholdings. According to the Agricultural Census (2010–11), more than 75% of farmers in the district fall under the marginal category (holding less than one hectare). Land fragmentation, caused by population growth, inheritance practices, and increasing pressure on agricultural land, has significantly reduced operational farm sizes. This has direct implications for productivity, as smaller holdings limit economies of scale, mechanization, and investment in modern inputs (Bhalla & Singh, 2001).

☛ **Cropping Pattern-** The district is



known for its rice cultivation, especially the high-quality varieties that have given Chandauli the title of "□□□□□□□□□□". Rice and wheat dominate the cropping pattern, accounting for more than 70% of gross cropped area (District Statistical Handbook, 2015). Pulses and oilseeds are cultivated as secondary crops, while vegetables such as potato, tomato, and brinjal are grown in pockets, especially near urban markets. However, monocropping tendencies make the farming system vulnerable to price fluctuations and climatic risks. The dependence on rice and wheat reflects both food security priorities and limited diversification, which constrains farm incomes.

☛ **Irrigation Facilities** - Agricultural productivity in Chandauli is closely tied to the availability of irrigation. The district benefits from the Ganga canal system, which provides surface irrigation to several blocks, though coverage is uneven. Tube wells have emerged as the most common source of irrigation, supplementing canal water and ensuring multiple cropping in some areas (Agricultural Census, 2010–11). However, a large share of farmers, especially marginal ones, remain dependent on the monsoon. Seasonal fluctuations in rainfall often create uncertainty in output and incomes, highlighting the need for improved irrigation efficiency and groundwater management (Sharma, 2012).

☛ **Employment in Agriculture**- Census data reveals that agriculture remains the largest employer in the district. In 2011, more than 65% of the total workforce was engaged in agriculture, either as cultivators or agricultural labourers (Census of India, 2011). The proportion of agricultural labourers is particularly high, reflecting widespread landlessness and semi-proletarianization of rural households. While cultivators rely on their fragmented landholdings, agricultural labourers depend on seasonal and often insecure wage work. This structure reflects the limited absorption of the workforce into non-farm sectors and the persistence of agrarian dependence despite rising population pressure.

☛ **Women's Role in Agriculture and**

Household Economy- Women in Chandauli play a crucial role in agricultural operations, including sowing, transplanting, weeding, and post-harvest processing. Despite their significant contribution, women's work often remains undervalued and under-recorded in official statistics. Alongside agriculture, rural women are deeply involved in household-based economic activities such as livestock rearing, dairy production, and kitchen gardening (Rao, 2005). Their contribution is vital in supplementing household food security and income, yet access to land rights, credit, and agricultural extension services remains limited for women farmers.

☛ **Livelihood Diversification**- Although agriculture dominates, livelihood diversification is increasingly visible. Dairy and livestock rearing are important supplementary activities, particularly for small farmers seeking to stabilize household income. Fisheries are practiced on a small scale in canal-fed ponds and water bodies. However, one of the most significant livelihood strategies has been labour migration. Large numbers of rural youth, especially men, migrate seasonally or permanently to urban centers such as Varanasi, Delhi, and Mumbai for employment in construction, trade, and services (Premi, 2004). Remittances from migrants play an important role in supporting rural households, financing education, health, and even agricultural investment.

Demographic Implications on Agriculture -

The demographic profile of Chandauli district has had a profound influence on the agricultural economy. With a growing population and limited cultivable land, rural households experience immense pressure on resources, which shapes the structure of farming, employment, and livelihood strategies. The interaction between population growth and agriculture reflects both the resilience of rural society and the structural challenges of agrarian development.

☛ **Population Pressure and Declining Per Capita Land Availability** - Rising population density in Chandauli has steadily reduced the per



capita availability of cultivable land. According to Census 2011, the district records a high rural density, placing extraordinary stress on its finite agricultural base. Whereas earlier generations cultivated relatively larger tracts, contemporary households are confined to smaller plots, often insufficient to sustain a family. This demographic pressure not only diminishes land-man ratios but also generates conditions of disguised unemployment in rural areas, as more family members are engaged in agriculture than the land can productively support.

☛ **Fragmentation of Landholdings and Subsistence Farming-** Inheritance laws and demographic growth have accelerated the fragmentation of holdings, with most farmers falling into the small and marginal categories. Operational holdings often measure less than one hectare, leading to subsistence-oriented farming rather than market-driven surplus production. The small size of plots restricts mechanization, crop diversification, and adoption of modern techniques. As a result, productivity stagnates and households remain trapped in low-income cycles. This structural reality has been one of the most visible consequences of population pressure on agriculture in eastern Uttar Pradesh.

☛ **Rural Poverty and Seasonal Unemployment-** The demographic burden on agriculture translates into chronic poverty and underemployment. Agriculture remains the principal occupation for nearly two-thirds of the district's workforce, yet incomes are inadequate to meet rising household needs (Census of India, 2011). Seasonal unemployment is widespread, as labour demand peaks only during sowing and harvesting seasons, leaving surplus workers without regular employment during lean months. Many landless and marginal households¹⁰ depend on agricultural wage labour, which is often irregular and poorly remunerated. This cycle of rural poverty reflects the imbalance between demographic size and agrarian capacity.

☛ **Literacy, Demographic Transition, and the Slow Shift to Non-Farm Activities-**

Improvements in literacy, especially among younger cohorts, have begun to shape livelihood aspirations. Yet, the demographic transition in Chandauli remains incomplete: while fertility rates have declined, the youth population continues to grow, adding pressure to labour markets. The slow expansion of rural industries, small-scale enterprises, and services means that most of this labour force cannot be absorbed outside agriculture. Consequently, the transition from farm to non-farm employment has been gradual and uneven, leaving agriculture overburdened despite changing demographic structures.

☛ **Migration as a Livelihood Strategy-** One of the most significant responses to demographic pressure has been labour migration. Households across Chandauli routinely send male members to nearby urban centres such as Varanasi and adjoining districts in Bihar, as well as to metropolitan cities like Delhi and Mumbai. Migrants find employment in construction, small-scale trade, rickshaw pulling, and low-skilled service sector jobs. Seasonal migration, particularly during agricultural slack periods, provides a coping mechanism against rural poverty and underemployment. Remittances from migrants are increasingly central to rural household budgets, financing education, healthcare, and agricultural investments. This outward flow of labour reflects the inability of local agrarian structures to absorb the growing workforce.

☛ **Pressure on Agricultural Resources-** Demographic growth has also intensified the exploitation of natural resources. The drive to increase output from limited land has led to overuse of fertilizers, depletion of soil nutrients, and declining fertility. Tube-well irrigation has expanded rapidly, contributing to falling groundwater tables in some pockets. Land degradation through over-cultivation, monocropping of rice and wheat, and inadequate fallowing further undermine sustainability. As rural households strive to secure livelihoods from



agriculture, the ecological stress on land and water resources has become a critical challenge, linking demography to environmental fragility.¹¹

Challenges and Policy Implications -

The demographic-agricultural interface in Chandauli presents several challenges that directly affect rural livelihoods and productivity. The continuous rise in population has put immense pressure on available land resources, leading to declining per capita landholdings and subsistence farming practices. This demographic pressure, combined with inadequate irrigation, poor mechanization, and over-dependence on traditional crops, has resulted in stagnating farm productivity.

At the same time, migration and feminization of agriculture have emerged as critical socio-economic issues. Male outmigration in search of urban employment leaves women to manage agricultural work, often without access to modern training or institutional support. Additionally, rural poverty and seasonal unemployment continue to trap households in low-return agricultural cycles. These factors highlight the urgent need for policy measures that address both agricultural modernization and alternative livelihood opportunities.

Key Challenges-

☛ **Declining farm productivity** amidst continuous population growth.

☛ **Small and fragmented landholdings**, restricting economies of scale.

☛ **Inadequate irrigation facilities** and dependence on monsoon rainfall.

☛ **Low mechanization levels**, especially among marginal farmers.

☛ **Migration of male workers**, leading to the feminization of agriculture.

☛ **Rural poverty and seasonal unemployment** linked to agricultural stagnation.

Policy Implications-

☛ **Crop diversification** beyond rice and wheat (vegetables, pulses, horticulture).

☛ **Rural skill development and**

employment schemes (e.g., MGNREGA, vocational training).

☛ **Infrastructure development-** rural roads, cold storage, local markets, agro-processing units.

☛ **Sustainable agricultural practices-** soil conservation, water management, organic farming.

Women-centric policies to empower female farmers with training and institutional support.

Conclusion -

The analysis of Chandauli district underscores the intimate link between demographic change and agricultural livelihoods in one of eastern Uttar Pradesh's most agrarian settings. Despite its natural fertility and recognition as the "Rice Bowl of Eastern Uttar Pradesh," the district faces mounting stress as population growth, land fragmentation, and rural dependence on agriculture continue to intensify. Between 1991 and 2011, slowing population growth and rising literacy signaled the onset of demographic transition, yet the predominance of rural settlements and the absence of robust non-farm sectors have kept agriculture as the primary source of livelihood.

The structure of landholdings, dominated by small and marginal farmers, has reinforced subsistence-oriented farming and low productivity. While rice and wheat continue to dominate cropping patterns, monocropping has made the system vulnerable to price and climatic shocks. Limited irrigation coverage and low mechanization further constrain agricultural efficiency. Simultaneously, rural poverty and seasonal unemployment persist, pushing male migration towards nearby towns and metropolitan centres. This outmigration, in turn, has contributed to the feminization of agriculture, where women increasingly shoulder the dual responsibility of farming and household management, often without adequate institutional support.

The study highlights a central paradox: demographic growth offers a potential workforce



and a "demographic dividend," but without adequate diversification of livelihoods, the pressure on agriculture leads to poverty, migration, and ecological stress. Policy directions, therefore, must move beyond short-term agricultural gains to emphasize crop diversification, rural skill development, infrastructure expansion, and sustainable farming practices. Empowering women farmers and strengthening rural institutions are equally critical. Only through such integrated strategies can Chandauli transform demographic challenges into opportunities, ensuring that agriculture remains not merely a subsistence activity but a sustainable foundation for rural development.

References

1. Bhalla, G. S., & Singh, G. (2001). *Indian Agriculture: Four Decades of Development*. New Delhi : Sage Publications.
2. Census of India. (1991). *District Census Handbook : Varanasi*. Registrar General and Census Commissioner of India, Government of India.
3. Census of India. (2001). *District Census Handbook : Chandauli*. Registrar General and Census Commissioner of India, Government of India.
4. Census of India. (2011). *District Census Handbook : Chandauli*. Registrar General and Census Commissioner of India, Government of India.
5. Government of Uttar Pradesh. (2015). *District Statistical Handbook : Chandauli*. Directorate of Economics and Statistics, Lucknow.
6. NSSO. (2014). *Key Indicators of Employment and Unemployment in India, 2011–12*. National Sample Survey Office, Ministry of Statistics and Programme Implementation, Government of India.
7. Rao, C. H. H. (2005). *Agriculture, Food Security, Poverty, and Environment: Essays on Post-Reform India*. New Delhi : Oxford University Press.
8. Sharma, H. R. (2012). Agricultural Development and Rural Transformation in India. *Indian Journal of Agricultural Economics*, 67(1), 1–23.
9. Singh, J. (2009). *Agricultural Geography*. New Delhi : Tata McGraw Hill.
10. Srivastava, S. C. (2016). Rural livelihoods in Eastern Uttar Pradesh : Constraints and Prospects. *Economic and Political Weekly*, 51(10), 45–53.



The Gunjan

Multi Disiplinary Quarterly International Refreed/Peer Reviewed Research Journal

ISSN : 2349-9273

'The Gunjan'

(in Multi Language : Hindi + English + Sanskrit)

Multi Disiplinary Quareterly International Refreed/Peer Reviewed Research Journal

Sector-K-444, 'Shiv Ram Kripa' World Bank Barra-Kanpur-208027

Contact- 08896244776, 09335597658,

E-mail: mohittrip@gmail.com

Visit us: www.thegunjan.com, abhinavgaveshna.com



Received: 16 Feb., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

Present Scenario of Barriers to Girls' Education in India



- Dr. Akanksha Shukla
Assistant Professor -
Department of Sociology,
Mahila Mahavidyalaya (P.G.)
College, Kidwai Nagar, Kanpur-
208011 (U.P.)

E-mail:
akankshame2611@gmail.com

Abstract

Education is a fundamental right and a crucial driver of socio-economic development. Despite significant progress in improving access to education in India, girls continue to face multifaceted barriers that hinder their educational attainment. This paper explores the present scenario of girls' education in India, focusing on socio-cultural, economic, infrastructural, and policy-related challenges. Drawing from government reports, NGO data, and recent studies, the article highlights persistent gender disparities, regional variations, and the impact of socio-economic status on female education. Finally, it suggests strategies for overcoming these challenges and promoting gender equity in education.

1. Introduction

Education plays a pivotal role in empowering women, reducing poverty, and driving national development. India, through initiatives such as the **Right to Education Act (2009)** and **Beti Bachao Beti Padhao (2015)**, has made commendable progress in promoting girls' education. The **female literacy rate**, according to the **National Family Health Survey (NFHS-5, 2019–21)**, stands at approximately **71.5%**, up from **64.6%** in 2015–16. Education is the foundation for national progress and human development. In India, educating girls has emerged as a key factor for achieving social equality, economic prosperity, and sustainable development. This paper explores the importance of girls' education, its positive impacts on individuals and society, and how it contributes to health, empowerment, and economic growth. The study also discusses government initiatives and challenges that persist in achieving gender parity in education.

However, gender inequality persists, especially in rural and marginalized communities. Many girls drop out before completing secondary education due to a combination of social norms, economic hardship, and inadequate infrastructure. This paper analyses the major barriers that continue to impede girls' education in contemporary India. Education of girls is central to human development, economic growth and intergenerational wellbeing. India has made notable gains in enrolment and female literacy over recent decades, but disparities remain across states, rural/urban



areas, caste groups and across levels of education especially in transition to and completion of secondary and higher education. Recent national surveys and program reports indicate that while enrolment has increased, barriers many rooted in socio-economic and gendered norms continue to inhibit full participation and learning for many girls. Education is a fundamental human right and a crucial instrument for empowerment. For girls, it provides the ability to shape their own lives and influence the world around them. In India, where gender inequality and social barriers have historically limited opportunities for women, girls' education is vital for achieving true development. Despite progress in literacy and school enrolment, many girls still face obstacles such as poverty, cultural norms, early marriage, and lack of infrastructure. Ensuring access to quality education for every girl is therefore both a social and economic necessity.

Objectives-

1. To synthesize recent evidence on barriers to girls' education in India.
2. To identify which barriers most strongly affect enrolment, retention and learning at different ages.
3. To recommend policy and program interventions based on contemporary evidence.

Methods-

This is a qualitative empirical review using secondary sources: national survey data (NFHS-5; Periodic Labour Force Survey/PLFS summaries), the Annual Status of Education Report (ASER 2023), UNICEF India programme and thematic reports, and peer-reviewed and grey literature published 2020–2025. Key indicators (female literacy, enrolment/retention, age-specific out-of-school rates and learning outcomes) were drawn from the cited sources to ground the analysis. Where possible, the most recent national statistics and program evaluations (2023–2025) were prioritized.

2. Socio-Cultural Barriers-

2.1 Gender Norms and Patriarchal Attitudes- Traditional gender roles often prioritize

domestic responsibilities for girls over formal education. Early marriage remains a significant issue **NFHS-5** reports that nearly **23% of women aged 20–24 was married before 18**. In many communities, education for girls is perceived as less valuable because their future economic contribution is often limited to household duties.

2.2 Safety and Mobility Concerns- Concerns about the safety of girls while traveling to school particularly in rural areas discourage parents from sending their daughters to distant educational institutions. Incidents of gender-based violence and harassment also reinforce the perception that education beyond the local village is unsafe for girls.

2.3 Cultural Bias and Preference for Sons- A deep-rooted preference for sons continues to influence educational investment within families. Studies have shown that when financial resources are scarce, boys are prioritized for education, while girls are expected to contribute to household chores or caregiving.

3. Economic Barriers-

3.1 Poverty and Opportunity Costs- Poverty remains one of the strongest deterrents to girls' education. Families often depend on the unpaid labour of daughters in household work or agricultural activities. The indirect costs of education such as transportation, uniforms, and textbooks can be prohibitive for low-income households.

3.2 Lack of Economic Incentives- Although government schemes like **Kasturba Gandhi Balika Vidyalaya (KGBV)** and **National Scheme of Incentive to Girls for Secondary Education** provide support, awareness and accessibility remain limited. The absence of immediate economic returns from girls' education often discourages long-term investment by families.

4. Infrastructural and Institutional Barriers-

4.1 Poor School Infrastructure- In many rural areas, schools lack adequate sanitation facilities, especially for adolescent girls. The **Annual Status of Education Report (ASER,**



2023) shows that over **15% of rural schools** do not have usable girls' toilets. This directly contributes to absenteeism and dropout during puberty.

4.2 Teacher Availability and Quality- Shortages of female teachers, especially in rural schools, negatively affect girls' attendance and participation. A lack of gender-sensitive pedagogy and counselling support further exacerbates the problem.

4.3 Digital Divide-

The COVID-19 pandemic exposed the digital divide in education. Many girls from rural and low-income households were unable to access online learning due to lack of devices or internet connectivity, leading to learning loss and higher dropout rates.

5. Policy and Governance Barriers-

Despite progressive policies, gaps remain in implementation. Coordination among various educational and social welfare schemes is often weak. Monitoring mechanisms are inadequate, and data on girls' dropout rates are often underreported. Furthermore, gender mainstreaming in education policy is not consistently practiced across states.

6. Regional Disparities-

Girls' education outcomes vary widely across states. While **Kerala** and **Himachal Pradesh** show high female literacy and school retention rates, **Bihar**, **Uttar Pradesh**, and **Rajasthan** continue to struggle with low enrolment and early dropout. These disparities are influenced by socio-economic development levels, infrastructure, and cultural attitudes.

Discussion - How the Barriers Interact-

Barriers are cumulative and often compound each other: poverty increases the pressure for child labour or early marriage; gender norms heighten the impact of inadequate sanitation; weak learning outcomes reduce perceived returns to schooling. Intersectionality matters girls from lower castes, minority religious groups, and remote rural communities face multiple, reinforcing disadvantages. Addressing one barrier (e.g., cash incentives) without tackling mobility, safety, or learning quality limits

effectiveness.

7. Strategies and Recommendations-

1. Strengthening Community Awareness- Conduct local campaigns to challenge gender stereotypes and promote the value of girls' education.

2. Improving School Infrastructure- Ensure gender-sensitive facilities such as separate toilets, menstrual hygiene support, and safe transport.

3. Economic Support Mechanisms: Expand conditional cash transfer programs and scholarships targeted at marginalized girls.

4. Recruitment of Female Teachers- Increase female representation in teaching staff to serve as role models and improve girls' participation.

5. Policy Integration- Harmonize education, health, and social welfare programs to provide holistic support for girls.

6. Technology Access- Provide digital literacy programs and affordable devices for girls in rural areas.

8. Conclusion-

The barriers to girls' education in India are deeply intertwined with social, economic, and structural factors. While the nation has made remarkable progress in enrolment and literacy, achieving gender parity requires sustained commitment, inclusive policy design, and cultural transformation. Empowering girls through education is not merely a developmental goal but a moral and constitutional imperative that determines the trajectory of India's future.

References

1. Ministry of Education, Government of India. *Unified District Information System for Education (UDISE+) Report, 2022–23*.
2. National Family Health Survey (NFHS-5), 2019–21.
3. Annual Status of Education Report (ASER), 2023.
4. UNESCO. *Gender Report: Progress in Education, 2023*.
5. Government of India. *Beti Bachao Beti Padhao Scheme: Annual Review Report, 2022*.
6. UNICEF India. *Girls' Education and Gender Equality, 2023*.





Received: 18 Feb., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

A Study of Working Culture of Procedure of Private Insurance Companies in India



- Prof. Suneet Awasthi
Professor-Dept. of Economics,
D. A.V. College, Kanpur-208001
(U.P.)

E-mail:
dr.suneet.awasthi@gmail.com

Abstract

Indian Insurance Companies were working in a monopoly market prior to the enactment of Insurance, Regulations and Development Authority Act, 1999. At the time of monopoly stage, there was no competition, the Life Insurance Corporation was the only known insurance company for life and for non life, there were four public sector companies namely- The New India Assurance Company Ltd., National Insurance Company Ltd., Oriental Insurance Company Ltd. and United India Insurance Company Ltd. All Public Sector Companies including LIC were working in a monopolistic market where there was no worry about the competitors in taking decision about level of product or price differentiation. Above all, there was no gross root planning to redress the grievances of their clients. Monopoly market situation when there is only one seller and large number of buyers prevailed in the Insurance sector for long. New system of working have been introduced by I.R.D.A. to cope up with the changed working scenario of insurance industry and public and private insurance of life and non life companies are doing efficiently and good amount of premium. Some of the systems i.e. Bancassurance, Tie up arrangements and broking system.

Key words- Bancassurance, Tie-up, Broking system, I.R.D.A., Culture, Procedure.

Introduction-

Before the process of Liberalization in India, Indian public sector insurance companies were doing him business in a full monopoly market where the these was no competitor and these was lake of caving the customer. Customers were regulated since a long time. Became at that time the market was the seller's market whatever the product they leveled or brought in the market, got full support and buyer's had to buy became there was no option, inspite of the dissonance. The what of the agile took full swing after the introducer of Insurance Regulating Authority Act 1999 through which the permission was ground to the private Insurance companies to conduct the Insurance business in India and the same market automatically converted into buyer's market. The



dissonance from the customers came out and private insurance companies got full support by the Indian consumers. Now at the present moment the scenes has been changed because of the entry of private companies, and customers are now being focused. Each & every policy which are being launched by the insurance companies either public sector or the private sector, due attention is given, not only the case but also the plan are added with the maximum benefits with nominal extra premium so that customers could be attracted. Due to the tough competition, various add-on covers are available in the insurance market and customer can easily realize the "full good" factor. The private insurance companies who are doing their business in India as a joint venture actually has a big group of multinational companies and has a vast experience in this field, has according to the guidelines of I.R.D.A., the foreign insurance company could do the business along with the Indian partner through the joint venture system.

The foreign private companies who are big names in their native country & started working with Indian partner just like ICICI prudential, ICICI Lombard, Bajaj Allianz, Iffco Tokio, Birla Sun Life, Katak Mahindra, Aviva and Tata MG general Insurance they have a large experience and expertise in the insurance sector now the Indian market in regard to insurance has become and innovative market where new type and concept are coming or introduced by these private insurance companies. Now a policy of unburned child is also available in the market. So, the working of private insurance companies have totally make the insurance market very competitive. More important fact is that after the entry of private players, Indian customers have also understood their importance now the customer is also becoming very intelligent, after analyzing the pros & cons and negotiating all factors he takes the final decision of purchasing the insurance.

Entry of private insurance companies has given a new shape of distribution channel is insurance product. Every Insurance company is at present planning to maximum the clientele through

this. Now change culture of working i.e. distribution channel. After macro level and micro level students/techniques, these private insurance companies are launching their product through the direct agent, brokers, tie-up arrangements and bancassurance as a result of which Indian Insurance market is now completely changing. Not only that each and every company is also concentrating on "real customer service" this is the reason that all insurance companies are focusing more benefits to their insurance plan as add-on covers.

Objectives -

- To enquire into the liberalization process.
- To study the working culture and procedures of private insurance companies in India.
- To know the companies in private sector for life and non life who have started their business as joint venture with a foreign partner.
- To study the critical analysis of the working culture and procedures of private insurance companies in India.

Methodology -

Problem under the study was to find out the effectiveness of an analytical study of working of private insurance companies in India whether it helps in increasing the skills of private insurance companies or not.

Various Types of Policies -

The environment of Insurance business in India is becoming very competitive every company either private insurance or public sector, all are giving more attention to the customers and launching their product in mixture type cover of benefits so that investment in life insurance provide the dual benefit of saving for your future financial requirements as well as financial security for your dependants in case of your death the nature of life insurance products is such that they are designed for the long term (10 year or more) and provide the best results when they are continued for their full term. On other hands Non-



life private insurance company provides a complete range of general insurance products covering areas such as accident and health, travel, energy property, marine and contingency, as well as several specialized financial lines. The private life and non-life insurance company policies are available the country through insurance agents and alternate distribution channels such as bancassurance, direct marketing and worksite management. In view of the this fact, there companies are introducing various types of policies.

Whole Life Policies-

Whole life plans are called as such as these policies cover up to age of 100 years. In fact a whole life plan is also known as an endowment plan maturing at the age of low, should the insurer lair to that age. These have been occurrences when maturity proceeds were paid to the insured that were lining at the age of low. Which life policy is believed to be very cleric type of policy because of its long terra duration, low premiums and higher sever assured under this policy. These policies run for as long as the policy holder is alive the policy nominee and the bonus life cover opted with profit options are payable only to the nominee or the beneficiary upon the death of the policy holder. The policy holder is not entitled to any money during his or her own life time. These policies were not sold in great number by the LIC and even the private players are not marketing this product Mn its traditional shape or even with little variation on ground way. Whole life covers do not provide any survival benefit and are based on pure risk and the saving element is missing in the product.

Private life insurers such as Bajaj Allianz has launched single premium whole life that can be obtained by one time payment. It product long term stable growth. It has no-built maturity date. Birla un Life has launched flexi life live as whole life plan, the duration of over is for the entire life till 100 years of age. The plan has a free yok period of 14 days from the data of dispatch of policy document to view one's devising about the cover. Tata, AIG provide whole life cover without profit

and with profit and also with limited payment and single payment options. The whole life policy is cheapest of all.

Endowment Policies-

Endowment polices are two most popular of all insurance plans. They cover the risk for a specified period, at the end of which the sun assured is paid back to policy holder, along with the entire bonus accumulated during the term of policy. The importances of endowment policies can be seen from the fact that the first set of Life cover unwrapped by HDFC & ICICI prudential were endowment course. As compared to whole life policies, the premium rates are higher and the bonus rate is lower in the case of these covers. This endowment amount may be put in any suitable investment general to provide an income for the remainder of one's own life generally, this amount is used by the Indian middle class for meeting major events of life such as marriage or children high education expenditure. These policies not only provide financial risk for the family where the breadwinner dies prematurely but also the insurance is repaid once tie risk is over. This policy does provide the survival benefits to the policy holder. The cost of an endowment policy is typically double that of a whole life one.

The private players have launched their endowment covers almost similar to that of LIC but with value additions. These products have been introduced with certain riders. Riders are an advantage attached to main policy and extend the policy benefits. The payer benefit riders five years term renewable and convertible rider have nothing new to the already available endowment covers distinctiveness in the product lies in the automatic non-feature clause or automatic accumulation clause that entails that policy will not be lapsed and it will be in force through the interest accumulated from the deposit amount. Automatic maintenance facility ensures that policy remain in force in case are minimum payment after 3 years of term. The plan draws upon the premium from accumulation accent to make up the mashing payment keep the policy live. Its individual insurance solution



through endowment plans include financial security within policy term, lump sum payment on death/survival to maturity, which includes sum assured, bonus additions and terminal additions.

Money Back Policies-

Unit link regular endowment insurance plans where the survival benefits are payable only at the end of the endowment period, these schemes provide for inter alia payment of partial survival benefits during the term of the policy of course, so long as the policy holder is alive. A significant feature of this brand of policy is that on the happening of death of the policy holder at any time within the policy term, the death claim comprises full sum assured without deducting any of survival benefits amounts that may have already been paid as money back components. Distinction of money back plan is one of the survival benefits to a certain extent than insurance defense to the family. Different term money back covers, Jeavan Chhaya, Jeavan Surabhi and Jeavan sanchaya are some popular money back plans. In money back policies the bonus rate is normally lower than traditional bonus endowment covers. Flexi cash flow of Birla Sun life insurance plan for a specified term with periodic payback of force amount at fixed intervals coupled with saving growth. Assured has an option to "choose from any of protector, Builder or Enhancer investment option. Insurers have designed this product as minimum guaranteed cover as well as higher market linked returns as accrued in additional holding account associated with the plan.

Annuity plans-

Annuity plans are exactly opposite of a whole life insurance policy. As certain period increased annuity decreases. The return on investment is quite higher rates compared to back rates. The disadvantages are that these are no return of capital after death insurances have products with immediate annuity options as well as deferred annuity options. The premium for annuity plans can be paid either as single premium or in easy installments. In immediate annuity single premium is paid and the policy terminates with death. In

deferred annuity plan the premium can be paid in single or in more installments. During different period the survival benefits is nil. At vesting date cash option is available if deferred period of 10 years or more in lieu of annuity. Annuity payments start under different options life for life only or for 5,10,15 or 20 years certain and thereafter for life. In any case annuity continues till death.

Pension-Plan-

Pension-plan provides for immediate or deferred pension for life of the insured person or to the beneficiary. Bajaj Allianz unit-linked pension, is a plan that helps you take control of your future and ensure retirements you can look forward to. This is a regular premium investment-linked deferred annuity policy available as: Unit Gain easy, pension premium and unit-linked pension single premium.

Other life Products-

Life insurance has other life products like investment plans and health plan unit-linked, pension, traditional, term plans, children plans and investment plan with tax benefit & life cover for lump-sum like gratuity and provident fund only. Single premium is accepted to purchase such investment plan, which has 5 or 10 years term irrespective of age. Maturity benefits 15% sum assured with compounded guaranteed addition @ 8.5% annually and loyalty addition. If death happens to life assured within first 6 months 95% per cent of the premium is returned. Between 6 months and 12 months the full premium is returned but after a year guaranteed additions are also added to the sum assured. 33% life's Sukh Jeevan Pradhan is safe investment vehicle with tax benefits. It is single premium policy with 5 or 10 years term facility. Every year insurance cover increases and maturity sum assured is loaded with guaranteed addition and maturity guaranteed addition.

Broker System -

After the opening up of the insurance market to private capital the most talked about event has been the advent of brokers into the market. Traditionally, insurance has not been



afraid of brokers and only agents. Who were next door neighbors acquaintances or wives of friends, were allowed to operate in the direct Insurance business. The role of brokers was limited only to reinsurance. It its pursuit to develop the sphere of the insurance business and to give flexibility to react to changing market environment I.R.D.A. introduced new institution of brokers by bringing in place Brokers regulation of October 2002. Direct marketing has now gained official recognition with I.R.D.A. issuing in licenses to the first batch of brokers in the month of January 2003. The brokerage system is likely to have an interesting growth path in next few years. Brokers offer a host of value added services to insurance customers including risk analysis, to insurance programmes, analysis or risk providers, negotiating with insurers and claim assistance. The dominant the developed insurance market. In USA 70% of non-life business is transacted through brokers. Broking activities have kicked off in India market and presence of brokers will equip the market with a more motivated and more focused marketing force that would hasten the business development. Broker model has been introduced to given a fact good to the customers.

Direct Broker-

Direct Broker means an insurance broker who for the time being licensed by the authority to act as such, for remuneration carries out the functions specified under Regulation 3 of I.R.D.A. Brokers Regulation 2002 with in the field of life insurance or general insurance or both. He carries out the following functions-

Obtain detailed information the clients business and risk management philosophy, Familiarize himself with the clients business and under writing information, Renders advice on appropriate insurance cover and terms, Identifies adequate levels of limits, Maintains detailed knowledge of available Insurance markets, Negotiates competitive terms and reasonable rates, Submits quotation received from insurer for consideration of client, Provides requisite underwriting information as required by an insurer

in assessing the risks to decide pricing terms and conditions for cover, Acts promptly on instructions from a client and providing him within acknowledgements and program reports, Assists clients in paving premium under-64VB of insurance Act. Provides services related to insurance consultancy and risk management, Eliminates under insurance and incomplete coverage of perils in insurance contracts and Provides reliable report on surveys and valuation and assisting in the negotiation of the claims and maintains proper records of claims and ensuring prompt recoveries form insurance within the time frame set by the regulator.

Reinsurance Broker-

Reinsurance broker is an insurance broker that arranges reinsurance for direct insurers with insurance and reinsurance companies. He deals with national and international professional under insurers. Reinsurance role is to strength this belief for a long term relationship. He carries following functioning. Familiarize himself with the client's business and risk retention philosophy, designing reinsurance programme, Maintains clear records of the insurer's business to assist the reinsurance, renders advice based on technical date on the reinsurance covers available in the international insurance and the reinsurance market, maintain a database of available reinsurance markets including solving ratings of industrial reinsurance, renders consultancy and risk management services for reinsurance, selects and recommends a re-insurers a group of re- insurers, negotiates with a reinsure on the client's behalf and completing placement of orders wells within time limits, assists in case of commotion of reinsures contracts places with them, acts promptly on instructions from client and providing it written acknowledgements and progress reports, collect and remits premiums and claims within such time as agreed upon, assist in negotiation as well as settlement of claims, maintain proper records of claims and exercise due care and diligence at the time of selection of reinsures and international insurance brokers having regard to their respective



security rating and establishing respective responsibilities.

Composite Broker-

A composite broker represents the insured as a direct broker, and at the same time represents the insurer as its reinsurance broker. He can be a providing broker as well as placing broker. He gets paid twice for his service and advices to two risks he carries out any one or more of functions mentioned in Regulation 3 & 4 for direct brokers and reinsurance brokers respectively. It is not unusual for composite brokers to deal with customers as direct brokers and gather underwriting information and present it straight to re-insurers, circumventing or marginalizing the direct insurer. Composite broking is an area of hypersensitivity but regulation now recognizes it.

Composite broker could Tie-up reinsurance arrangement at lower rates and bring pressure on primary insurer to front for business. Further the duties, responsibilities and functions of two roles are in disagreements to each other. Preferably then should be no license and composite broking because of their enormous reinsurance clout, they will render the direct broker redundant. Moreover, there is also a danger of insurance broker who well arrange everything from cradle to grave. This could even lead to extravagant serious to foreign reinsurance at the cost of Indian market. Broker play an important role of match maker bringing the insurers and the clients together in the spirit of goodwill, mutual trust and long lasting relationship.

Tie-Up Arrangement -

Tie-up arrangement is the new system of selling products which come into the picture after the privatization and liberalization process of the insurance sector. After the entry of private players in the insurance sector the demand of this system of Tie-up has become very popular because strategy of every player was to book the large amount of premium by hook or crook in their account. In this regard insurance company/servicing sign a memorandum. This type of a arrangement is became the necessity of the insurance market in the

present scenario. Through this Tie-up armament, both the parties are benefited with whom the contract has been made or the party who is doing the contract. The theme is only to capture the market. In other words we can say this is the new system of marketing through which parties entering into the contract trying to maximize the their sale and earn profit. In the present system of marketing each and every industry such as banking, insurance, automobiles, post and telegraph and premiums applying and penetrating their products in the environment of Indian economy. Some of the Tie-up arrangement one of them HSBC, Bank has set its eyes on present and business insurance in collaboration with the Tata-AIG Life and General Ins. Companies. The bank has on offer a range of life and non-life insurance scheme in the personal insurance segment. The life insurance scheme include Mahalife hold & Nirvana Pension Plan. UTI Bank has entered into a partnership with Bajaj Allianz General Insurance for marketing General insurance products. The Tie-up will enable the bank to provide low cost health & household insurance to its customers.

References

1. Agarwal, A.N., (2000). Insurance in India, A study of Insurance Aspect of Social Security of India, Allahabad Law Journal Press, Allahabad.
2. Alok Ghosh, 'Indian Economy: Its Nature and Problems' (2007), The Word Press Pvt. Ltd. Calcutta.
3. Angell, F.J. (1981). Which life insurance is for you? The CPA Journal 51(8), 25-31.
4. Bhir, B.S., 'Insurance Principles and Practice' Lakhani Book Depot, Bombay, 1997.
5. Campbell, R.a. (2000). The demand for life insurance: An application of the economics of uncertainty. Journal of Finance, 35(5), 1155-1172.
6. Chang, D. H. (2015). Economic analysis of the development in universal life insurance in the 1980s. Journal of the American Society of CLU & ChFc, 49(1), 82-87.
7. Ducker, J.M. (2019). Expenditures for life insurance among working wife family, Journal of Risk and Insurance, 36, 525-533.
8. Yaari, M. E. (2005). Uncertain lifetime, life insurance and the theory of the consumer. Review of Economic Studies. 32, 137-150.



AI and Personalized Learning in Indian Classrooms : A Qualitative Theoretical Analysis



- Dr. Nalini Misra
Assistant Professor-
Department of Education,
Khwaja Moinuddin Chishti
Language University, Lucknow-
226013 (U.P.)

Email:
nalinimisra@kmclu.ac.in

Abstract

Artificial Intelligence (AI) has become one of the most transformative forces in contemporary education, particularly through its capacity to enable personalized learning. In India, where the education system serves a vast and heterogeneous learner population, AI offers new opportunities to address diverse learning needs, bridge equity gaps, and support teachers in differentiated instruction. This paper presents a qualitative, theoretical exploration of AI's potential for personalized learning within Indian classrooms. Drawing from policy analysis, literature review, and conceptual frameworks in educational technology, the paper examines (a) the meaning of personalized learning in AI contexts, (b) pedagogical opportunities and challenges in Indian schooling, and (c) ethical, infrastructural, and cultural implications. It argues that while AI can individualize instruction and enhance engagement, its impact depends on teacher agency, contextual localization, and equitable digital access. The paper concludes with a set of recommendations for policy, teacher education, and future research to guide the responsible integration of AI in Indian classrooms.

Keywords- *Artificial Intelligence, Personalized Learning, Educational Technology, India, NEP 2020, Equity, Teacher Roles.*

The emergence of Artificial Intelligence (AI) in education signifies a fundamental change in teaching and learning processes of design, delivery, and assessment. AI-driven systems such as intelligent tutoring systems (ITS), adaptive learning platforms, and learning analytics tools can gather and process data in real-time regarding students' performance and adjust their instructional paths accordingly (Luckin et al., 2016). The personalized method is in line with the long-time pedagogical vision of teaching and learning through direct individual needs a considerable challenge that has remained unsolved in traditional classrooms at a large scale.

In India, the government policies are very welcoming for



the use of AI in education. The NEP (National Education Policy) 2020 of the country has made it very clear that the use of technologies including AI will be supported in the process of Access, Inclusion, and Quality enhancement (Government of India, 2020). Nonetheless, the Indian educational environment characterized by big classes, lack of infrastructure, many languages, and uneven access to the internet brings up some contextual difficulties. The question of whether AI-based personalization will work in such a context can only be answered by undertaking qualitative, interpretive, and theoretical inquiry that walks beyond the bounds of technical feasibility or quantitative performance measures.

The present paper takes a qualitative conceptual stance in its endeavor to understand the potential impact of Artificial Intelligence and personalized learning on Indian classrooms. Instead of giving empirical data, it draws on the existing literature, policy documents, and universal ideas to scrutinize the social, pedagogical, and ethical aspects of AI-assisted personalization.

Theoretical Basis of AI and Customized Learning-

Introducing Personalized Learning-

Personalized learning is a term used to refer to methods of teaching that customize the content, pace, learning path, and assessment to the unique needs and interests of each student (Pane et al., 2017). AI implements personalization through systems that utilize algorithms to foresee learner preferences, suggest content, and modify difficulty levels in real time (Chen et al., 2020). Central to personalized learning are three elements-

Learner at the center – the teaching corresponds to the individual learning pace and goals each time.

Flexibility – the learning routes can be changed regarding the speed and the order.

Feedback based on data – persistent observation with interventions that react to the results.

In the case of AI-underpinned personalization, the realization of these facets comes through technologies like machine learning, natural language processing, and predictive analytics, which not only decipher learners' data but also control automatic adaptive actions.

The Use of AI in Education: A Worldwide Context-

AI is being applied in education worldwide for activities like automated assessment, intelligent tutoring, predictive analytics, and conversational agents (UNESCO, 2021). One example is the systems, Carnegie Learning's Cognitive Tutor and Knewton, which proved to have better student participation and success in mathematics and science (VanLehn, 2011). Nonetheless, the positive influence of AI is, in a way, reliant on the specific local situation, the design of pedagogy, and the support of the teacher.

The Indian Context-

AI is seen in India as a transformational agent for the education system. The various schemes introduced by the Ministry of Education, like AI for All (CBSE & Intel, 2021) and PM eVidya, are geared towards making digital and AI literacy accessible to all. However, a few factors such as lack of infrastructure, limited access to devices, and poor digital skills still pose major challenges (NITI Aayog, 2023). What's more, the acceptance of AI in schools will depend on the teachers' understanding of and their ability to weave the technology into the existing socio-cultural and linguistic frameworks of the students.

Theoretical Framework: A Socio-Constructivist Perspective-

To analyze AI-mediated personalization through a qualitative approach, this paper applies a socio-constructivist perspective (Vygotsky, 1978). The socio-constructivist perspective considers learning as not merely happening but interacting socially, it is also a process that is conditioned using the available tools and cultural practices. The AI systems here serve as cognitive tools—not



replacing teachers but mediating interactions between learner-teachers-content where teachers are present in their master.

Three theoretical insights steer the analysis-

Mediation- AI technologies mediate learning experiences but must align with the cultural and linguistic contexts of the learners.

Teacher Agency- Teachers remain key as the designers and interpreters of AI messages.

Dialogic Learning- Personalized learning should maintain dialogue between learner and teacher, learner and AI system, and among peers to keep the social aspects of learning alive.

Thus, the challenge to pedagogy lies in merging AI's adjustment logic with the relational and dialogic nature of Indian classroom teaching.

Pedagogical Opportunities-

Differentiated Instruction and Remediation- AI platforms have the capacity to scrutinize pupil responses while spotting their errors and submitting corresponding repair these actions are hard to perform for teachers in big Indian schools (Luckin & Holmes, 2017). For example, the adaptive tools like Byju's and Edvantage make use of algorithmic feedback to direct students during their individual practice sessions.

Enhancing Engagement and Motivation-

The introduction of gamified AI interfaces can considerably raise classroom enthusiasm, because they give immediate feedback and rewards (Holmes et al., 2021). This method not only keeps the students engaged but also controls their natural curiosity through the challenge posed to them since they are allowed to learn at their own speed.

Support for Teachers-

AI systems can not only help teachers in admin and diagnostic tasks monitoring learning progress, but sorting kids also based on learning profiles, and creating performance reports (Luckin et al., 2016). Thus, teachers can devote their time to more demanding teaching activities like guidance, reasoning, and emotional intelligence training.

Inclusive and Equitable Access-

AI tools, when created with accessibility features and multilingual interfaces, can be of great help in integrating disabled students or those from different linguistic backgrounds (UNESCO, 2021). This kind of development is in line with the NEP 2020 vision of comprehensive and equitable education.

Challenges and Ethical Considerations-

☛ **Digital Divide and Infrastructure Gaps-** India, in spite of its policy enthusiasm, continues to grapple with digital inequities. Only around one-third of the rural households have reliable internet access, according to the NITI Aayog (2023). If AI tools are not made available for everyone, they may end up intensifying rather than reducing the disparities already existing along the socio-economic lines.

☛ **Teacher Readiness and Professional Development-** The most important players in the AI integration process are teachers. However, there are a lot of them who claim that they do not know much about the AI concepts, and how to incorporate them in the teaching process (Bhattacharya & Sharma, 2022). Usually, the professional development programs are not designed for pedagogical aspects but rather for technical ones. The degree of trust teachers have in AI recommendations and their autonomy also differ, thus affecting the adoption.

☛ **Algorithmic Bias and Transparency-** AI systems are data-driven; if the datasets are biased or incomplete, the systems can produce unfair results (Holmes et al., 2021). Algorithms, for example, that have been trained mostly on English-language data can be a disadvantage for non-English speaking students. Therefore, the transparency and explainability of AI decisions are fundamental for holding the systems responsible.

☛ **Cultural and Linguistic Adaptation-** India's linguistic diversity with 22 official languages and hundreds of regional



dialects necessitates the development of AI systems that are localized. The application of imported or generic models can frequently lead to the neglect of cultural nuances or curricular priorities. Localization is not only about technical translation but also about the adaptation of pedagogy and content (Kumar & Gupta, 2023).

☛ **Ethical Governance and Data**

Privacy- The data of learners is the primary resource in AI, and this brings up ethical issues concerning privacy, consent, and data security. The AI Ethics Recommendation by UNESCO (2021) states that there should be well-defined governance frameworks that will guarantee data minimization, consent-based data sharing, and algorithmic fairness.

Reimagining Teaching and Learning-

The presence of AI in Indian classrooms opens a new door to facilitators of learning that is basically the opposite of traditional teaching. But this change does not happen automatically; it depends on the support of the system and the reflective practice of the teachers.

☛ **From Instructor to Facilitator-**

Teachers are expected to interpret AI feedback to create responsive, dialogic learning experiences.

☛ **From Uniform Curriculum to**

Adaptive Pathways- AI makes it possible to personalize learning at the micro-level, but curricula and assessment systems are still inflexible. It is still a challenge to synchronize adaptive systems with the standardized syllabi.

☛ **From Data to Insight -**

The effective personalization of learning is not only dependent on data volume but also on meaningful interpretation that indeed requires the teacher's judgment and contextual understanding.

☛ **From Access to Agency-**

Just giving students access to technology is not enough; they also need to be empowered to use AI in a critical and creative way.

The educational value of AI is thus determined less by the sophistication of the

algorithms and more by the extent to which teachers and learners create meaning together in the context of their sociocultural background.

Implications for Policy and Practice-

☛ **Teacher Education and Professional Learning-** Teacher education programs should necessarily comprise the AI literacy, ethics, and integration of pedagogical practices modules. The focus of continuous professional development should be on the critical interpretation of AI analytics and adaptive lesson design (Bhattacharya & Sharma, 2022).

☛ **Infrastructure and Equity-** The government must give priority to the digital infrastructure in the rural and underserved areas, making it accessible to the devices, connectivity, and multilingual content (NITI Aayog, 2023). The use of offline or hybrid AI models could help to overcome the problems caused by the lack of internet connectivity.

☛ **Ethical and Regulatory Frameworks-** There should be a national framework on AI Ethics in Education aligned with UNESCO (2021) that controls the data use, privacy, and algorithms' fairness. Furthermore, regulators should require education technology firms to produce transparency reports.

☛ **Localization and Cultural Relevance-** Localization of datasets and creation of content in regional languages are of great necessity. AI developers, educators, and linguists working together can make sure the local culture is considered (Kumar & Gupta, 2023).

☛ **Research and Continuous Evaluation-** India should carry out more interpretive and longitudinal research in order to get a clearer picture of the pedagogical implications of AI. Qualitative case studies, action research, and mixed-method evaluations can help to reveal the impact of AI on the classroom culture and the teacher roles.

Conclusion-

AI-enabled personalized learning is not a



solution only, but also an effective tool that can support in overcoming educational problems and challenging conditions that exist in the Indian schooling system due to its vastness and diversity. The technology can help through customizing instruction, backing up the teacher's decisions and making learners more engaged. Nevertheless, the impact that the technology will have on learning will heavily rely on the human factors, the ethical considerations, and the circumstances of its usage alongside the algorithmic performance. Teacher preparedness, equal opportunity of access, language adaptation, and ethical management will be the factors that determine whether AI will be an aiding or a blocking tool.

The current qualitative theoretical analysis leads to the conclusion that a human-centered AI model, which emphasizes the agency of the teacher and the importance of social learning, is a precondition for the realization of AI's transformative potential in Indian classrooms. The way ahead entails a synergy of the different stakeholders such as policymakers, educators, technologists, and researchers so that the personalization enabled by AI is always equitable, ethical, and pedagogically sound.

References

- Bhattacharya, S., & Sharma, R. (2022). *Teacher readiness for AI integration in Indian classrooms: Challenges and opportunities*. *Journal of Educational Technology and Development Studies*, 7(2), 45–57.
- Chen, X., Xie, H., & Hwang, G. (2020). A systematic review of artificial intelligence in education. *Educational Technology & Society*, 23(2), 1–12.
- Government of India. (2020). *National Education Policy 2020*. Ministry of Education, New Delhi.
- Holmes, W., Bialik, M., & Fadel, C. (2021). *Artificial Intelligence in Education: Promises and Implications for Teaching and Learning*. Center for Curriculum Redesign.
- Kumar, R., & Gupta, D. (2023). Localization and ethics of AI in Indian education: Challenges and frameworks. *International Journal of Education and Technology*, 12(3), 221–235.
- Luckin, R., Holmes, W., Griffiths, M., & Forcier, L. B. (2016). *Intelligence unleashed: An argument for AI in education*. Pearson Education.

- Luckin, R., & Holmes, W. (2017). A commentary on learning analytics and AI in education. *British Journal of Educational Technology*, 48(4), 873–876.
- NITI Aayog. (2023). *AI for All: Advancing Artificial Intelligence for Inclusive Growth*. Government of India.
- Pane, J. F., Steiner, E. D., Baird, M. D., & Hamilton, L. S. (2017). *Informing progress: Insights on personalized learning implementation and effects*. RAND Corporation.
- UNESCO. (2021). *AI and education: Guidance for policymakers*. Paris: UNESCO.
- VanLehn, K. (2011). The relative effectiveness of human tutoring, intelligent tutoring systems, and other tutoring systems. *Educational Psychologist*, 46(4), 197–221.
- Vygotsky, L. S. (1978). *Mind in Society: The Development of Higher Psychological Processes*. Harvard University Press.



जॉन डीवी की शैक्षिक विचारधारा

सारांश



— डॉ. रवेन्द्र राजपूत,
एसोसिएट प्रोफेसर —
शिक्षक-शिक्षा विभाग,
श्री वाष्णीय महाविद्यालय,
अलीगढ़— (उत्तर प्रदेश)

ई-मेल:

ravendraraajput@hotmail.com

डीवी कहते हैं — “शिक्षा का कार्य असहाय प्राणी को सुखी, नैतिक एवं कार्यकुशल बनाने में सहायता देना है।” अतः डीवी ने व्यक्तिगत एवं सामाजिक दोनों ही दृष्टिकोण से शिक्षा के तात्कालिक उद्देश्यों का निर्धारण किया है। उनके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य शिक्षा की प्रक्रिया में निहित है। इसीलिए उन्होंने कहा था— शिक्षा के उद्देश्य के विषय में बात करना मूर्खता है शिक्षा का उद्देश्य भविष्य के गर्भ में न होकर प्रत्येक के साथ प्राप्त होता जाता है। शिक्षा में हम डीवी की उन सेवाओं के लिए कृतज्ञ हैं जिनके द्वारा उन्होंने ज्ञान के प्राचीन स्थिर आदर्शों के संचय को चुनौती दी और शिक्षा को वर्तमान जीवन की वास्तविकताओं के सम्पर्क में ले आये तथा वह सामान्य सिद्धान्त निर्मित किया कि — शिक्षा और दर्शन को समसामयिक समस्याओं पर चिन्तन करना चाहिए।

देश व समाज में फैली भ्रान्तियों, धारणाओं को समूल रूप से नष्ट कर अपने देश की समस्त जनता को दिशा ज्ञान देकर जॉन डीवी ने अत्यन्त सराहनीय कार्य किया। शिक्षा व मनोविज्ञान पर दिये उसके सूक्ष्मतम विचारों ने विश्व के सभी देशों की शिक्षा व्यवस्था को प्रभावित किया। डीवी के शिक्षा व दर्शन पर किये चिन्तन को आज भी दार्शनिक व शिक्षा शास्त्री झुठला नहीं सकते।

जीवन की झलक (Glimpse of Life)-

अमेरिका के प्रसिद्ध शिक्षाविद् एवं दार्शनिक डॉ. जान डीवी का जन्म न्यू इंग्लैण्ड के वरमोंट (Vermont) गाँव में 1859 में हुआ। उसके पिता ऑर्चिवालड डीवी गाँव के ही दुकानदार व माता लूसिनारिच एक आदर्शवादी महिला थीं। डीवी ने B.A. की उपाधि वरमोंट विश्वविद्यालय से 1879 में प्राप्त की। इसके बाद उन्होंने जॉन हॉपकिन्स विश्वविद्यालय से Ph.D. की उपाधि ग्रहण की। इसी समय वह विश्वविद्यालय के ख्याति प्राप्त विद्वानों के सम्पर्क में आए जिसका उनके ऊपर विशेष प्रभाव पड़ा। डीवी विभिन्न विश्वविद्यालयों में दर्शन में के शिक्षक रहे। शिकागो में पढ़ाने के समय उनका ध्यान शिक्षा की ओर गया और उन्होंने अपना एक प्रयोगशाला स्कूल (1896) में खोल दिया। विश्व के विभिन्न विश्वविद्यालयों में डीवी ने शिक्षा व दर्शन पर व्याख्यान दिये। मृत्युपर्यन्त यह महान दार्शनिक एवं शिक्षा शास्त्री अपने विचारों की व्यावहारिकता, शोधकार्य एवं लेखन में लगा रहा। 1952 में इस महान शिक्षाविद् एवं दार्शनिक का देहान्त हो गया। किन्तु शिक्षा जगत में इनका प्रभाव आज भी बना हुआ है और सम्भवतः आगे आने वाले वर्षों में भी बना रहेगा।



डीवी का लेखन कार्य—

1. इन्ट्रेस्ट एण्ड एफर्ट एज रिलेटेड टू बिल
2. दी स्कूल एण्ड सोसायटी
3. दी चाइल्ड एण्ड दी करीकुलम
4. हाउवी थिंक
5. इन्ट्रेस्ट एण्ड एफर्ट इन एजुकेशन
6. स्कूल्स ऑफ टुमॉरो
7. डेमोक्रेसी एण्ड एजुकेशन
8. रिकन्सट्रक्शन इन फिलॉसफी
9. एक्सपीरियेन्स एण्ड नेचर

10. सोर्सज ऑफ ए साइन्स ऑफ एजुकेशन इन ग्रन्थों में डेमोक्रेसी एण्ड एजुकेशन को महत्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। इस रचना को शिक्षा का एक शास्त्रीय ग्रन्थ माना जाता है।

डीवी का दर्शन—

डीवी के दार्शनिक विचारों पर विभिन्न दार्शनिकों का समय-समय पर प्रभाव पड़ा जिसके कारण उनके विचारों में संशोधन होता रहा। सर्वप्रथम डीवी पर मॉरिस का प्रभाव पड़ा हो वह हीगेल के आदर्शवाद से प्रभावित हुए तत्पश्चात् डारविन के विचारों का प्रभाव पड़ा जिसके कारण उसके दर्शन में प्रकृतिवादी लक्षण दिखाई दिये। जेम्स व पीयर्स के सम्पर्क में आने पर डीवी पूर्णरूपेण प्रयोजनवादी हो गए।

डीवी मूल्यों को शाश्वत नहीं मानते। यथार्थ भी इनके लिए परिवर्तनशील है। सत्य वही है जो कसौटी पर खरा उतरे। दर्शन सभी ज्ञान की शाखाओं का सामान्यीकरण है। डीवी, स्पेन्सर की तरह विकासवाद में विश्वास करते हैं, ड्यूरान्ट के अनुसार वे प्रकृतिवादी हैं। डीवी के अनुसार कोई भी सिद्धान्त तथा आदर्श शाश्वत सत्य नहीं रह सकता, वह तो केवल जीवन को नियन्त्रित तथा नैतिक रखने के लिए प्रेरणा स्वरूप है। विकास ही नैतिक है तथा वही आदर्श है।

प्रयोगात्मक तर्कशास्त्र ही सबसे उचित है। प्रयोगों के द्वारा ही हम रुढ़ियों के बन्धन से मुक्त, जीवन के सत्य का दर्शन कर सकते हैं। प्राकृतिक विज्ञान तथा नैतिकशास्त्र की दूरी ही समस्त बुराइयों की जड़ है। कोई भी ज्ञान की शाखा चाहे वह रसायन शास्त्र या भौतिकशास्त्र, जब वह मनुष्य के दुःखों के कारण की खोज करती व दुःख निवारण करती है तो वह नैतिकता का स्रोत हो जाती है। दर्शन तो मूल रूप से आलोचना है,

आलोचना की आलोचना।”

जीवन की समस्याओं के सुलझाने से उत्पन्न दर्शन एक जीवित वस्तु है। मनुष्य काल तथा स्थान के अनुकूल सत्यों की रचना कर सकता है। डीवी केवल शिवं (Good) को ही शाश्वत सत्य मान सकते हैं।

डीवी का शिक्षा दर्शन—

डीवी दर्शनशास्त्र तथा शिक्षा में कोई भेद मानते। उनका कहना है— “अपनी सामान्य अवस्थाओं में शिक्षा सिद्धान्त ही दर्शन कहलाता है।”

शिक्षा का अर्थ —

डीवी ने अपने शिक्षा दर्शन में अनुभव को प्रमुख स्थान दिया है। डीवी के शब्दों में शिक्षा का अर्थ — “शिक्षा के अनुभवों के सतत् पुनर्निर्माण के द्वारा जीवन की प्रक्रिया है। वह व्यक्ति में उन समस्त क्षमताओं का विकास है जो उसको अपने वातावरण को नियन्त्रित एवं अपनी सम्भावनाओं को पूर्ण करने योग्य बतायेगी।”

डीवी के अनुसार— शिक्षा अनुभव के सतत् पुनर्निर्माण के रूप में इन 4 शैक्षिक विचारों का संश्लेषण करती है—

1. शिक्षा : जीवन की एक आवश्यकता है।
2. शिक्षा : एक सामाजिक कार्य है।
3. शिक्षा : मार्गदर्शन है।
4. शिक्षा : अभिवृद्धि है।

शिक्षा के उद्देश्य —

1. **तात्कालिक उद्देश्य** — प्रयोजनवादी होने के नाते डीवी किसी पूर्व निश्चित उद्देश्य में विश्वास नहीं रखते हैं। वो कहते हैं— “शिक्षा का सदैव तात्कालिक उद्देश्य होता है और जहाँ तक क्रिया शिक्षाप्रद होगी वहाँ तक शिक्षा उस साध्य को प्राप्त करेगी।”

2. **अनुभवों का सतत् पुनर्निर्माण** — कोई भी क्रिया बिना किसी उद्देश्य के नहीं की जाती है। इसीलिए अनुभवों का सतत् पुनर्निर्माण शिक्षा का एक उद्देश्य माना है।

3. **वातावरण के साथ समायोजन** — डीवी ने लिखा है — “शिक्षा की प्रक्रिया समायोजन की एक निरन्तर प्रक्रिया है जिसका प्रत्येक अवस्था में उद्देश्य होता है— विकास की बढ़ती हुई क्षमता को अनुकूलन प्रदान करना।”

4. **गतिशील एवं लचीलेमन का निर्माण** — डीवी ने शिक्षा का एक उद्देश्य — गतिशील एवं लचीलेमन के निर्माण को माना है। उन्होंने लिखा है — “यदि हम



सामाजिक प्रयोगवादी पद्धति चाहते हैं तो हमें पूर्व-निर्धारित मूल्यों का परित्याग करना होगा।" मूल्यों व आदर्शों का निर्माण मनुष्य के अनुभवों से होता है। अतः हमें उसके मन को गतिशील एवं लचीला या अनुकूलन करने योग्य बनाना चाहिए ताकि वह प्रत्येक परिस्थिति का साहसपूर्वक सामना कर सके।

5. सामाजिक कुशलता — सामाजिक दृष्टि से डीवी का शिक्षा का उद्देश्य — सामाजिक कुशलता की प्राप्ति है। सामाजिक रूप से कुशल व्यक्ति वह है जिसमें ये विशेषतायें हों—

- (i) आर्थिक कुशलता
- (ii) निषेधात्मक नैतिकता
- (iii) स्वीकारात्मक नैतिकता

डीवी कहते हैं — "शिक्षा का कार्य असहायप्राणी को सुखी, नैतिक एवं कार्यकुशल बनाने में सहायता देना है।" अतः डीवी ने व्यक्तिगत एवं सामाजिक दोनों ही दृष्टिकोण से शिक्षा के तात्कालिक उद्देश्यों का निर्धारण किया है। उसके अनुसार शिक्षा का उद्देश्य शिक्षा की प्रक्रिया में निहित है। इसीलिए उन्होंने कहा था— "शिक्षा के उद्देश्य के विषय में बात करना मूर्खता है शिक्षा का उद्देश्य भविष्य के गर्भ में न होकर प्रत्येक के साथ प्राप्त होता जाता है।"

पाठ्यक्रम — डीवी ने प्रचलित पाठ्यक्रम की कटु आलोचना करते हुए इसके निर्धारण के लिए इन सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया —

1. उपयोगिता का सिद्धान्त — डीवी का कथन है— "मनुष्य की मूलभूत सामान्य समस्यायें भोजन, निवास, वस्त्र, घर की सजावट, आर्थिक उत्पादन, विनिमय तथा उपभोग से सम्बन्धित हैं।" इन्हीं समस्याओं का हल जीवन का उद्देश्य है। इसलिए उन्होंने भाषा, स्वास्थ्य विज्ञान, इतिहास, भूगोल, अर्थशास्त्र, गणित, विज्ञान, शारीरिक प्रशिक्षण, कटाई-बुनाई कृषि विज्ञान, बालिकाओं के लिए गृह विज्ञान आदि विषय पाठ्यक्रम में शामिल किये।

2. रुचि का सिद्धान्त — डीवी के अनुसार बालक में 4 प्रकार की रुचि — बातचीत एवं आदान-प्रदान में रुचि, खोज में रुचि, रचना में रुचि व कलात्मक अभिव्यक्ति की रुचि पाई जाती है। इन्हीं के आधार पर उन्होंने पाठ्यक्रम में इन विषयों को स्थान दिया — भाषा, गणित, विज्ञान, इतिहास, भूगोल, पाक कला, सिलाई, बागवानी, ड्राइंग कला, संगीत व पाठ्य सहगामी क्रियायें।

3. बाल केन्द्रित पाठ्यक्रम — डीवी ने बालक को पाठ्यक्रम का केन्द्र बिन्दु माना। उन्होंने बालक की क्षमताओं, योग्यता, रुचि, आवश्यकता के अनुसार पाठ्यक्रम बनाने पर बल दिया और उसमें ऐसी क्रियाओं के स्थान पर बल दिया जो बालक को स्वानुभव के अवसर प्रदान करें।

4. क्रियाशीलता का सिद्धान्त — डीवी ने पाठ्यक्रम के निर्धारण के लिए क्रियाशीलता के सिद्धान्त पर बल दिया। उन्होंने कहा कि पाठ्यक्रम में उन क्रियाओं का समावेश होना चाहिए जो बालक को अपने मूल्यों के सृजन में सहायता प्रदान करें।

5. लचीलेपन का सिद्धान्त — डीवी के अनुसार पाठ्यक्रम दृढ़ या अपरिवर्तनीय न होकर लचीला होना चाहिए जिससे पाठ्यक्रम जीवन की गतिशीलता एवं विकास के साथ चल सके।

6. सामाजिक अनुभव का सिद्धान्त — पाठ्यक्रम में उन सामाजिक क्रियाओं को स्थान दिया जाय जो समाज की प्रगति के साथ-साथ व्यक्ति के विकास में सहायक हों।

7. एकीकरण का सिद्धान्त — डीवी पाठ्यक्रम को बांटने के पक्ष में नहीं था। वह बालकों को अलग-अलग विषय पढ़ाने के बजाय उस समस्त ज्ञान को प्राप्त करने के लिए प्रोत्साहन देने के पक्ष में था जिसका उस क्रिया से सम्बन्ध है जिसे वह कर रहा है।

डीवी ने अपने पाठ्यक्रम में धार्मिक एवं नैतिक शिक्षा की पूर्ण उपेक्षा की है। उसका मानना है कि इसका विकास तो वह अर्थपूर्ण व सामूहिक क्रियाओं में सक्रिय भाग लेकर कर लेगा।

शिक्षण-विधि—

डीवी ने घिसी-पिटी, परम्परागत विधियों का घोर विरोध किया। उन्होंने ऐसी विधियों पर बल दिया जिनमें बालक क्रिया करके स्वानुभव द्वारा, खोज करके तथा प्रयोग करके शिक्षा प्राप्त करे।

डीवी ने शिक्षण विधि के इन सिद्धान्तों पर बल दिया—

- 1. करके सीखना।
- 2. स्वानुभव द्वारा सीखना।
- 3. प्रयोग द्वारा सीखना।

डीवी के इन सिद्धान्तों एवं विचारों को योजना विधि (Project Method) में किल पैट्रिक ने शामिल कर



इन बिन्दुओं को दर्शाया—

1. समस्यात्मक परिस्थिति उत्पन्न करना।
2. समस्या।
3. सूचना।
4. सम्भावित समाधान।
5. परीक्षण एवं प्रयोग।

अनुशासन — डीवी अनुशासन की परम्परागत धारणा के विरुद्ध थे। उनका बालक के आचरण को कृत्रिम साधनों के द्वारा नियमित करने में कोई विश्वास नहीं था। उन्होंने अनुशासन की स्थापना के लिए सामाजिक जीवन के महत्व पर बल दिया। डीवी विद्यालय में सामाजिक एवं सहयोग क्रियाओं के माध्यम से सामाजिक अनुशासन स्थापित करने के समर्थक हैं।

शिक्षक का स्थान — डीवी ने एजूकेशन ऑफ टुडे में लिखा है — “शिक्षक सदैव परमात्मा का सच्चा देवदूत होता है, वह परमात्मा के राज्य में प्रवेश कराने वाला है।” डीवी की शिक्षा योजना में शिक्षक का महत्वपूर्ण स्थान है। वह बालक या समाज दोनों को अग्रसर करने वाला है। वह बालक व समाज दोनों का पथ प्रदर्शक है।

बालक का स्थान — डीवी अपनी शिक्षा योजना में बालक को केन्द्रीय स्थान देते हैं। वह बालक की स्वतन्त्रता के समर्थक हैं। पाठ्यक्रम को बालक की रुचि, योग्यता व क्षमता के अनुसार बनाने के पक्षधर हैं। बालक को अपने कार्य चुनने, उन्हें पूरा करने, प्रयोग करने, तथा अपने मूल्यों या आदर्शों का निर्माण करने के लिए स्वतन्त्रता देता है।

विद्यालय — डीवी ने अपने समय के प्रचलित विद्यालयों को दोषपूर्ण बताया क्योंकि वे समय के परिवर्तन के अनुकूल नहीं थे। उनमें पुस्तकीय ज्ञान पर बल व बालक के व्यक्तित्व का हनन किया जाता था। अतः उन्होंने क्रियात्मक एवं प्रयोगात्मक विद्यालयों की स्थापना पर बल दिया। उन्होंने अपने प्रयोगात्मक विद्यालय में दुकानदारी, सीना, बुनना, यन्त्रों के प्रयोग, कताई, लकड़ी तथा लुहारगरी के कार्य, खाना पकाना, हस्त कार्य, प्रकृति निरीक्षण, तथा आत्माभिव्यक्ति के लिए विभिन्न क्रियाओं को स्थान दिया।

डीवी के दर्शन की आलोचना—

डीवी के दर्शन ने विपक्ष में निम्नांकित तर्क दिये जा सकते हैं—

1. आध्यात्मिकता का अभाव।

2. सत्य की परिवर्तनशीलता दोषपूर्ण।
3. उपयोगिता पर अत्यधिक बल।
4. शाश्वत मूल्यों की उपेक्षा।
5. धार्मिक शिक्षा का अभाव।
6. नैतिकता सम्बन्धी विचार असन्तोषजनक।
7. ‘प्रत्यक्ष अनुभव’ ही ज्ञान का एक मात्र साधन नहीं।
8. क्रियाशीलता पर अत्यधिक बल।
9. शिक्षा में पूर्व निश्चित उद्देश्यों का अभाव।
10. उचित एवं अनुचित के अन्तर का कोई मापदण्ड नहीं।
11. विषयों के सहसम्बन्ध पर अत्यधिक बल।
12. प्रजातीय अनुभवों की उपेक्षा।

डीवी की देन तथा शिक्षा पर उसका प्रभाव—

शिक्षा तथा दर्शन के क्षेत्र में डीवी ने निम्नांकित योगदान दिया है—

1. दर्शन समाज से उत्पन्न होता है और इसका व्यावहारिक लक्ष्य होता है।
2. सत्य परिवर्तनशील है।
3. सत्य का मूल्य निश्चित नहीं है।
4. शिक्षा — जीवन की तैयारी न होकर स्वयं जीवन है।
5. शिक्षा — एक सामाजिक प्रक्रिया है।
6. शिक्षा — विकास या अभिवृद्धि है।
7. शिक्षा — अनुभवों का पुनर्निर्माण है।
8. स्वानुभव — शिक्षा का एकमात्र आधार है।
9. ज्ञान प्राप्त करने की विधि प्रयोगात्मक है।
10. शिक्षा का प्रमुख कार्य — बालक को ऐसा वातावरण प्रदान करना है जिसमें वह सक्रिय रहकर अपने मूल्यों का निर्माण कर सके तथा सामाजिक प्रगति में सहयोग दे सके।
11. शिक्षा लोकतन्त्रीय समाज का निर्माण करे।
12. शिक्षा का एक कार्य — बालकों को सामाजिक एवं लोकतन्त्रीय व्यवस्था के साथ अनुकूलन करने के लिए योग्य बनाना है।
13. शिक्षा एक सामाजिक एवं मनोवैज्ञानिक आवश्यकता है।
14. विद्यालय एक सामाजिक संस्था है।
15. विद्यालय सामुदायिक जीवन का केन्द्र है। वह समाज तथा उसके वर्तमान जीवन का लघु रूप है। किन्तु



यह शुद्ध, सरलीकृत एवं सन्तुलित होता है।

16. उद्योग केन्द्रित शिक्षा पर बल।

17. सामाजिक अनुशासन पर बल।

डीवी का शिक्षा पर प्रभाव –

डीवी ने आधुनिक शिक्षा पर बहुत प्रभाव डाला। आज शिक्षा में जो प्रवृत्तियाँ – नवीन शिक्षा, प्रगतिशील शिक्षा, क्रियात्मक विद्यालय, क्रिया प्रधान पाठ्यक्रम तथा संगठित इकाई परिलक्षित होती हैं ये सब डीवी के ही विचारों के परिणाम हैं। जैसा कि ये विद्वान कहते हैं—

नैथेन्सन के शब्दों में – “डीवी के शिक्षा सम्बन्धी विचारों ने हमारे मार्ग को प्रशस्त कर दिया है।”

प्रो. बागले कहते हैं— “शिक्षा सम्बन्धी महान नेतृत्व, जिसका सम्पादन डीवी ने 40 वर्ष से अधिक समय तक किया है, वह अत्यन्त सम्मान एवं गरिमा पूर्ण है। शिक्षा क्षेत्र में उसके नेतृत्व ने स्वराष्ट्र की संकुचित सीमाओं को तोड़कर विश्वव्यापी प्रभाव स्थापित किया। वह सच्चे अर्थ में विश्व का नायक था।”

निष्कर्ष –

डीवी की शैक्षिक जगत एवं शिक्षा पर उसके प्रभाव को देखने से स्पष्ट है कि वह आधुनिक युग के महान विचारक एवं शिक्षाशास्त्री थे जिन्होंने विश्व की पर्याप्त समय तक सेवा की। रस्क ने उनके सेवा कार्य के विषय में लिखा

है—

“शिक्षा में हम डीवी की उन सेवाओं के लिए कृतज्ञ हैं जिनके द्वारा उन्होंने ज्ञान के प्राचीन स्थिर आदर्शों के संचय को चुनौती दी और शिक्षा को वर्तमान जीवन की वास्तविकताओं के सम्पर्क में ले आये तथा वह सामान्य सिद्धान्त निर्मित किया कि – शिक्षा और दर्शन को समसामयिक समस्याओं पर चिन्तन करना चाहिए।”

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. शिक्षा की दार्शनिक पृष्ठभूमि – ओढ़, एल. के.।
2. उदीयमान भारतीय समाज में शिक्षक – टण्डन, उमा एवं गुप्ता, अरुणा।
3. शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय आधार – यादव, भोला एवं चुग।
4. जॉन डीवी : एक प्रगतिशील विचारक का चित्रण – गिब्लन, पीटर।
5. जॉन डीवी : लोकतन्त्र और शिक्षा का परिचय – रेनियर, सैमुअल।



ABHINAV GAVESHNA

Multi Disiplinary Quareterly International Refreed/Peer Reviewed Research Journal

I.S.S.N. : 2394-4366

(Multi Disiplinary Quareterly International Refreed/Peer Reviewed Research Journal)

(in Multi Language: Hindi + English + Sanskrit)

‘Abhinav Gaveshna’

Sector-K-444, ‘Shiv Ram Kripa’ World Bank Barra-Kanpur-208027 (U.P.)

Contact- 08896244776, 09335597658,

E-mail: mohittrip@gmail.com

Visit us : www.abhinavgaveshna.com, thegunjan.com

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में डॉ. भीमराव अम्बेडकर के विचार एवं सामाजिक न्याय : एक अध्ययन



— सागर सोनी
असिस्टेन्ट प्रोफेसर —
राजनीति विज्ञान विभाग,
गवर्नमेन्ट कालेज, लाखेरी—
323603, बूँदी, (राजस्थान)

ई. मेल—
ssagarsoni18507@gmail.com

सारांश

वर्तमान परिप्रेक्ष्य में डॉ. भीमराव अम्बेडकर जी के विचार एवं सामाजिक न्याय का वर्णन एक महान सुधारक के रूप में प्रस्तुत है, जिन्होंने तत्कालीन भारतीय समाज में प्रचलित अन्यायपूर्ण व्यवस्था में परिवर्तन तथा आपने सामाजिक न्याय की स्थापना के लिए जबरदस्त प्रयास किए। उन्होंने दलितों, पिछड़ों, अस्पृश्यों के विरुद्ध सदियों से हो रहे अन्याय का न केवल सैद्धान्तिक रूप से विरोध किया अपितु अपने कार्य कलाप, आन्दोलनों के माध्यम से उन्होंने शोषित वर्ग में आत्मबल तथा चेतना जागृत करने का सराहनीय प्रयास किया। इस प्रकार अम्बेडकर का जीवन समर्पित लोगों के लिए सीखने तथा प्रेरणा का नया स्रोत बन गया।

डॉ. भीमराव अम्बेडकर आधुनिक भारत के प्रमुख विधि देता, समाजसुधारक थे। दलितों के मसीहा, समाज सुधारक डॉ. भीमराव अम्बेडकर एक राष्ट्रीय नेता भी थे। उन्होंने कई महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखी जिसमें द अनटचेबल्स हू आर दे?, हू वेयर दी शूदाज, बुद्धा एण्ड हीज धम्मा, पाकिस्तान एण्ड पार्टिशन ऑफ इण्डिया तथा द राइज एण्ड फॉल ऑफ हिन्दू वूमन प्रमुख हैं। इसके अलावा उन्होंने 300 से भी अधिक लेख लिखे। भारत का संविधान भी उन्होंने ही लिखा। सामाजिक भेदभाव व विषमता का पग-पग पर सामना करते हुए अन्त तक वे झुके नहीं। अपने अध्ययन, परिश्रम के बल पर उन्होंने अछूतों को नया जीवन व सम्मान दिया।

अम्बेडकर के विचार —

अम्बेडकर का सम्पूर्ण जीवन भारतीय समाज में सुधार के लिए समर्पित था। अस्पृश्यों तथा दलितों के वे मसीहा थे। उन्होंने सदियों से पद-दलित वर्ग को सम्मानपूर्वक जीने के लिए एक सुस्पष्ट मार्ग दिया। उन्हें अपने विरुद्ध होने वाले अत्याचारों, शोषण, अन्याय तथा अपमान से संघर्ष करने की शक्ति दी। उनके अनुसार— सामाजिक प्रताड़ना राज्य द्वारा दिए जाने वाले दण्ड से भी कहीं अधिक दुःखदाई है। उन्होंने प्राचीन भारतीय ग्रन्थों का विशद अध्ययन कर यह बताने की चेष्टा भी की कि भारतीय समाज में वर्ण व्यवस्था, जाति प्रथा तथा अस्पृश्यता का प्रचलन समाज में कालान्तर में आई विकृतियों के कारण उत्पन्न हुई है, न कि यह यहाँ के समाज में प्रारम्भ से ही विद्यमान थी। उन्होंने दलित वर्ग पर होने वाले अन्याय का ही विरोध नहीं किया अपितु उनमें आत्म-गौरव, स्वावलम्बन, आत्मविश्वास, आत्म सुधार तथा आत्म विश्लेषण करने की शक्ति प्रदान की। दलित उद्धार के लिए उनके द्वारा किए गए प्रयास किसी भी दृष्टिकोण से आधुनिक भारत के निर्माण में भुलाये



नहीं जा सकते। पं. नेहरू के शब्दों में— 'डॉ. अम्बेडकर, हिन्दू समाज की दमनकारी प्रवृत्तियों के विरुद्ध किए गए विद्रोह का प्रतीक थे।'।

वर्ण—व्यवस्था का विरोध —

भारतीय सामाजिक संगठन का आधार चतुर्वर्ण व्यवस्था रहा है। इस आधार पर समाज को अपने कार्य के आधार पर चार भागों में विभाजित कर रखा था। अम्बेडकर ने इस व्यवस्था को अवैज्ञानिक अत्याचारपूर्ण, संकीर्ण, गरिमाहीन बताते हुए इसकी कटु आलोचना की। उनके अनुसार यह श्रम के विभाजन पर आधारित न होकर श्रमिकों के विभाजन पर आधारित था।

उनके अनुसार— भारतीय समाज की चतुर्वर्ण व्यवस्था यूनानी विचारक प्लेटो की सामाजिक व्यवस्था के बहुत निकट है। प्लेटो ने व्यक्ति की कुछ विशिष्ट योग्यताओं के आधार पर समाज का विभाजन करते हुए उसे तीन भागों में विभाजित किया। अम्बेडकर ने इन दोनों की व्यवस्थाओं की जोरदार आलोचना की तथा स्पष्ट किया कि क्षमता के आधार पर व्यक्तियों का सुस्पष्ट विभाजन ही अवैज्ञानिक तथा असंगत है।

अम्बेडकर जी का मत था कि उन्नत तथा कमजोर वर्गों में जितना संघर्ष भारत में है, वैसा विश्व के किसी अन्य देश में नहीं है। ऐतिहासिक आधारों पर अम्बेडकर ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि शूद्रों की उत्पत्ति तथा हीनता का कारण वे स्वयं न होकर ब्राह्मणों का जान-बूझकर किया गया प्रयास था।

जाति प्रथा का विरोध —

अम्बेडकर जी ने भारत में जाति—व्यवस्था की प्रमुख विशेषताओं और लक्षणों को स्पष्ट करने का प्रयास किया जिनमें प्रमुख निम्न हैं— चातुर्वर्ण पदसोपानीय रूप में वर्गीकृत है। जातीय आधार पर वर्गीकृत इस व्यवस्था को व्यवहार में व्यक्तियों द्वारा परिवर्तित करना असम्भव है।

इस व्यवस्था में कार्यकुशलता की हानि होती है, क्योंकि जातीय आधार पर व्यक्तियों के कार्यों का पूर्व में ही निर्धारण हो जाता है। यह निर्धारण भी उनके प्रशिक्षण अथवा वास्तविक क्षमता के आधार पर न होकर जन्म तथा माता पिता के सामाजिक स्तर के आधार पर होता है।

इस व्यवस्था से सामाजिक स्थैतिकता पैदा होती है, क्योंकि कोई भी व्यक्ति अपने वंशानुगत व्यवस्था का अपनी स्वेच्छा से परिवर्तन नहीं कर सकता। यह व्यवस्था संकीर्ण प्रवृत्तियों को जन्म देती है, क्योंकि हर व्यक्ति अपनी

जाति के अस्तित्व के लिए अधिक जागरूक होता है, अन्य जातियों के सदस्यों से अपने सम्बन्ध दृढ़ करने की कोई भावना नहीं होती है। नतीजन उनमें राष्ट्रीय जागरूकता की भी कमी उत्पन्न होती है। जाति के पास इतने अधिकार हैं कि वह अपने किसी भी सदस्य से उसके नियमों के उल्लंघन पर दण्डित या समाज से बहिष्कृत कर सकती है। अन्तर्जातीय विवाह इस व्यवस्था में निषेध होते हैं। सामाजिक विद्वेष और घृणा का प्रसार इस व्यवस्था की सबसे बुरी विशेषता है।

इस प्रकार अम्बेडकर ने यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि जाति व्यवस्था भारतीय समाज की एक बहुत बड़ी विकृति है, जिसके दुखद भाव समाज के लिए बहुत ही घातक है। जाति व्यवस्था के कारण लोगों में एकता की भावना का अभाव है, अतः भारतीयों का किसी एक विषय पर जनमत तैयार नहीं हो सकता। समाज कई भागों में विभक्त हो गया। उनके अनुसार जाति व्यवस्था न केवल हिन्दू समाज को दुष्प्रभावित नहीं किया अपितु भारत के राजनीतिक, आर्थिक तथा नैतिक जीवन में भी जहर घोल दिया।

कार्यपालिका में पर्याप्त प्रतिनिधित्व की मांग —

डॉ. अम्बेडकर का मानना था कि दलित वर्ग को नीति निर्माण के कार्यों में उचित अवसर के लिए मंत्रिमण्डलों में भी पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। उनको भय था कि बहुमत के शासन में दलित वर्ग के हितों तथा अधिकारों की उपेक्षा होने की संभावना हो सकती है। किन्तु यदि दलित वर्ग को कार्यपालिका में जब पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलेगा तो वह अपने अधिकारों तथा हितों के प्रति होने वाली उपेक्षा को समाप्त करने में सक्षम होगा तथा अपने विकास के लिए विशेष नीतियाँ का निर्माण कर रचनात्मक कार्यक्रमों को शासन के माध्यम से सफलतापूर्वक क्रियान्वित किया जा सकता है।

अम्बेडकर को अस्पृश्य लोगों के प्रति हिन्दू समाज के व्यवहार से काफी ठेस लगी, अतः वे इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि दलितों को अपने सम्मान को बचाए रखने के लिए हिन्दू धर्म को अन्तिम हथियार के रूप में त्याग देना चाहिए। किन्तु उनका मानना था कि भारत में इस्लाम और ईसाई धर्मों का भी दलितों के प्रति दृष्टिकोण न्यायपूर्वक नहीं है, अतः दलितों को भारत में प्रचलित एक अन्य धर्म बौद्ध धर्म को अपना लेना चाहिए।

उनका विश्वास था कि बौद्ध धर्म सामाजिक



असमानता को समाप्त कर भातृत्व की भावना विकसित करता है। यही कारण था कि अम्बेडकर ने स्वयं अपने जीवन के अन्तिम दिनों में बौद्ध धर्म ग्रहण कर लिया था। इस सन्दर्भ में अम्बेडकर के विचार महात्मा गाँधी के विचारों से मेल नहीं खाते थे। महात्मा गाँधी का यह दृढ़ विश्वास था कि धर्म परिवर्तन करने मात्र से दलित वर्गों की स्थिति में वास्तविक सुधार होगा ही, इसकी कोई निश्चितता नहीं है।

नारी गरिमा का समर्थन —

अम्बेडकर भारतीय समाज में स्त्रियों की हीन दशा से काफी क्षुब्ध थे। उन्होंने उस साहित्य की कटु आलोचना की जिसमें स्त्रियों के प्रति भेदभाव का दृष्टिकोण अपनाया गया। उन्होंने दलितों के उत्थान एवं प्रगति के लिए भी नारी समाज का उत्थान आवश्यक माना। उनका मानना था कि स्त्रियों के सम्मानपूर्वक तथा स्वतंत्र जीवन के लिए शिक्षा बहुत महत्वपूर्ण है। अम्बेडकर ने हमेशा स्त्री-पुरुष समानता का व्यापक समर्थन किया।

यही कारण है कि उन्होंने स्वतंत्र भारत के प्रथम विधिमन्त्री रहते हुए 'हिन्दू कोड बिल' संसद में प्रस्तुत करते समय हिन्दू स्त्रियों के लिए न्याय सम्मत व्यवस्था बनाने के लिए इस विधेयक में व्यापक प्रावधान रखे। भारतीय संविधान के निर्माण के समय में भी उन्होंने स्त्री-पुरुष समानता को संवैधानिक दर्जा प्रदान करवाने के गम्भीर प्रयास किए।

अम्बेडकर के सामाजिक चिन्तन में अस्पृश्यों, दलितों तथा शोषित वर्ग के उत्थान के लिए काफी दर्शन झलकता है। वे उनके उत्थान के माध्यम से एक ऐसा आदर्श समाज स्थापित करना चाहते थे जिसमें समानता, स्वतंत्रता तथा भातृत्व के तत्व समाज के आधारभूत सिद्धान्त हों।

दलितों की शिक्षा, संघर्ष और संगठन पर बल —

अम्बेडकर का विश्वास था कि दलितों के उत्थान में केवल उच्च वर्णों की सहानुभूति और सद्भावना ही पर्याप्त नहीं है। उनका मत था कि दलितों का तो वास्तव में तब उत्थान होगा जब कि वे स्वयं सक्रिय तथा जागृत होंगे। इसलिये उन्होंने घोषणा की कि शिक्षित बनो, आन्दोलन चलाओ और संगठित रहो।

दलित वर्ग की शिक्षा के बारे में अम्बेडकर का मत था कि दलितों के अत्याचार तथा उत्पीड़न सहन करने तथा वर्तमान परिस्थितियों को सन्तोषपूर्ण मानकर स्वीकार करने की प्रवृत्ति का अन्त करने के लिए उनमें शिक्षा का प्रसार

आवश्यक है। शिक्षा के माध्यम से ही उन्हें इस बात का आभास होगा कि विश्व कितना प्रगतिशील है तथा वे कितने पिछड़े हुए हैं। उनका मानना था कि दलितों को अन्याय, अपमान तथा दबाव को सहन करने के लिए मजबूर किया जाता है।

वे इस बात से दुखी थे कि दलित इस प्रकार की परिस्थितियों को बिना कुछ कहे स्वीकार कर लेते हैं। वे संख्या में अधिक होने के बावजूद उत्पीड़न को सहन कर लेते हैं, जबकि यदि एक अकेली चीटी पर भी पैर रख दिया जाए तो वह प्रतिरोध करते हुए काट डालती है। इन परिस्थितियों को समाप्त करने के लिए अम्बेडकर दलितों में शिक्षा के प्रसार को बहुत महत्वपूर्ण मानते थे। उन्हें केवल औपचारिक शिक्षा ही नहीं अपितु अनौपचारिक शिक्षा भी दी जानी चाहिए।

व्यवस्थापिका में दलित वर्ग के पर्याप्त प्रतिनिधित्व का समर्थन —

अम्बेडकर का मानना था दलित वर्ग को अपने हितों की रक्षा के लिए विधायी कार्यों को अपने पक्ष में प्रभावित करने के लिए राजनीतिक सत्ता में पर्याप्त प्रतिनिधित्व मिलना चाहिए। अतः उनका सुझाव था कि केन्द्रीय तथा प्रान्तीय विधान मंडलों में दलितों की भागीदारी हेतु पर्याप्त प्रतिनिधित्व के लिए कानून बनाया जाना चाहिए।

इसी प्रकार उनका मानना था कि निर्वाचन कानून बनाकर यह व्यवस्था की जानी चाहिए कि प्रथम दस वर्ष तक दलित वर्ग के वयस्क मताधिकारियों द्वारा पृथक निर्वाचन के माध्यम से अपने प्रतिनिधि का निर्वाचन किया जाना चाहिए तथा बाद में दलित वर्ग हेतु आरक्षित स्थानों पर सम्बन्धित निर्वाचन क्षेत्र के सभी वयस्क मताधिकारियों द्वारा निर्वाचन किया जाना चाहिए।

सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व की मांग —

अम्बेडकर का मत था कि दलित वर्ग के उत्थान के लिए यह भी आवश्यक है कि उन्हें सरकारी सेवाओं में पर्याप्त प्रतिनिधित्व दिया जाना चाहिए। उनके अनुसार इसके लिए दलित वर्ग हेतु आरक्षण की व्यवस्था की जानी चाहिए। उनके अनुसार दलित वर्ग को सेवाओं में पर्याप्त स्थान दिलाए जाने के लिए सरकार को विशेष संवैधानिक तथा कानूनी प्रावधान करने चाहिए।

अस्पृश्यता का विरोध —

अम्बेडकर ने हिन्दू समाज में प्रचलित अस्पृश्यता



को अन्यायपूर्वक मानते हुए प्रबल विरोध किया। उनके अनुसार ब्राह्मणों और शूद्र शासकों में अन्तर्द्वन्द्व के कारण शूद्रों का जन्म हुआ जबकि प्रारम्भ में ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीन वर्ण ही हुआ करते थे। शनैः-शनैः ब्राह्मणवाद का समाज में वर्चस्व स्थापित हो गया तथा समाज में उनके द्वारा प्रतिपादित नियमों को मानना आवश्यक माना गया।

इन नियमों को न मानने वालों को हेय माना गया। इन्होंने विभिन्न ऐतिहासिक उदाहरणों से यह स्पष्ट करने का प्रयास किया कि अस्पृश्यता के बने रहने के पीछे कोई तार्किक, सामाजिक अथवा व्यावसायिक आधार नहीं है। अतः उन्होंने इस व्यवस्था का जोरदार शब्दों में खण्डन किया। उनका दृष्टिकोण था कि यदि हिन्दू समाज का उत्थान करना है तो अस्पृश्यता का जड़ से निराकरण आवश्यक है।

अम्बेडकर ने अस्पृश्यता के निराकरण के लिए केवल सैद्धान्तिक दृष्टिकोण ही प्रस्तुत नहीं किया अपितु उन्होंने अपने विभिन्न आन्दोलनों व कार्यों से लोगों में चेतना जागृत करने एवं इसके निराकरण के लिए विभिन्न सुझाव भी प्रेरित किए। उन्होंने अस्पृश्यता निराकरण के लिए सामाजिक, राजनीतिक, आर्थिक, नैतिक, शैक्षणिक आदि स्तरों पर रचनात्मक कार्यक्रम तथा संगठित अभियान का आग्रह किया। अस्पृश्यों तथा दलितों के उद्धार के लिए अम्बेडकर के कुछ महत्वपूर्ण सुझाव को इस प्रकार परिलक्षित किया जा सकता है—

हिन्दू समाज की मान्यताओं में परिवर्तन पर बल —

अम्बेडकर हिन्दू समाज तथा हिन्दू धर्म की उन आधारभूत मान्यताओं के विरुद्ध थे, जिनके कारण अस्पृश्यता जैसी संकीर्णता का जन्म होता है। उनका मानना था कि हिन्दू समाज में स्वतंत्रता, समानता तथा न्याय पर आधारित व्यवस्था स्थापित करने के लिए कठोर नियमों में संशोधन आवश्यक है। उन्होंने इसके लिए धार्मिक कार्यों के लिए ब्राह्मणों के एकाधिकार को समाप्त करने का आग्रह किया। उनके अनुसार उन शास्त्रों को अधिकारिक नहीं माना जाना चाहिए जो सामाजिक अन्याय का समर्थन करते हैं।

अन्तर्जातीय विवाह का समर्थन —

अम्बेडकर का मानना था कि हिन्दू समाज के उत्थान के लिए जातीय बन्धन समाप्त किया जाना आवश्यक है। उनके मत में इसके लिए यह आवश्यक है कि समाज के विभिन्न जातियों के लोगों के मध्य अन्तर्जातीय

विवाह होने लगेगा तो जाति व्यवस्था का बंधन स्वतः शिथिल होने लगेगा, क्योंकि विभिन्न जातियों के मध्य रक्त के मिलने से अपनत्व की भावना पैदा होगी। उन्होंने स्वयं अन्तर्जातीय विवाह तथा सहभोज को प्रोत्साहित किया। जब कभी इस प्रकार के अवसर उन्हें मिलते तो वे उनमें अवश्य ही सम्मिलित होते थे।

अम्बेडकर एक महान सुधारक थे, जिन्होंने तत्कालीन भारतीय समाज में प्रचलित अन्यायपूर्ण व्यवस्था में परिवर्तन तथा सामाजिक न्याय की स्थापना के जबरदस्त प्रयास किए।

उन्होंने दलितों, पिछड़ों, अस्पृश्यों के विरुद्ध सदियों से हो रहे अन्याय का न केवल सैद्धान्तिक रूप से विरोध किया अपितु अपने कार्य कलाप, आन्दोलनों के माध्यम से उन्होंने शोषित वर्ग में आत्मबल तथा चेतना जागृत करने का सहायनीय प्रयास किया। इस प्रकार अम्बेडकर का जीवन समर्पित लोगों के लिए सीखने तथा प्रेरणा का नया स्रोत बन गया।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. देशबन्धु . कॉम . इन ।
2. डॉ. भीमराव अम्बेडकर — सामाजिक न्याय, डॉ. एल. सी. अग्रवाल ।
3. सामाजिक न्याय पर अम्बेडकर के विचार — मोहम्मद नौशाद ।



सरदार पटेल और भारतीय एकता का संग्राम

सारांश



— डॉ. हरीश कुमार सिंह
एसोसिएट प्रोफेसर —
इतिहास विभाग,
रामस्वरूप ग्रामोद्योग महाविद्यालय,
पुखरायों-209111, कानपुर देहात
(उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
harishcsjmu09@gmail.com

15 अगस्त, 1947 को जब भारत ने अंग्रेजों की दो शताब्दियों की गुलामी से मुक्ति प्राप्त की, तब वह स्वतंत्र तो हुआ, किन्तु एकीकृत राष्ट्र के रूप में नहीं। भारत के समक्ष सबसे बड़ी चुनौती थी राष्ट्रीय एकता की स्थापना। ब्रिटिश साम्राज्य ने देश को सैकड़ों छोटी-बड़ी रियासतों में बाँट दिया था, जिनमें से लगभग 562 रियासतें स्वतंत्र भारत में शामिल होने को बाध्य नहीं थीं। कई रियासतों के शासक अपने को स्वतंत्र राष्ट्र घोषित करने की योजना बना रहे थे, तो कुछ पाकिस्तान से जुड़ने के इच्छुक थे। ऐसे जटिल और संकटपूर्ण समय में भारत को एक मजबूत नेतृत्व की आवश्यकता थी, जो इस राष्ट्रीय संकट का समाधान निकाल सके। इस ऐतिहासिक क्षण में सरदार वल्लभभाई पटेल भारत की एकता और अखण्डता के अग्रदूत बनकर सामने आए। स्वतंत्रता संग्राम में गांधी जी के सशक्त सहयोगी और कांग्रेस के वरिष्ठ नेता पटेल न केवल एक कुशल संगठक थे, बल्कि एक दूरदर्शी राजनीतिज्ञ भी थे। उन्होंने स्वतंत्रता को केवल राजनीतिक आजादी तक सीमित नहीं रखा, बल्कि उसे राष्ट्र-निर्माण के व्यापक संदर्भ में देखा। सरदार पटेल ने कूटनीति, दृढ़ता और सैन्य विकल्प जैसे सभी साधनों का संयोजन कर रियासतों को भारत में मिलाने का अभियान चलाया। वे केवल एक राजनेता नहीं, बल्कि आधुनिक भारत के वास्तुकार बन गए। उनकी कार्यशैली, निर्णय-क्षमता और राष्ट्रीय निष्ठा ने उन्हें लौहपुरुष की उपाधि दिलाई। उन्होंने यह सिद्ध किया कि राजनीतिक इच्छाशक्ति और संगठन शक्ति के बल पर असंभव को भी संभव बनाया जा सकता है। इसलिए उन्हें भारतीय एकता का शिल्पी कहा जाना पूर्णतः न्यायसंगत है। यदि पटेल न होते, तो आज का भारत वैसा नहीं होता जैसा हम जानते हैं।

सरदार वल्लभभाई पटेल का जन्म 31 अक्टूबर, 1875 को गुजरात के खेड़ा जिले के नडियाद नामक स्थान पर एक साधारण कृषक परिवार में हुआ। उनके पिता झवेरभाई पटेल एक देशभक्त और स्वभाव से कठोर व्यक्ति थे, जिन्होंने झाँसी की रानी लक्ष्मीबाई की सेना में सेवा दी थी। माता लाडबाई धार्मिक विचारों वाली थीं, जिनसे वल्लभभाई को नैतिक संस्कार मिले। बचपन से ही दृढ़ निश्चयी, साहसी और आत्मनिर्भर वल्लभभाई ने विषम परिस्थितियों में भी शिक्षा प्राप्त की। उन्होंने प्रारम्भिक शिक्षा गुजरात में प्राप्त की और युवावस्था में वकालत की पढ़ाई के लिए इंग्लैंड गए। वहाँ से लौटने के बाद वे एक सफल और प्रसिद्ध वकील बने। लेकिन देश की दयनीय स्थिति ने उनके अन्तर्मन को झकझोर दिया। 1917 के आस-पास जब महात्मा गांधी भारतीय राजनीति में उभरे और उन्होंने सत्याग्रह तथा अहिंसा के सिद्धान्तों के माध्यम



से जन चेतना का नवजागरण किया, तो पटेल उनके संपर्क में आए और गहराई से प्रभावित हुए। स्वतंत्रता आन्दोलन में सरदार पटेल की सक्रिय भागीदारी 1918 के खेड़ा सत्याग्रह से शुरू हुई, जिसमें उन्होंने किसानों की समस्याओं को मुखर रूप से उठाया।¹ किन्तु 1928 का बारदोली सत्याग्रह उनके राजनीतिक जीवन की निर्णायक उपलब्धि बनकर उभरा। जब ब्रिटिश सरकार ने किसानों पर अन्यायपूर्ण करवृद्धि लागू की, तो पटेल ने वहाँ का नेतृत्व संभाला। उन्होंने अनुशासित, अहिंसक और संगठित जन आन्दोलन का सफल संचालन किया। उनकी इस भूमिका के कारण बारदोली की महिलाओं ने उन्हें 'सरदार' की उपाधि दी।² बारदोली आन्दोलन ने न केवल पटेल को राष्ट्रीय नेता के रूप में स्थापित किया, बल्कि यह उनके अद्वितीय नेतृत्व, संगठन क्षमता और दृढ़ता का परिचायक बन गया, जिसने उन्हें स्वतंत्रता संग्राम के अग्रणी नेताओं में सम्मिलित कर दिया।

सरदार वल्लभभाई पटेल भारतीय स्वतंत्रता संग्राम के उन प्रमुख नेताओं में थे जिन्होंने केवल आन्दोलनात्मक राजनीति तक ही सीमित न रहते हुए संगठन, रणनीति और प्रशासनिक कौशल में भी असाधारण योगदान दिया। वे भारतीय राष्ट्रीय कांग्रेस के एक वरिष्ठ नेता और गांधीजी के अत्यन्त विश्वस्त सहयोगी थे। उनके नेतृत्व और निर्णय क्षमता ने कांग्रेस को जमीनी स्तर पर एक सुदृढ़ और अनुशासित संगठन के रूप में स्थापित किया। पटेल का राष्ट्रीय मंच पर उभार 1928 के बारदोली सत्याग्रह के बाद तेजी से हुआ और उन्होंने जल्द ही कांग्रेस के भीतर एक निर्णायक भूमिका निभानी शुरू कर दी। उन्होंने 1930 में सविनय अवज्ञा आन्दोलन में सक्रिय भूमिका निभाई, जिसमें नमक कानून के विरोध में जनता को संगठित कर ब्रिटिश शासन की नींव को चुनौती दी गई। इस आन्दोलन के दौरान सरदार पटेल को जेल भी जाना पड़ा, किन्तु उनका मनोबल और जनता के प्रति विश्वास कभी नहीं डगमगाया। 1942 में जब महात्मा गांधी ने भारत छोड़ो आन्दोलन का आह्वान किया, तब सरदार पटेल ने बिना किसी संकोच के इस ऐतिहासिक आन्दोलन का नेतृत्व किया।³ इस आन्दोलन के तहत उन्होंने ब्रिटिश सत्ता को यह स्पष्ट संकेत दिया कि भारत अब गुलामी की बेड़ियों को और अधिक सहन करने को तैयार नहीं है। उन्होंने जनता को अहिंसक ढंग से क्रांति के लिए प्रेरित किया और समर्पण के

साथ जेल यात्राएँ कीं। सरदार पटेल न केवल एक आन्दोलनकारी थे, बल्कि कांग्रेस के अन्दर अनुशासन, संगठन और नीति निर्धारण में भी उनकी गहरी भूमिका रही। वे कांग्रेस के वास्तविक प्रशासक और रणनीतिक मस्तिष्क माने जाते थे, जिन्होंने स्वतंत्रता आन्दोलन को केवल एक जनान्दोलन नहीं, बल्कि एक सुनियोजित राष्ट्र-निर्माण प्रक्रिया के रूप में देखा। 15 अगस्त, 1947 को भारत को अंग्रेजों से स्वतंत्रता तो मिली, लेकिन देश की राजनीतिक एकता अभी अधूरी थी। ब्रिटिश भारत के साथ-साथ 562 रियासतें भी अस्तित्व में थीं, जिन्हें भारत या पाकिस्तान में विलय करने अथवा स्वतंत्र रहने का अधिकार था। यदि इन रियासतों को स्वतंत्र छोड़ दिया जाता, तो भारत अनेक टुकड़ों में बंटा हुआ होता और राष्ट्रीय एकता केवल स्वप्न बनकर रह जाती। ऐसे संकटपूर्ण समय में सरदार वल्लभभाई पटेल ने राज्य विभाग के पहले मंत्री के रूप में कार्यभार संभालकर इतिहास की सबसे बड़ी राजनीतिक एकता प्रक्रिया को सफलतापूर्वक पूरा किया।⁴

सरदार पटेल ने इस कठिन कार्य के लिए एक त्रिस्तरीय रणनीति अपनाई लोभ, भय और संवाद। उन्होंने एक ओर रियासतों को भारत में शामिल होने के लाभ बताए, तो दूसरी ओर उन्हें चेताया कि यदि वे विलय नहीं करेंगी, तो सरकार सख्त कदम उठाने को बाध्य होगी। इस कार्य में उन्हें वरिष्ठ प्रशासक वी. पी. मेनन का पूरा सहयोग मिला। दोनों ने मिलकर इंस्ट्रूमेंट ऑफ एक्सेशन (विलय पत्र)⁵ तैयार किया, जिसके तहत अधिकांश रियासतों ने स्वेच्छा से भारत में विलय स्वीकार कर लिया। हालांकि कुछ रियासतें विशेष चुनौती बनकर उभरीं। जैसे—जूनागढ़, हैदराबाद, कश्मीर, भोपाल और त्रावणकोर। जूनागढ़ का नवाब मुस्लिम था लेकिन राज्य की जनता हिन्दूबहुल थी। नवाब पाकिस्तान में विलय चाहता था, लेकिन जनमत संग्रह और सैनिक दबाव के माध्यम से पटेल ने इसे भारत में सम्मिलित किया। भोपाल के नवाब ने विलय में टालमटोल की लेकिन अंततः समझाने-बुझाने से वह भारत में शामिल हो गया। त्रावणकोर ने स्वतंत्र राष्ट्र बनाने की घोषणा की थी, लेकिन प्रभावी कूटनीति से उसे मनाया गया। सबसे जटिल मामला हैदराबाद का था। निजाम हैदराबाद एक स्वतंत्र इस्लामिक राज्य बनाना चाहता था। सरदार पटेल ने कई बार समझौते का प्रयास किया, लेकिन जब निजाम ने रजाकारों के माध्यम से



हिंसा और विद्रोह को बढ़ावा दिया, तब सितम्बर, 1948 में ऑपरेशन पोलो के नाम से सैन्य कार्रवाई की गई। यह एक पाँच दिवसीय शांतिपूर्ण सैन्य अभियान था, जिसके बाद हैदराबाद का भारत में विलय हुआ।⁶

इस प्रक्रिया में सरदार पटेल की राजनीतिक दूरदर्शिता, प्रशासनिक समझ और अडिग राष्ट्रभक्ति ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई। वे बिना रक्तपात के अधिकांश रियासतों को भारत में मिलाने में सफल रहे। यह अपने आपमें विश्व इतिहास की अनूठी घटना है। उनके नेतृत्व ने यह सुनिश्चित किया कि स्वतंत्र भारत केवल भौगोलिक रूप से ही नहीं, बल्कि राजनीतिक रूप से भी अखण्ड राष्ट्र बन सके। सरदार पटेल के इस महान कार्य ने उन्हें भारतीय एकता का शिल्पी बना दिया और आज भी उनकी यह उपलब्धि राष्ट्र की सबसे बड़ी प्रशासनिक और रणनीतिक विजय मानी जाती है।⁷

भारत की स्वतंत्रता के समय जम्मू-कश्मीर एक संवेदनशील और विवादित रियासत के रूप में सामने आया। प्रारम्भ में सरदार वल्लभभाई पटेल इस रियासत के विलय को लेकर उतने सक्रिय नहीं थे क्योंकि वे इसे एक प्राकृतिक रूप से भारत से जुड़ा हुआ हिस्सा मानते थे। उनका ध्यान हैदराबाद, जूनागढ़ और अन्य जटिल रियासतों पर केन्द्रित था। लेकिन जब अक्टूबर, 1947 में पाकिस्तान ने कबायली लड़ाकों के माध्यम से कश्मीर पर आक्रमण किया, तब सरदार पटेल ने तत्काल और कठोर सैन्य कार्रवाई की जोरदार वकालत की। हालाँकि उस समय प्रधानमंत्री नेहरू और पटेल के दृष्टिकोणों में मतभेद उभर कर आए नेहरू इस मामले को संयम और अन्तर्राष्ट्रीय स्तर पर सुलझाने के पक्षधर थे, जब कि पटेल तत्काल प्रतिकार और निर्णायक कदम के पक्ष में थे। फिर भी दोनों नेताओं ने राष्ट्रहित को सर्वोपरि मानते हुए एकजुट होकर कार्य किया। पटेल ने न केवल कश्मीर की रक्षा में निर्णायक भूमिका निभाई, बल्कि सीमांत क्षेत्रों की सुरक्षा को मजबूत करने के लिए प्रशासनिक पुनर्गठन और सैन्य ढाँचे को सुदृढ़ बनाने की दिशा में महत्वपूर्ण योगदान दिया। उनकी दृष्टि में राष्ट्र की एकता और सीमाओं की सुरक्षा सर्वोपरि थी, जिसे उन्होंने अपने कार्यों से सिद्ध कर दिखाया।

स्वतंत्रता प्राप्ति के पश्चात भारत के समक्ष न केवल राजनीतिक एकता की चुनौती थी, बल्कि प्रशासनिक एकरूपता और सरकारी व्यवस्था की मजबूती भी एक बड़ी आवश्यकता थी। देश की विविधता, क्षेत्रीयता और

नवनिर्मित शासन प्रणाली को स्थायित्व देने के लिए एक सशक्त, अनुशासित और अखिल भारतीय दृष्टिकोण से संचालित प्रशासनिक ढाँचे की आवश्यकता थी। इस दिशा में सरदार वल्लभभाई पटेल की भूमिका अत्यन्त निर्णायक रही। पटेल ने यह भलीभाँति समझा कि यदि राष्ट्र को एकसूत्र में बाँधकर उसकी निरन्तरता को सुनिश्चित करना है, तो भारतीय प्रशासनिक सेवा और भारतीय पुलिस सेवा जैसी अखिल भारतीय सेवाओं की स्थापना आवश्यक है। प्रारम्भ में जब इन सेवाओं को बनाए रखने का प्रस्ताव आया, तो कई नेताओं ने इन्हें औपनिवेशिक अवशेष मानते हुए समाप्त करने की सिफारिश की, किन्तु सरदार पटेल ने इसे सख्ती से खारिज किया। उन्होंने इन सेवाओं को राष्ट्र की रीढ़ कहा और इसे नए भारत की प्रशासनिक नींव का अभिन्न अंग बनाया।⁸ पटेल का स्पष्ट मत था कि संघीय ढाँचे की सफलता केन्द्र और राज्यों के बीच सन्तुलन तथा अनुशासित सेवाओं पर निर्भर करती है। उन्होंने सशक्त केन्द्र की स्थापना का समर्थन किया ताकि राष्ट्र की अखण्डता, सुरक्षा और विकास को प्राथमिकता दी जा सके। सरदार पटेल का यह दृष्टिकोण केवल प्रशासनिक व्यवस्था तक सीमित नहीं था, बल्कि यह राष्ट्र के सामाजिक और राजनीतिक समन्वय को सुनिश्चित करने की एक दूरदर्शी पहल थी। उनकी इसी दूरदृष्टि ने भारत को एक ऐसी प्रशासनिक व्यवस्था प्रदान की, जो आज भी उसकी अखण्डता और प्रगति का आधार है।

यद्यपि सरदार पटेल को भारतीय एकता का शिल्पी कहा जाता है, फिर भी कुछ आलोचकों ने उनके कार्यों को अति केन्द्रीयता की प्रवृत्ति के रूप में देखा। उनका प्रशासनिक दृष्टिकोण केन्द्र को अधिक शक्तिशाली बनता प्रतीत हुआ, जिससे राज्यों की स्वायत्तता पर प्रश्न उठे। कश्मीर मुद्दे पर नेहरू और पटेल के बीच मतभेद भी स्पष्ट थे, विशेषकर नीतिगत दिशा और अन्तर्राष्ट्रीयकरण को लेकर। इसके अतिरिक्त, गोवा और पाण्डिचेरी जैसे उपनिवेश उनके जीवन काल में भारत में सम्मिलित नहीं हो सके, जो उनकी एकता परियोजना की अपूर्णता का सूचक भी माना गया। सरदार वल्लभभाई पटेल की विरासत केवल ऐतिहासिक संदर्भों तक सीमित नहीं है, बल्कि वह आज भी भारत की राजनीतिक, प्रशासनिक और राष्ट्रीय एकता की नींव के रूप में प्रासंगिक है। उन्होंने जिस प्रकार से सैकड़ों रियासतों का शांतिपूर्ण एकीकरण किया, वह विश्व इतिहास की अनूठी उपलब्धि मानी जाती है। भारत



की एकता, अखण्डता और प्रशासनिक संरचना को दिशा देने वाला उनका दृष्टिकोण आज भी नीति-निर्माताओं के लिए प्रेरणा का स्रोत है। सरदार पटेल ने जिन अखिल भारतीय सेवाओं की कल्पना की जैसे IAS और IPS वहीं आज भी शासन प्रणाली के मजबूत स्तम्भ बने हुए हैं। केन्द्र और राज्यों के बीच समन्वय, सीमाओं की सुरक्षा, और शासन की अखण्डता उनके सिद्धान्तों पर आधारित है। सरकार द्वारा 2014 में गुजरात के केवड़िया में स्टैच्यू ऑफ यूनिटी का अनावरण किया जो विश्व की सबसे ऊँची प्रतिमा है। सरदार पटेल के योगदान को राष्ट्र की श्रद्धांजलि है। उनके जन्मदिन (31 अक्टूबर) को राष्ट्रीय एकता दिवस के रूप में मनाना उनकी सोच और कार्यों की वर्तमान समय में प्रासंगिकता को पुष्ट करता है। वास्तव में, सरदार पटेल का जीवन समर्पण, संगठन और राष्ट्र-निर्माण की प्रेरक कथा है, जो भारत के भविष्य को भी दिशा देता है। सरदार पटेल की दृष्टि, संगठन क्षमता और दृढ़ संकल्प ने भारत को बिखरने से बचाया। उनकी राजनीतिक दूरदर्शिता ने यह सुनिश्चित किया कि भारत न केवल आजाद हो, बल्कि एक अखण्ड राष्ट्र के रूप में खड़ा हो। वे केवल स्वतंत्रता सेनानी ही नहीं, बल्कि एक राष्ट्र-निर्माता थे, जिनकी उपेक्षा भारतीय इतिहास के साथ अन्याय होगी।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. राजमोहन गांधी – पटेल एक जीवन, नवजीवन प्रकाशन,

अहमदाबाद, 1993, पृष्ठ संख्या – 76–80।

2. बिपिनचन्द्र – आधुनिक भारत का इतिहास, ओरिएंट ब्लैक स्वान, नई दिल्ली, 2004, पृष्ठ संख्या – 241–243।
3. बिपिनचन्द्र – भारत का स्वतंत्रता संग्राम, नेशनल बुक ट्रस्ट, नई दिल्ली, 2004, पृष्ठ संख्या – 429–432।
4. वी. पी. मेनन – The Story of the Integration of the Indian States, Orient Longman, New Delhi, 1956, Page No. 105–115।
5. वी. पी. मेनन – The Story of the Integration of the Indian States, Orient Longman, New Delhi, 1956, Page No. 167–185.
6. राजमोहन गांधी – पटेल एक जीवन, नवजीवन प्रकाशन, अहमदाबाद, 1993, पृष्ठ संख्या – 372–385।
7. बलराज मधोक – सरदार पटेल निर्माता राष्ट्र के, प्रकाशन विभाग, भारत सरकार, नई दिल्ली, 2001, पृष्ठ संख्या – 210–215।
8. ए. एल. बनर्जी – The Constitution of India : A Political-Legal Study, Orient Longman, New Delhi, 2003, Page No. 218–220.



विज्ञापन एवं निवेदन

रिसर्च जर्नल में विज्ञापन के संदर्भ में जानकारी प्राप्त करने हेतु प्रबन्ध सम्पादक के पते पर सम्पर्क करें। 'अभिनव गवेषणा' (मल्टी डिस्प्लनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियररिव्यूड रिसर्च जर्नल) आप सभी की एक? स्ववित्त पोषित पत्रिका है, अतः पत्रिका के लिए किसी भी प्रकार का आर्थिक सहयोग सराहनीय होगा।? कृपया अपनी सहयोग राशि चेक, ड्राफ्ट अथवा आर टी जी एस के माध्यम से निम्नलिखित पते पर प्रेषित करें। - सम्पादक? - 'अभिनव गवेषणा' के-444, 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-208 027 (उत्तर प्रदेश, भारत)

प्रबन्धन एवं सम्पादन

'अभिनव गवेषणा' (मल्टी डिस्प्लनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियररिव्यूड रिसर्च जर्नल) में अपने शोध पत्रों की प्रकाशित करने हेतु नियमित स्थान प्रदान करने के लिए कृपया फुल स्केप की गज पर टाइप किया हुआ अथवा मेल किया हुआ शोध लेख अपनी स्वीकृति के साथ भेजें।? भेजने की पता - सेक्टर के - 444, 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा - कानपुर-208 027 (उत्तर प्रदेश, भारत) मोबाइल नं० 8896244776, 9335597658 E-mail super.prakashan@gmail.com पर सम्पर्क करें। मिलने का समय- सप्ताह में 6 दिन 10.00 से 6.00 (रविवार अवकाश)।

कला में प्रतीकों की भूमिका

सारांश



— सुश्री संध्या जादौन
असिस्टेंट प्रोफेसर —
ड्राइंग एण्ड पेंटिंग,
गवर्नमेन्ट कालेज, लाखेरी—
323603, बूँदी, (राजस्थान)

ई. मेल—
sandhyajadon1998@gmail.com

भारतवर्ष में प्राचीन चित्रकला अधिकतर धार्मिक ही रही है। अपने देवी-देवताओं उनकी शक्तियों तथा चरित्र को दर्शाने के लिए यहाँ के चित्रकारों ने प्रतीकात्मक शैली ही अपनाई है और उनमें महान सफलता पाई। विष्णु, शिव, ब्रह्मा तथा इनके अवतारों के चित्र प्रतीकों के सहारे ही विकसित हुए इन देवी देवताओं को कभी किसी ने नहीं देखा, इसलिए इनका यथार्थ चित्र तो नहीं बन सकता; केवल कल्पना, वेद तथा शास्त्रों और पुराणों के वर्णन के अनुसार प्रतीकों से इनकी रचना की गई। आज जब हम कला के स्वरूप का अध्ययन करते हैं तो हमें उसके दो पक्ष स्पष्ट परिलक्षित होते हैं- एक पक्ष वह जिसे हम लोक कला के रूप में प्रतिबिम्बित करते हैं, कला का यह स्वरूप हमारे घरों में प्राचीन काल से ही प्रचलित है। इस कला को हम अपने पूर्वजों से संस्कार के रूप में प्राप्त करते हैं। इसलिए इसे संस्कार गत कला भी कह सकते हैं। लोक कला हमारी प्रकृति का परिचायक है, कला का द्वितीय पक्ष शास्त्रीय कला है, जिसको लेकर कलाकार विधिवत शिक्षा द्वारा ग्रहण करता है। लोक कला में हमें किसी भी तरह की बनावट या अतिक्रमणता दिखाई नहीं देती, उसके सरल रूप आकारों में हमें केवल मानव हृदय के शुभ तत्वों के भावों एवं उसके चिन्तन का प्रतिरूप ही दृश्यत्व होता है।

कला में प्रतीकों का आरम्भ ज्ञात नहीं है, इस विषय में निश्चित रूप से कुछ कहना कठिन है; फिर भी इतना तो निश्चित ही है कि कला में प्रतीकों की परम्परा अत्यन्त प्राचीन है। प्रतीक की परम्परा मानव की सभ्यता और अर्ध सभ्यता की दिशा में भी विद्यमान रही है। मानव का प्रकृति के साथ अभिन्न सम्बन्ध सर्व विदित है। वह प्रकृति को सदा से अपने से शक्तिशाली मानता रहा है और जीवन से परे उसकी अव्यक्त शक्ति से प्रभावित होता गया।

प्रतीक हमारे जीवन का विषय है, इसमें भाव सूचित कराने की शक्ति होती है। काव्य में भाव की अधिकता अधिक रहती है। इसलिए उसमें प्रतीकों का प्रयोग अधिक मिलता है। कला में प्रतीकों का अपना स्वतंत्र एवं व्यापक दृष्टिकोण है। इसका महत्व बाहर से नहीं अन्तर्निहित गुणों से उपलब्ध होता है। प्रतीकों से चित्र में नाना भाव उदय होते हैं। इनकी भाषा हमारी ज्ञान सामग्री को बढ़ाती है और सूक्ष्म गति सूक्ष्म तत्व तक पहुँचकर उसके गम्भीर रहस्यों का उद्घाटन करती है। प्रतीक के माध्यम से जीवन की अभिव्यक्ति प्रतीकों द्वारा ही सम्भव हो सकती है। सिन्धु सभ्यता वाले लोग प्रतीकों के उपासक थे। शनैः-शनैः सभी प्रकृति की शक्तियों की देवी देवताओं के रूप में पूजा होने लगी। हड़प्पा और मोहनजोदड़ो से अनेक मोहरें प्राप्त हुईं। एक मुद्रा में देवी-देवताओं के अनेक मुख, नेत्र और भुजाएँ अंकित हैं। यह मुद्रा सृष्टि की अलौकिक शक्ति और असीमता को इंगित करती है। हड़प्पा की एक मुद्रा पर एक स्त्री का चित्र अंकित है, इसके उधर से एक वृक्ष निकला हुआ है। इस प्रतिमा को पृथ्वी के देवी अर्थात् उर्वरा शक्ति का प्रतीक माना गया है।



भारतवर्ष में प्राचीन चित्रकला अधिकतर धार्मिक ही रही है। अपने देवी-देवताओं उनकी शक्तियों तथा चरित्र को दर्शाने के लिए यहाँ के चित्रकारों ने प्रतीकात्मक शैली ही अपनाई है और उनमें महान सफलता पाई। विष्णु, शिव, ब्रह्मा तथा इनके अवतारों के चित्र प्रतीकों के सहारे ही विकसित हुए इन देवी देवताओं को कभी किसी ने नहीं देखा, इसलिए इनका यथार्थ चित्र तो नहीं बन सकता; केवल कल्पना, वेद तथा शास्त्रों और पुराणों के वर्णन के अनुसार प्रतीकों से इनकी रचना की गई।

आज जब हम कला के स्वरूप का अध्ययन करते हैं तो हमें उसके दो पक्ष स्पष्ट परिलक्षित होते हैं- एक पक्ष वह जिसे हम लोक कला के रूप में प्रतिबिम्बित करते हैं, कला का यह स्वरूप हमारे घरों में प्राचीन काल से ही प्रचलित है। इस कला को हम अपने पूर्वजों से संस्कार के रूप में प्राप्त करते हैं। इसलिए इसे संस्कार गत कला भी कह सकते हैं। लोक कला हमारी प्रकृति का परिचायक है, कला का द्वितीय पक्ष शास्त्रीय कला है, जिसको लेकर कलाकार विधिवत शिक्षा द्वारा ग्रहण करता है। लोक कला में हमें किसी भी तरह की बनावट या अतिक्रमणता दिखाई नहीं देती, उसके सरल रूप आकारों में हमें केवल मानव हृदय के शुभ तत्वों के भावों एवं उसके चिन्तन का प्रतिरूप ही दृश्यत्व होता है। इसी कारण उसका स्वरूप इतना सरल व हृदयग्राही हो गया है कि वह हमारे रीति रिवाजों परम्पराओं व संस्कारों में रच-बस कर हमारे जीवन का एक अंग बन गई है। लोक मानव के हृदय की अनन्त गहराइयों में निष्पक्ष बहुमूल्य भाव रत्नों की जगमगाती हुई ज्योति से ही लोक कलाकार का रूपांकन हुआ है। संस्कृति लोक कला का विस्तृत स्वरूप है। इस कला के माध्यम से आप अपनी भावनाओं को सुन्दर आत्मिक रूप में प्रस्तुत करते हैं। इस कला में नियमों को मान्यता नहीं दी गई है, बल्कि भावनाओं को महत्व दिया गया है। लोक कला में कोई मूर्त रूप की आवश्यकता नहीं हुई, इसको प्रस्तुत करने के लिए रेखाओं की संतुलित और सुन्दर स्वरूप के साथ कला को प्रस्तुत करना आवश्यक है तथा यह प्रतीकों के माध्यम से भी प्रदर्शित की जाती है और पर्वों पर देवी-देवीताओं के बिम्बों द्वारा रचना की जाती है।

अमूर्त प्रतीक -

स्वास्तिक - किसी भी मंगल कार्य प्रारम्भ होने पर सर्वप्रथम पुरोहित स्वास्तिक का प्रयोग करता है। वैदिक ग्रन्थों व धर्म के अनुसार यह चारों दिशाओं में एवं देवी देवताओं के रूप का प्रतीक है। अग्नि, इन्द्र, वरुण और सोम यह चारों

देवताओं को चारों दिशाओं का संरक्षक माना जाता है।

स्वास्तिक का प्रतीक जो यद्यपि हिन्दू और बौद्ध सभ्यता से बहुत पूर्व अस्तित्व में आ चुका था। हमारी कला और धर्म के मूल में बैठ गया है। इसका भी आकार चक्र के भावात्मक आकार से मिलता-जुलता है। स्वास्तिक मंगल भावों को प्रकट करते हैं। स्वास्थ्य को शान्ति, मंगल समृद्धि आदि का प्रतीक मानकर हजारों सौभाग्यवती स्त्रियाँ चतुर्मास में स्वास्तिक व्रत का अनुष्ठान करती हैं। स्वास्तिक की चार रेखाओं की तुलना चार पुरुषार्थ, चार वर्ण, चार वर्ण, चार आश्रम, चार वेद, चार देशों से की गई है।

ओंकार - ॐ ओंकार सर्व रसों में श्रेष्ठ रस है। ओंकार की उपाधि है- उद्गति प्राण और उद्गति प्राण का तालमेल बिठाकर ऋषियों ने ओंकार को प्राण का प्रतीक माना। ब्रह्मवादियों के यज्ञ, तप, दान आदि समस्त कर्म ओंकार के उच्चारण से ही प्रारम्भ होते हैं। इस प्रकार ब्रह्म विद्या का सम्पूर्ण तत्व इस ओंकार में संकलित करके रख दिया है। संसार और परमार्थ का हृदय के बीच इस ओंकार में सदैव शान्ति भरी रहती है। वह प्राणी का वेदों का तथा परम ब्रह्म का तेल पुंज प्रतीक है। ओम ब्रह्म का प्रतीक है। प्राण ही ब्रह्म है, ब्रह्मा, विष्णु, महेश जन्म देने वाली रक्षा करने वाली तथा संहार करने वाली तीनों शक्तियों का प्रतीक तीन अक्षर - अ, उ, म, ॐ है। प्रतीक वैदिक मंत्र का पाठ ओंकार से प्रारम्भ होता है। ओंकार पूर्वक निर्विघ्नता से सफल होने में सहायता प्रदान करता है।

मूर्त प्रतीक -

अग्नि प्रतीक - प्रकृति की शक्तियों को सम्पूर्ण रूपों खण्ड में देखने के अन्तराल में और ऋतुओं के परिवर्तन में अनेक बाह्य नीतियों के करने से यह समझा जाता था कि इन्द्रियों के द्वारा प्रकृति की भयावह शक्तियों को प्रसन्न किया जा सकता है। ऐसी मान्यता है कि अग्नि की कृपा से संतान उत्पन्न हो सकती है। अनेक आदिम जातियों में अग्नि पर्व प्रमुख रूप से मनाने की प्रथा है। यह अनेक देशों में त्योहार के रूप में मनाया जाता है और समझा जाता है कि अग्नि खेतों को उर्वरता प्रदान करती है और अवलनी की पवित्र शक्ति तथा विध्वंस शक्ति को संकेत मात्र है।

कलश - भारतीय संस्कृति में प्रायः सभी जगह सभी जातियों में शुभ अवसरों पर एवं अनुष्ठानों पर मंगल कलश की स्थापना के द्वारा सभी देवी देवताओं की शक्तियों, तीर्थों, पूर्वजों का यह संयुक्त प्रतीक माना जाता है। पात्र को रंग कर उसमें जल भरकर सर्वप्रथम उसमें रोली से स्वास्तिक (शुभ



चिन्ह) बनाया जाता है।

सूर्य व चन्द्र -

दोनों प्रतीक अमूर्त हैं, परन्तु दोनों के गुणों में अन्तर है। सूर्य को समस्त अवसरों पर पूजा स्थानों व वित्त अलंकरण में सूर्य की उपस्थिति स्वास्तिक के रूप में होती है। परन्तु चन्द्र प्रकाश एवं छयवृद्धि से युक्त है। सूर्य उच्च विज्ञान या बुद्धि का प्रतीक है और चन्द्र इन्द्र अनुगामी मन का प्रतीक सूर्य और चन्द्र के साथ सौरमंडल के अन्य ग्रहों की पूजा का विधान है। नव ग्रहों में सूर्य, मंगल, बुध, बृहस्पति, शुक्र, शनि, राहु - केतु आदि की गणना की गई है। सांसारिक ऐश्वर्य, सुख समृद्धि एवं शांति की प्राप्ति के लिए नवग्रह की पूजा सदा से होती आई है। सूर्य की उपासना प्राचीन काल में ही भारत से फैल कर देश - देशांतर में व्याप्त हो गई है। इसलिए सूर्य तथा अन्य देवताओं का प्रतीक चारों ओर फैल गया जो प्रतीक सभ्यता की सबसे बड़ी देन है। हिन्दू धर्म तथा साहित्य में चन्द्रमा के सैकड़ों नाम हैं, उनमें उनको अमृत वाला आदि ऐसे अनेक नाम दिए गये हैं। मनुष्य के शरीर में सूर्य और चन्द्रमा की स्थापना है।

प्रतीकों द्वारा भाव प्रकाशन कला का परम प्रयोजन रहा है। भारत के प्राचीन मन्दिरों अथवा खुदाई से प्राप्त अवशेषों में मूर्तियाँ प्राप्त हुई हैं। भारत की कला प्रतीकात्मक है, चाहे जगन्नाथ जी की मूर्ति हो या भगवान बुद्ध की अथवा महावीर स्वामी जी की। इनकी मूर्तियों में प्रतीकात्मक तत्वों के आधार पर ही हम इनको अलग पहचान सकते हैं। इसी प्रकार सरस्वती, लक्ष्मी, पार्वती आदि के दीर्घ अनुपात में उभरे वतुल वक्षोज उनके मातृत्व के प्रतीक हैं। प्रतीकात्मक का भारतीय मूर्ति विज्ञान का सबसे महत्वपूर्ण पहलू है। ज्ञान की देवी सरस्वती को धवल वर्ण दिया गया क्योंकि श्वेत रंग ज्ञान का प्रतीक है। इसी प्रकार देवी सरस्वती को हंस वाहन मिला क्योंकि हंस विवेक तथा बुद्धि का प्रतीक है। भुजाओं में वीणा, पुस्तक तथा कमल रखा क्योंकि यह कलाओं, विज्ञानों तथा विद्याओं के प्रतीक है। लक्ष्मी का सम्बन्ध समुद्र से माना गया है समुद्र की संख्या भी साथ है लक्ष्मी भी के चित्र में सात आदमी सप्तसागर के प्रतीक हो सकते हैं। घड़ियाल मगर की आकृति बनी वाली मुद्राएँ गंगा के वाहन का प्रतीक मानी गई हैं।

इसी प्रकार कला में प्रकृति पूजा भी स्वाभाविक थी। प्रकृति पूजा के प्रतीकों में वृक्ष पूजा, नदी पूजा, पर्वत पूजा, पशु पूजा तथा प्रकाश विद्युत व तेज पूजा के साथ-साथ उन सभी पदार्थों की पूजा प्रारम्भ हुई। जो मानव जीवन के लिए उप कारक रहे हैं। शनैः-शनैः प्रकृति के उन सभी शक्तियों की देवी देवताओं के रूप में उपासना होने लगी। कलाकारों ने प्रतीकों

के माध्यम से चित्र और प्रतिमाओं को अधिक विस्तृत व्यापक एवं सुन्दर बना दिया।

कलाकार अपनी प्रतिभा से प्रतीकों के माध्यम से गुण अर्थों की अभिव्यक्ति देता है और वे सहज ही हो जाते हैं। भारतीय कला में कलाकारों ने प्रतीकों द्वारा अपना मौलिक दृष्टिकोण प्रस्तुत करने का प्रयास किया है। सम्पूर्ण भारतीय कला प्रतीकों से परिपूर्ण है। सांची भरहुत, बौद्ध गया, कन्हरी दक्षिण भारत के प्राचीन भव्य मन्दिर की शिल्प कला में पशु - पक्षी, वृक्ष - लता आदि प्रकृति की प्रतीक बन गई है। काव्य में नायिका के मुख्य सौन्दर्य के लिए कमल, चंद्रमा चित्रण कांगड़ा चित्रकला में विविध रूप है जो इस शैली की विशेषता है। चित्रकला की भाँति यहाँ की सम्पूर्ण शिल्प एवं वास्तुकला प्रकृति की प्रतीक बन गई है। कला में नवीनता की सृष्टि और चमत्कार प्रतीकों से उत्पन्न होता है। कलाकार अपनी अभिव्यक्ति से दर्शक पर एक प्रभाव छोड़ता है, जिन्हें अनुभूति एवं बोध कहते हैं। कला के द्वारा वह अपनी बात को शक्तिशाली ढंग से कहने में समर्थ होता है और रस प्रवणता एवम् प्रतीकों के माध्यम से उसे सहज ग्रहण बना देता है। कला में प्रतीकों के समावेश वाली कलाकृतियों को देखने के लिए ही हमारा मन भाव आदर्श व आध्यात्मिकता की ओर अग्रसर हो जाता है। प्रतीकों से कला में सौन्दर्य की सृष्टि होती है, इसलिए प्रतीकों की अभिव्यक्ति सर्वोपरि है।

आधुनिक चित्रकारों की कृतियों पर गौर किया जाए तो भारतीय कलाकारों में बंगाल चित्रकला शैली के विख्यात चित्रकार श्री अबनींद्र ठाकुर, श्री नन्दलाल बोस, श्री क्षितिन्द्रनाथ मजूमदार इत्यादि ने भी अपने चित्रों में अभिव्यंजना में भारतीय प्रतीकों का सहारा लिया है। इस शैली के चित्रकारों में श्री नन्दलाल बोस ने प्रतीकात्मक भारतीय प्राचीन शैली का सबसे अधिक अध्ययन किया है और अपने चित्रों में इसका प्रयोग भी किया है। देवी - देवताओं के चित्र उन्होंने सबसे अधिक बनाए हैं और उनमें प्रति को द्वारा ही अभिव्यंजना हुई है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- 1- उत्तर प्रदेश की लोक कला
- 2- प्रतीक कला
- 3- प्रतीक दर्शन
- 4- द गोल्डन बाउल स्टडी इन मैजिक एंड रिलिजन
- 5- धर्म शास्त्रीय विधि पद्धति
- 6- हमारी संस्कृति के प्रतीक



मूल्य शिक्षा की वर्तमान में आवश्यकता एवं उद्देश्य



— प्रो. साधना पाण्डेय
प्रोफेसर — शिक्षाशास्त्र विभाग,
महिला महाविद्यालय, किदवई नगर,
कानपुर-208011 (उत्तर प्रदेश)

ई-मेल:
sadhnapandey1901@gmail.com

सारांश

बालक में अनुकरण की मनोवृत्ति जन्मजात होती है। बालक किशोरों का अनुकरण करते हैं, किशोर अपने से बड़ों का अनुकरण करते हैं और युवक प्रौढ़जनों का। प्रौढ़ जनों में हमारे शिक्षक, अभिभावक, राजनेता, प्रशासक एवं समाज तथा राष्ट्र के कर्णधार सभी आते हैं। जब तक ये सभी व्यक्ति यह महसूस करते हैं कि उन्हें समाज की नवीन सन्तति में मूल्यों का विकास करना है और इसके लिये यह। उन्हें उनके समक्ष (सन्तति के सदस्यों) मूल्यों एवं आदर्शों की उपयुक्त प्रस्तुति रखनी होगी जिसका अनुकरण करके नवीन सन्तति के सदस्य अपने जीवन-पथ को परिष्कृत तक करने में समर्थ हो सकेंगे। शिक्षकों एवं शिक्षण संस्थाओं से यही अपेक्षा है, कि वे आज की पीढ़ी के मूल्योन्मुख बनायें। हमारे नैतिक मूल्यों में परिवर्तन के लिये विभिन्न कारण उत्तरदायी हैं। आज खेत-खलिहान का स्थान कारखानों ने और घरों का स्थान नगरों की सड़कों ने ले लिया है। हमें आने वाली पीढ़ी के मनोभावों को समझना होगा। साथ ही उनको मूल्योन्मुख बनाना होगा। समाज इस कार्य को अपनी आदर्श प्रस्तुति से कर सकेगा। समाज विभिन्न सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्रियाकलापों का आयोजन करके मूल्यों के विकास के लिये अवसर प्रदान कर सकता है।

‘शिक्षा जीवन का एक भाग है और स्पष्ट रूप से शिक्षा में मूल्यों से सम्बन्धित प्रश्न जीवन में मूल्यों के महान प्रश्नों से अलग नहीं रह सकते। जीवन के मूल्य शैक्षिक व्यवहार में निहित होते हैं।’

मूल्य ही व्यक्ति को किसी कार्य के लिये प्रेरित करते हैं। दार्शनिकों के अनुसार निर्णय का मानदण्ड मूल्य होते हैं। सभी वस्तुयें या क्रियायें मूल्य रखती हैं और मनुष्य इन्हें भिन्न-भिन्न परिस्थितियों में भिन्न-भिन्न ढंग से उपयोग करता है। मूल्य ही जीवन को अर्थ व श्रेष्ठता देते हैं। मानव जिन्हें उचित मानता है। ये ही उसके जीवन के आदर्श बन जाते हैं। शिक्षा मनुष्य को उपलब्ध विकल्पों में से उस विकल्प का चुनाव सिखाती है। जो मानव व समाज दोनों के लिये उचित हो।

वर्तमान भारतीय शिक्षा जगत् की सबसे ज्वलन्त समस्या सम्पूर्ण शिक्षा प्रक्रिया का दिग्भ्रमित हो जाना है क्योंकि आज मानवीय मूल्यों के प्रति आस्थाओं के टूटने बिखरने के कारण सामाजिक एवं नैतिक संकट की स्थिति उत्पन्न हो गई है। यदि विद्यार्थियों में सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों के प्रति आस्था विकसित नहीं की गई तो भविष्य में समाज में अराजकता और विघटन की स्थिति उत्पन्न होने की संभावना बढ़ जायेगी, क्योंकि आज का विद्यार्थी ही कल जब विकसित होकर अपना उत्तरदायित्व संभालेगा तो उसके संस्कारों



की नींव उसे अपने मूल्यों का संरक्षण करने की प्रेरणा प्रदान करेगी।

स्वामी रामकृष्णपरमहंस जी ने कहा था कि – 'चरित्रवान बनो जगत् अपने आप मुग्ध हो जायेगा।'

रवीन्द्रनाथ टैगोर ने भी 'चरित्र' को ही मानव जीवन के विकास की धुरी माना।'

राष्ट्रीय शिक्षानीति में कहा गया है— हमारे बहुवर्गीय समाज में शिक्षा को सर्वव्यापी और शाश्वत मूल्यों को प्रोत्साहित करना चाहिये तथा भारतीय जन में राष्ट्रीय एकता की भावना बढ़े और संकीर्ण सम्प्रदायवाद, धार्मिक अतिवाद, हिंसा, अन्धविश्वास व भाग्यवाद को समाप्त किया जा सके। हमें यह भी ध्यान में रखना चाहिये कि मनुष्य अकेला शून्य में निवास करने वाला प्राणी नहीं है। उसकी मूल्यपरक शिक्षा उसके विशिष्ट सामाजिक तथा सांस्कृतिक संदर्भ से जुड़ी होनी चाहिये और विश्व जनीन व शाश्वत मूल्यों से भी उनका सम्बन्ध होना चाहिये। वैज्ञानिक दृष्टिकोण, समानता, पर्यावरण संरक्षण, प्रजातंत्र, स्वतंत्रता, बन्धुत्व, समाजवाद तथा धर्मनिरपेक्षता आदि मूल्यों की शिक्षा सभी स्तरों के लिये आवश्यक है। प्रारम्भिक स्तर पर मूल्यपरक शिक्षा ठोस गतिविधियों तथा जीवन की परिस्थितियों के अनुरूप होनी चाहिये। माध्यमिक तथा अन्य उच्चस्तरों पर विद्यार्थी स्वयं मूल्यों की तार्किकता को समझकर उन्हें विचार व कार्य रूप में ढाल सकेंगे।'

मूल्यपरक शिक्षा की आवश्यकता –

(Need of Value & Oriented Education)

आज समाज में चारो ओर नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों में गिरावट देखने को मिल रही है। इस गिरावट के फलस्वरूप शिक्षा के क्षेत्र में भी गिरावट देखने को मिलती है। आज समाज में सामान्य आदमी की यह धारणा है कि मेहनतकश एवं ईमानदार व्यक्ति पिस रहे हैं और झूठ एवं फरेब का रोजगार करने वाले फल-फूल रहे हैं। ईमानदार व्यक्ति को मूर्ख माना जाता है। इस धारणा ने शिक्षा के क्षेत्र में अनुशासनहीनता, श्रम के प्रति अनास्था, स्व कर्तव्य के प्रति उदासीनता अनुत्तरदयित्व आदि को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

उक्त स्थिति ने आज मूल्यपरक शिक्षा की आवश्यकता को अनुभूत कराने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। हमारे कर्णधारों की समझ में यह बात आ गई है कि मूल्यों की पुनः प्रतिष्ठा के अभाव में शिक्षा में गुणात्मक

सुधार की आशा एक मृगमरीचिका ही सिद्ध होगी। अतः भारत के कर्णधारों ने नई शिक्षानीति में इस ओर अपेक्षित ध्यान दिया। इसीलिये कहा गया है— 'सभी प्रकार के विचारशील लोग मूल्यों के तेजी से हो रहे हास तथा उसके परिणामस्वरूप सार्वजनिक जीवन में व्याप्त प्रदूषण से बहुत विशुद्ध है। वास्तव में मूल्यों की यह संकटग्रस्त, स्थिति जिस प्रकार जीवन के अन्य अंगों में व्याप्त है, उसी प्रकार स्कूलों, कालेजों तथा विश्वविद्यालयों के छात्रों तथा शिक्षकों में व्याप्त है। इसे एक बहुत खतरनाक विकास के रूप में माना जाता है। अतः यह आग्रह किया जाता है कि शिक्षा की प्रक्रिया का पुनः अभिविन्यास किया जाय तथा युवकों को इस बात की पुनः अनुभूति करायी जाय कि इस तरह न तो शोषण, असुरक्षा तथा हिंसा को रोका जा सकता है और न ही किसी संगठन, समाज को सामाजिक, राजनीतिक तथा आर्थिक मानदण्डों को स्वीकार किये और पालन किये बनाये रखा जा सकता है। पिछले अनुभवों से यह सीखते हुए, यह आशा की जाती है कि सुसंगत तथा व्यवहार मूल्य-प्रणाली को ऐसी प्रक्रियाओं के माध्यम से लागू किया जाये जो जीवन के प्रति तर्क-संगत, वैज्ञानिक तथा नैतिक दृष्टिकोण पर आधारित है।'

मूल्यपरक शिक्षा की अवधारणा अपेक्षा कृत आधुनिक एवं व्यापक है। परम्परागत रूप में धार्मिक शिक्षा, 'नैतिक शिक्षा' आदि जो प्रचलित हैं, उनसे यह भिन्न है। मूल्यपरक शिक्षा से तात्पर्य उस शिक्षा से है जिसमें हमारे नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्य समाहित हों। इसमें विभिन्न विषयों को मूल्यपरक बनाकर उसके माध्यम से विभिन्न मूल्यों को छात्रों के व्यक्तित्व में समाहित करने पर बल दिया जाता है जिससे उनका सन्तुलित एवं सर्वतोन्मुखी विकास हो सके।

'Value' शब्द की उत्पत्ति लैटिन भाषा के 'Valere' शब्द से मानी जाती है जो किसी वस्तु की कीमत या उपयोगिता को व्यक्त करता है। भावात्मक दृष्टि से माइने के गुण को भी अभिव्यक्त करता है। हिन्दी में 'मूल्य' शब्द के पर्याय के रूप में आदर्श, 'शील' गुण आदि शब्दों का प्रयोग भी कहीं-कहीं पाया जाता है।

'वैल्यू एजुकेशन' के दो अर्थ हो सकते हैं—

(अ) मूल्यों की शिक्षा (Education of Values)।

(ब) मूल्यसमाहित या मूल्यपरक शिक्षा (Value & oriented Education)।

प्रथम के अन्तर्गत हम नैतिक, सामाजिक,



सांस्कृतिक एवं आध्यात्मिक मूल्यों की शिक्षा इतिहास, भूगोल, जीवशास्त्र, रसायनशास्त्र, भौतिकशास्त्र आदि की शिक्षा की भाँति एक स्वतंत्र विषय के रूप में देना चाहते हैं। मूल्यपरक शिक्षा में सभी विषयों में मनोवैज्ञानिक ढंग से मूल्य समाहित करके उक्त मूल्यों के विकास पर बल देते हैं। आज के भारतीय संदर्भ में 'वैल्यू एजुकेशन' को दूसरे अर्थ में स्वीकार किया जाना चाहिए।

मूल्यपरक शिक्षा के संदर्भ में निम्नलिखित मार्गदर्शक सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए—

(1) मूल्यपरक शिक्षा धार्मिक शिक्षा से भिन्न है। अतः इसमें धर्म विशेष पर वांछित बेल नहीं दिया जाना चाहिए।

(2) इसको स्वतंत्र विषय के रूप में पाठ्यक्रम में स्थान प्रदान नहीं किया जाना चाहिए।

(3) संविधान में निर्देशित मूल्य एवं सामाजिक उत्तरदायित्व मूल्यपरक शिक्षा का केन्द्र बिन्दु होना चाहिए।

(4) मूल्यपरक शिक्षा को समाज की आर्थिक-सामाजिक व्यवस्था के संदर्भ में क्रियान्वित किया जाना चाहिए।

(5) मूल्यपरक शिक्षा के कार्यक्रम की सफलता पर, विद्यालय के आदर्श वातावरण तथा शिक्षक के आधार पर होनी चाहिए।

विद्यालय स्तर पर मूल्यपरक शिक्षा के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिए —

(1) छात्रों में सहयोग, प्रेम और करुणा, शान्ति एवं अहिंसा, साहस, समानता, बन्धुत्व, श्रम गरिमा, वैज्ञानिक दृष्टिकोण, बपमदजपपिब ज्मउचमतद्ध, विभेदीकरण की शक्ति आदि मौलिक गुणों का विकास करना।

(2) छात्रों को एक उत्तरदायी नागरिक बनने के लिए प्रशिक्षित करना।

(3) राष्ट्रीय लक्ष्यों— समाजवाद, धर्म निपेक्षता, राष्ट्रीय एकता और लोकतंत्र का सही बोध कराना।

(4) देश की सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक तथा आर्थिक परिस्थितियों के सम्बन्ध में उन्हें जागरूक बनाना। साथ ही उनमें वांछित सुधार लाने के लिए प्रोत्साहित करना।

(5) छात्रों के मन में निम्नलिखित को प्रति समुचित दृष्टिकोण विकसित करना—

(अ) स्वयं एवं अपने साथियों के प्रति।

(ब) स्वदेश के प्रति।

(स) मानवता के प्रति।

(द) सभी धर्मों एवं संस्कृतियों के प्रति।

(य) जीवन एवं पर्यावरण के प्रति।

(6) छात्रों को स्वयं को जानने के लिए प्रोत्साहित करना जिससे वे स्वयं में आस्था रखने में समर्थ हो सकें।

चक्रवर्ती राजगोपालाचारी ने कहा कि 'विद्यार्थियों का चरित्र नैतिक शिक्षा से संभव है और उसी के आधार पर राष्ट्र का विकास संभव है।'

डॉ. राधाकृष्णन ने कहा कि 'चरित्र संसार की प्रेरणा शक्तियों में सबसे बड़ी शक्ति है। चरित्र से दृढ़ इच्छाशक्ति उत्पन्न होती है मानवीय गुणों का विकास होता है और शाश्वत मूल्यों की प्राप्ति होती है। तुच्छ चरित्र सुदृढ़ राष्ट्र का निर्माण नहीं कर सकता।' अतः शिक्षा का मुख्य कार्य चरित्र निर्माण होना चाहिये।

आज समाज में चारों ओर नैतिक, सामाजिक सांस्कृतिक तथा आध्यात्मिक मूल्यों में पतन देखने को मिल रहा है। आज सामान्य व्यक्ति की धारणा है, कि मेहनत कश एवं ईमानदार व्यक्तियों को मूर्ख समझा जाता है जब कि झूठ एवं कपट का व्यवहार करने वाले फल-फूल रहे हैं। इस धारणा ने शिक्षा के क्षेत्र में अनुशासनहीनता, श्रम के प्रति आस्था स्व कर्तव्य के प्रति उदासीनता, अनुत्तरदायित्व आदि को जन्म देने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। अतः समाज में सभी प्रकार के विचारशील बुद्धिजीवी वर्ग मूल्यों में तेजी से हो रहे अवमूल्यन के परिणामस्वरूप सार्वजनिक जीवन में व्याप्त प्रदूषण से क्षुब्ध है। वास्तव में मूल्यों की यह संकटग्रस्त स्थिति जिस प्रकार जीवन के अन्य अंगों में व्याप्त है। उसी प्रकार स्कूलों, कालेजों तथा विश्वविद्यालयों के छात्रों तथा शिक्षकों में भी व्याप्त है। अतः यह स्वीकार किया जा रहा है, कि शिक्षा की प्रक्रिया का पुनः अभिविन्यास किया जाये। इसके लिये शिक्षा में मूल्यों को स्थान देना होगा तथा मूल्यपरक शिक्षा की व्यवस्था करनी होगी। इस शिक्षा का उद्देश्य विद्यार्थियों को आदर्श मानव बनाना है जिससे वे मानवीय आदर्शों, गुणों व व्यवहार के प्रतिमानों के अनुरूप व्यवहार करें।

यह सत्य है कि मूल्य केवल पढ़ाने से नहीं, बल्कि व्यावहारिक जीवन में आत्मसात् करके सीखे जाते हैं। मूल्यों का विकास पारिवारिक एवं सामुदायिक क्रियाओं में भाग लेने से स्वभाविक रूप से होता है। परन्तु जिन बातों की जानकारी परिवार एवं समुदाय में संभव नहीं होती उन



जीवन मूल्यों का ज्ञान विद्यालय में संभव होता है। विद्यालयों के वातावरण के साथ-साथ शिक्षक का स्वयं का जीवन, आचार-विचार, व्यवहार बालकों के लिये आदर्श होता है।

अब सबसे बड़ा प्रश्न उठता है, कि विभिन्न स्तरों में अध्ययनरत विद्यार्थिनों के पाठ्यक्रम में मूल्यों से सम्बन्धित बातों को कैसे शामिल किया जाय? इस हेतु सर्वप्रथम मूल्य शिक्षा में निम्नलिखित तत्वों का समावेश होना चाहिये। विश्व बन्धुत्व की भावना, सह अस्तित्व, शाश्वत् मूल्य, सत्य, गर्म, शांति, प्रेम एवं अहिंसा, पंथ निरपेक्षता, सामाजिक न्याय, सांस्कृतिक परम्पराओं का आदर, स्वतन्त्रता, सामाजिक गत्यात्मकता, वैधानिकता, मानव का आध्यात्मिक विकास एवं विश्व परिदृश्य में घटित होने वाली विश्वसक समस्याओं की जानकारी एवं समाधान इत्यादि।

प्राथमिक स्तर पर मूल्य शिक्षा ठोस गतिविधियों तथा जीवन की परिस्थितियों के अनुरूप होनी चाहिये। माध्यमिक तथा अन्य उच्च स्तरों पर विद्यार्थी स्वयं मूल्यों की तार्किकता को समझकर उन्हें विचार व कार्यरूप में ढाल सकेंगे।

राष्ट्रीय शिक्षानीति में कहा गया कि—

1. मूल्यों के विकास की दृष्टि से पाठ्यक्रम में संशोधन किया जाय, जिससे वह इन मूल्यों का विकास करने का सशक्त साधन बन सकें।

2. शिक्षा द्वारा सार्वभौतिक व शाश्वत् मूल्यों का विकास किया जाये, जिससे वह धार्मिक कट्टरता, हिंसा एवं अंधविश्वासों का दमन करें।

3. मूल्य शिक्षा हेतु ऐसा पाठ्यक्रम बनाया जाये जो मूल्यों का सकारात्मक विकास करे।

नई शिक्षानीति के निर्देशों में कहा गया कि राष्ट्रीय स्तर पर कोर पाठ्यक्रम के अंग के रूप में मूल्यपरक शिक्षा का भी पाठ्यक्रम तैयार किया जाना चाहिये। विविध मूल्यों के आत्मसातीकरण के लिये उपर्युक्त प्राविधियाँ भी निर्धारित करनी होंगी। राष्ट्रीय शिक्षानीति (1986) में सामान्य कोर पाठ्यक्रम में भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन का इतिहास, संवैधानिक जिम्मेदारियाँ तथा राष्ट्रीय अस्मिता से सम्बन्धित तत्वों को शामिल किया गया।

शिक्षा आयोग (1964-66) ने अप्रत्यक्ष विधियों के माध्यम से मूल्य शिक्षा देने के बारे में स्पष्ट किया कि— “विद्यालय का वातावरण, शिक्षकों का व्यक्तित्व एवं व्यवहार तथा विद्यालय में उपलब्ध भौतिक सुविधायें छात्रों को

मूल्योंमुख बनाने में विशेष भूमिका निभाते हैं। अप्रत्यक्ष प्रणाली के अन्तर्गत मौन बैठक, प्रार्थनायें, कहानी कथन, समूहगान एवं सामूहिक गतिविधियों को रक्खा जा सकता है।

प्रत्यक्ष प्रणाली के माध्यम से भी जूनियर एवं सीनियर माध्यमिक स्तर पर “नैतिक शिक्षा” के रूप में मूल्यों की शिक्षा दी जा रही है। विद्यालय की समय तालिका में इसके लिये नियमित कालखण्डों की व्यवस्था होती है।

मूल्यों के आत्मसातीकरण में पाठ्यक्रम सहगामी क्रियाओं का विशेष महत्व है। इसक अन्तर्गत खेलकूद, एन.सी.सी., स्काउटिंग तथा गाइडिंग, कहानी कथन, समूहगान, अभिनय, समाज सेवा, श्रमदान, मौन बैठक इत्यादि का समावेश होता है। शिक्षा संस्थाओं में विभिन्न नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, पर्यावरण सम्बन्धी, सौंदर्यपरक, लोकतांत्रिक एवं राष्ट्रीय तथा आध्यात्मिक मूल्यों के विकास में इन क्रियाओं का विशेष योगदान हो सकता है।

अन्त में राष्ट्रीय शिक्षानीति के दस्तावेज में इस बात पर चिन्ता प्रकट की गई कि जीवन के लिये आवश्यक मूल्यों का हास्य हो रहा है और मूल्यों पर से लोगों का विश्वास उठता जा रहा है। अतः शिक्षाक्रम में ऐसे परिवर्तन की आवश्यकता है जिसमें सामाजिक एवं नैतिक मूल्यों के विकास में शिक्षा एक सशक्त साधन बन सके।

दूसरी बात यह है कि हमारा समाज सांस्कृतिक रूप से बहुआयामी है इसीलिये शिक्षा के द्वारा उन आश्वत् मूल्यों का विकास होना चाहिये, जो लोगों को एकता की ओर ले जा सकें।

मानव समाज अपने आदर्शों, मूल्यों तथा क्रियाओं को आने वाली सन्तति को प्रदान को अपने सदस्यों में ज्ञान, कौशलों, आदर्शों, मूल्यों तथा आदतों का प्रसार करने एवं सुरक्षित रखने के लिये सीपित करता है जो कि उसके स्वयं के स्थायित्व एवं निरन्तर विकास के लिये परमावश्यक है। ओटावे के अनुसार समाज शिक्षकों से भरा हुआ है। वे सब जान-बूझकर और चेतन एवं अचेतन रूप में व्यक्तित्व के पूर्ण विकास में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करते हैं। समाज की सांस्कृतिक परम्पराओं के निर्माण में पर्याप्त समय लग जाता है। इनके निर्माण में कितने ही महापुरुषों, विद्वानों की संचित प्रतिभा का उपयोग होता है। तभी परम्परागत मूल्य प्रादुर्भूत होते हैं। इन मूल्यों को आज की



आधुनिकता ने विघटित करने में महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है। हमारे नैतिक मूल्यों में परिवर्तन के लिये विभिन्न कारण उत्तरदायी हैं। आज खेत-खलिहान का स्थान कारखानों ने और घरों का स्थान नगरों की सड़कों ने ले लिया है। हमें आने वाली पीढ़ी के मनोभावों को समझना होगा। साथ ही उनको मूल्योन्मुख बनाना होगा। समाज इस कार्य को अपनी आदर्श प्रस्तुति से कर सकेगा। समाज विभिन्न सामाजिक, धार्मिक एवं सांस्कृतिक क्रियाकलापों का आयोजन करके मूल्यों के विकास के लिये अवसर प्रदान कर सकता है।

निष्कर्ष—

अन्त में, हम कह सकते हैं कि बालक में अनुकरण की मनोवृत्ति जन्मजात होती है। बालक किशोरों का अनुकरण करते हैं, किशोर अपने से बड़ों का अनुकरण करते हैं और युवक प्रौढ़जनों का। प्रौढ़ जनों में हमारे शिक्षक, अभिभावक, राजनेता, प्रशासक एवं समाज तथा राष्ट्र के कर्णधार सभी आते हैं। जब तक ये सभी व्यक्ति यह महसूस करते हैं कि उन्हें समाज की नवीन सन्तति में मूल्यों का विकास करना है और इसके लिये यह। उन्हें उनके समक्ष (सन्तति के सदस्यों) मूल्यों एवं आदर्शों की उपयुक्त प्रस्तुति रखनी होगी जिसका अनुकरण करके नवीन सन्तति के सदस्य अपने जीवन-पथ को परिष्कृत तक करने में समर्थ हो सकेंगे। शिक्षकों एवं शिक्षण संस्थाओं से यही अपेक्षा है, कि वे आज की पीढ़ी के मूल्योन्मुख बनायें।

संदर्भ ग्रंथ सूची

1. शिक्षा की चुनौती — नीति सम्बन्धी परिप्रेक्ष्य, शिक्षा मंत्रालय, भारत सरकार—1985, पृष्ठ संख्या — 7।
2. पी. डी. पाठक — 'भारतीय शिक्षा और उसकी समस्याएँ', पृष्ठ संख्या — 574, 575 एवं 581, विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा—2।
3. डॉ. एस. एल. गौतम — 'शिवा के नूतनआयाम', पृष्ठ संख्या — 196, 197, 199, 211, आलोक प्रकाशन, लखनऊ, इलाहाबाद।
4. एन. एल. गुप्ता — 'मूल्य शिक्षा : सिद्धान्त एवं व्यवहार', कृष्णा ब्रदर्स, अजमेर — 1986।
5. डॉ. वी. एस. डागर — 'शिक्षा तथा मानव मूल्य', हरियाणा साहित्य अकादमी, चंडीगढ़।
6. ई. दुर्खीम — 'नैतिक शिक्षा', फ्री प्रेस ऑफ ग्लैंको, न्यूयार्क 1953।
7. डॉ. जनार्दन वाघमारे — 'शिक्षा साहित्य और मानवीय मूल्य', प्रतिश्रुति प्रकाशन।



Multi Disciplinary Quaterly International Refereed Research Journal
(Hindi + English + Sanskrit)

ISSN : 2349-9273

SUPER PRAKASHAN Presents : 'The Gunjan'

Sector-K-444, 'Shiv Ram Kripa' World Bank Barra-Kanpur-208027

Contact- 08896244776, 09335597658, E-mail: super.prakashan@gmail.com

Visit us: www:superprakashan.com

विश्व बन्धुत्व और मानव मूल्य : एक विवेचन



— प्रो. अलका द्विवेदी
प्रोफेसर — हिन्दी विभाग,
जुहारी देवी गर्ल्स (पी.जी.)
कालेज, कानपुर-208004 (उत्तर
प्रदेश)

ई. मेल—
alkadwivedi844@gmail.com

विश्व बन्धुत्व अर्थात् मानवी सृष्टि के प्रति 'भाईचारा व्यवहार' 'मनुष्य मात्र बन्धु है, यही बड़ा विवेक है' ऐसा भाव प्रवण बोध? शिकागो धर्म सम्मेलन में स्वामी विवेकानन्द जी ही एक मात्र ऐसे वक्ता थे जिन्होंने वहाँ उपस्थित जन समुदाय को बन्धुओं और बहनों के प्रेम और आत्मीयतापूर्ण सम्बोधन से सम्बोधित किया। समय-समय पर भारत सहित अन्यान्य देशों के मनीषी, विचारकों, दार्शनिकों, समाज सुधारकों, धर्माचार्यों ने विश्वबन्धुत्व भाव वृद्धि हेतु प्रयास किये।

प्रत्येक संस्कृति के कुछ ऐसे शाश्वत नियम, उपनियम एवं परम्पराएँ होती हैं जो इसकी आधारशिला होती हैं? व्यक्ति के निजी जीवन और समाज को निर्मल सम्मुन्नत एवं आदर्शलक्षी बनाने के लिए ऐसे नियम विवेकपूर्ण जीवन रीति-नीति के मार्गदर्शक होते हैं।? ऐसे मानदण्ड निर्धारित करने में धर्म-ग्रन्थों, शास्त्र-ग्रन्थों, एवं जीवन मूल्यनिष्ठ साहित्यिक रचनाएँ सहायक होती हैं, ये मूल्य समाज एवं राष्ट्र की आकांक्षाएँ होते हैं।

मानवीय संस्कृति का विकास केवल नये बाँध, नयी रेलें, नये नगरों का विकास नहीं है, वह मानव की आन्तरिकता का विकास है, जो दर्शन, चिन्तन, कला, संगीत, साहित्य, स्थापत्य अर्थ और राजनीति के क्षेत्रों में मूल्यों के नित्य नवीन विकास को नियोजित करता है। यह उसी सांस्कृतिक व्यवस्था में सम्भव है, जहाँ प्रत्येक व्यक्ति स्वतंत्र है और अपने दायित्व को खोजकर उससे अपनत्व कर और अपना स्वधर्म मानकर उसी में अपने अस्तित्व की सार्थकता मानता है।¹

'मानवीय मूल्य विराट मानव जीवन की अगणित शिराओं में संचरित होता रहता है, जहाँ भी यह रक्त प्रवाह नहीं वही अंग पक्षाघात से आहत होकर सूख जाता है हमारे सामने मानवीय मूल्य को पूरी संस्कृति के प्राणों में प्रतिष्ठित करने का जटिलतम दायित्व है।² भारतीय संस्कृति में पुरुषार्थ चतुष्टय धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष बताये गये हैं, इन्हें जीवन के मूल्यों के रूप में उल्लेखित किया गया है। श्रीमद्भागवत गीता में अध्याय बारह में श्लोक संख्या 13 से 20 तक धर्म के 30 लक्षण बताये गये हैं?—

सत्य, दया, तपस्या, पवित्रता, कष्ट सहने की क्षमता, उचित, अनुचित का विचार, मन का संयम, इन्द्रियों का संयम, अहिंसा, ब्रह्मचर्य, त्याग, स्वाध्याय, सरलता, सन्तोष, समदृष्टि, सेवा, उदासीनता, मौन आत्म चिन्तन सभी प्राणियों में अपने आराध्य को देखना और उन्हें अन्न देना, महापुरुषों का संग, ईशगुणों का गायन, ईश्वर सेवा पूजा और निर्वाह, ईश के प्रति दास्य भाव, ईश वंदना, सखा भाव और ईश को आत्म समर्पण -

'अद्वेष्टा सर्व भूतानां मैत्रः करुण एव च,



निर्ममो निरहंकारः समदुःखसुख क्षमी ।

सन्तुष्टः सततं योगी यतात्मा दृढनिश्चयः,

मय्यर्पितमनोबुद्धिर्यो मदभक्तः स मे प्रियः ।।' ?

मनुस्मृति में धर्म के दस लक्षण बताये गये हैं -

'धृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रिय निग्रहः, ?

धीर्विद्या सत्यमाक्रोधो दशकं धर्म लक्षणम् ।' ⁴

(1) धैर्य रखना, (2) क्षमा करना, (3) मन पर नियंत्रण रखना, (4) चोरी नहीं करना, (5) मन, वचन तथा कर्म में शुद्धता रखना, (6) ज्ञानेन्द्रियों एवं कर्मेन्द्रियों पर नियंत्रण रखना, (7) शास्त्र का ज्ञान प्राप्त करना, (8) ब्रह्म ज्ञान प्राप्त करना, (9) सच बोलना, (10) क्रोध नहीं करना ।

धर्म करणीय कर्तव्य है, कुछ विद्वान इन कर्तव्यों को मानव मूल्य के अन्तर्गत रखते हैं - **'मूल्य समाज द्वारा मान्यता प्राप्त इच्छाएँ एवं लक्ष्य हैं ।'**

'तत्त्वतः सभी मानव मूल्य हैं, चाहे वे नैतिक मूल्य हो, चाहे सौन्दर्यपरक मूल्य या कोई और, पर विशेष अर्थ में मानव मूल्यों का तात्पर्य उन मूल्यों से है, जो मानव के आन्तरिक सहज स्वरूप के सबसे निकट प्रकट होते हैं तथा उसके संवेदनात्मक व्यक्तित्व से सबसे अधिक सीधे और गहन रूप से सम्बन्ध हैं । जीवन में उन मूल्यों की प्रतिष्ठा का अर्थ मानवीयता की प्रतिष्ठा है, उसके बिना मानव अस्तित्व निरर्थक है ।' (जगदीश गुप्त)

'कला का मूल्य इस बात में है कि वह हमारे आवेगों में सम्मति और अनुशासन स्थापित करें? हमारी अनुभूतियों के क्षेत्र को व्यापक बनायें तथा मनुष्य को परस्पर सहयोग के लिये प्रेरित करें ।'⁵

वास्तव में मानव मूल्य ही मानवीय आवश्यकताओं की तुष्टि के साथ लोकमंगल की सिद्धि में सहायक होते हैं । विष्णुकान्त शास्त्री जी के अनुसार- 'आधुनिक प्राचुर्ययुक्त समाज बाहर से जितना भरा-भरा लगता है, भीतर से उतना ही खोखला नहीं है? भौतिक समृद्धि के साथ-साथ मनुष्य की बेचैनी, छटपटाहट, हताशा क्यों बढ़ती जा रही है? आज की उद्धत बौद्धिकता परम्परागत मूल्यों के खंडन में सफल होने का दावा करती है, वैसा दावा हृदय को अवलम्ब दे पाने वाले किसी विश्वास के निर्माण के लिये ?यों नहीं कर पाती?'⁶

आज भौतिक सम्पन्नता बढ़ने के कारण रहन-सहन का स्तर ऊँचा उठा है, किन्तु जीवन का सुख लुप्तप्राय हो

गया है, इसका कारण प्रेम का तिरोभाव है । कुछ मानव मूल्य देशकाल सापेक्ष हो सकते हैं, पर- 'शाश्वत स्तर पर भी कुछ आधारभूत बातें मानव मात्र की समान होती हैं, वह प्रेम है ।' (मेरे साक्षात्कार - श्री नरेश मेहता, समकालीन भारतीय साहित्य जुलाई 2005) यह प्रेमभाव ही जीवन में सुगन्ध भरता है, और आदमी को आदमी के निकट लाता है ।

आपसी टकराव का कारण अहम या सत्य से बिलगाव है, यदि दोनों पक्ष आत्मावलोकन करें तो पायेंगे कि उनमें कोई एक पूर्णतः गलत या दोनों आंशिक रूप से गलत है, अतः उस गलती को समाप्त कर टकराव समाप्त कर सौहार्दपूर्ण वातावरण की सृष्टि की जा सकती है, जीवन को आन्तरिक अह्लाद से पूरित करने के लिये प्रेम रज्जु को मजबूत करना ही होगा? सम्पूर्ण संसार की एक सामान्य मानव संस्कृति हो सकती है ।? जैनेन्द्र जी से किसी ने पूछा 'आज भारत में साहित्यकार का क्या दायित्व होना चाहिये? जैनेन्द्र जी ने अपनी विलक्षण शैली में उत्तर दिया- 'भारत में? इसके क्या मायने? साहित्यकार का दायित्व भारत में कुछ और होना चाहिए, भारत के बाहर कुछ और, यह बात तो समझ में नहीं आती ।'

इस दृष्टि से 'वह राष्ट्रीय कठमुल्लापन जो राष्ट्र की परिधि को ही लक्ष्मण रेखा मान लेता है और विश्वव्यापी मानवीय चेतना के धरातल की उपेक्षा करता है ।'⁷

आज सम्पूर्ण विश्व आतंकवाद के भय से त्रस्त है, हर क्षण व्यक्ति भयभीत है, एक दूसरे की शंकालु दृष्टि से देख रहा है । आज विश्व बन्धुत्व भाव की विकास की दिशा में मानव इतिहास को मोड़ने के लिये प्रत्येक जागरूक साहित्यकार को इस भय के विरुद्ध संघर्ष करना है, क्योंकि यह भय मानवीय मूल्य के स्वस्थ रक्त को कीटाणुओं की तरह दूषित कर रहा है ।

वियना के शान्ति सम्मेलन में पाल सार्त्र मे कहा था- 'समकालीन राजनीति और चिन्तन पद्धतियाँ चाहे वे किसी भी शिविर की हो, भय पर आधारित हैं । अतः वे मिथ्या को प्रश्रय देती हैं और पारस्परिक हिंसा प्रेरित करती हैं, उनके कारण हमारे बीच में भय की दीवारें हैं । शिविर और दल मिथ्या हैं? हम सत्य हैं, क्योंकि हम जो जीते हैं, वही इतिहास है ।' साहित्यकार का नया दायित्व इतिहास है, इसके लिये उसे शब्द साधना करनी होगी । 'साहित्य में शब्द



तभी समर्थ, प्रेषणीय और प्राणवान बनते हैं, जब उनमें मानवीय मूल्य आन्तरिक रूप से प्रतिष्ठित रहता है।⁸

आज चतुर्दिक बुद्धिवाद का ही अधिपत्य दृष्टिगत हो रहा है। निरंकुश भौतिकवाद की बाढ़ अपनी चरमसीमा पर है। विलासिता के अतिरिक्त उसे कुछ सूझ ही नहीं पड़ता। आज का मानव समुदाय, देश, धर्म, जाति, वर्ण, पंथ, सम्प्रदाय, भाषा व प्रदेश आदि के आधार पर टुकड़े-टुकड़े होकर बिखरा हुआ है, यह बड़े खेद का विषय है किन्तु इससे भी खेद का विषय यह है कि मानव समुदाय की यह टूट-फूट भयानक रक्तपात का कारण बनती है। पिछले हजारों साल से यूरोप, एशिया, अमेरिका, अफ्रीका आदि सारे महाद्वीपों में की धरती मनुष्यों के रक्त से रंजित होती चली आ रही है। नरमेध ने संसार के सम्पूर्ण मानव समुदाय को त्रस्त कर दिया है। संसार के सारे नेता, विचारक एवं शासक मानव समुदाय की इस टूट-फूट से होने वाली अपरिमित हानि को देख रहे हैं कि संसार में स्थायी सुख-शान्ति के लिए एक विश्ववाद एवं एक मानव समाज की अनिवार्य आवश्यकता है। ऐसी विकट स्थिति में हम मूकदर्शक रहे यह उचित नहीं, इतिहास साक्षी है कि विश्व की सर्वांगीण प्रगति में भारत ने अपने विकास के आरम्भ से ही असाधारण योगदान दिया है- 'जगे हम लगे जगाने विश्व, लोक में फैला फिर आलोक / व्योम तम पुंज हुआ सब नष्ट, अखिल संस्तुति हो उठी अशोक।' भारतवर्ष का चक्रवर्ती सांस्कृतिक साम्राज्य विश्व वसुधा के कोने-कोने तक छाया था। यह सब इसलिये सम्भव हो सका कि यहाँ के निवासियों ने सीमित क्षेत्र में स्वार्थ के घरौदों में अपने को सीमितबद्ध नहीं रखा, वह सम्पूर्ण विश्व का कल्याण चाहते थे-

सर्वे भवन्तु सुखिना, सर्वे सन्तु निरामया,

सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुख भाग्भवेत् ।

कामायनी में श्रद्धा मनु से अपने सुख की परिधि के विस्तार के लिये आग्रह करती है - 'अपने सुख को विस्तृत कर लो, मनु हँसो और सुख पाओ।'

अपने पुत्र मानव को भी वह प्राणी मात्र में समरता भाव के प्रचार का संदेश देती है- 'सबकी समरसता कर प्रचार कर, मेरे सुत सुन माँ की पुकार।'⁹

हमने सदैव विश्व को अपना घर-परिवार और सार्वभौम सुख-शान्ति को अपनी निजी प्रगति माना।

सम्पूर्ण वसुधा को कुटुम्ब मानने की अवधारणा इस देश के लिये नवीन नहीं है। शताब्दियों पूर्व हमारे वाङ्मय में यह अवधारणा स्पष्ट रूप से मुखारित हुई है। अपने स्व का विस्तार विश्व स्तर तक कर, विश्वतारा संस्कृति का बीज वपन कर विश्व गुरु का सम्मानजनक स्थान प्राप्त किया था। शनैः-शनैः भौतिकता की आंधी ने आन्तरिक स्व की परिधि को संकुचित करना प्रारम्भ कर दिया, आज यद्यपि औद्योगिक क्रान्ति, सूचना क्रान्ति ने वैश्विक संस्कृति का सूत्रपात कर दिया है तथापि सही मायने में 'विश्वग्राम' नहीं बना है। अभी हमारे हृदयों में बाहरी आकर्षण के कारण वह निश्छल प्रेम नहीं है, जो होना चाहिए। फलतः औपचारिक रूप से संतरे जैसी एकता है, किन्तु दलों में दरारें हैं, जब तक यह नहीं दूर होगी, विश्व शांति या वसुधैव कुटुम्बकम् की अवधारणा फलीभूत नहीं हो सकती। जब विकासशील और विकसित देशों में एकल परिवार विघटन की ओर है, संयुक्त परिवार बीतें दिनों की बात होते जा रहे हैं, तब ऐसी उदारमना सोच आह्लादित और रोमांचित तो करती है, किन्तु टेढ़ी खीर भी लगती है। किन्तु रोग को लाइलाज मानकर अकर्मण्य बन हाथ पर हाथ रख, बैठे भी नहीं रहा जा सकता।

हमें विश्व मैत्री, विश्व मानवता, विश्व शांति और विश्व-बन्धुत्व भावों की अभिवृद्धि के लिये वांछित प्रयास करने ही होंगे और यह प्रयास इस भूमि से प्रारम्भ हो। 'स्व' का विस्तार ही मनुष्य को सर्वभूतेषु हितैरताः करायेगा? 'प्रेम और उदात्तता, विश्व-बन्धुत्व है, लेकिन परिशोध तो प्रत्येक चीज का होता है। बहुत अच्छी चीज हो तो भी उसे आपको प्रतिदिन झाड़न से झाड़ना होता है? देशकाल के व्यवहार के कारण भी जब पैसा मैला होता है तो मूल्य क्यों नहीं होंगे? तो सोचना तो पड़ता ही है। आवरणगत तो बदलता है पर उसकी तात्त्विकता तो रहती है।'¹⁰

अस्तु हमारे प्रयास होने चाहिए -

■ संयम, संतोष, समता, न्याय इत्यादि का शिक्षण और संस्कार मनुष्य को शैशव से ही दिया जाना चाहिए।

■ शांति की कामना कायरता नहीं होता - औदात्य मानी जानी चाहिए।

■ भारतीय चिंतन के चौथे आश्रम वानप्रस्थ को व्यवहार में उतारा जाय, जिसका अर्थ है, संसार के आकर्षणों



और भोगों को स्वेच्छा से त्यागने का प्रयत्न।

☛ संयुक्त परिवार की महत्ता का प्रतिपादन प्रत्येक देश में हो, तभी सम्पूर्ण वसुधा को कुटुम्बवत् मानने की भावना फलीभूत हो सकती है।

☛ अहिंसा को परम धर्म माना जाय।

☛ सम्पूर्ण विश्व में सौहार्दवृद्धि के लिये वेदों का अध्ययन किया जाना चाहिये क्योंकि -

लोकहित का जो उपाय प्रत्यक्ष अथवा अनुमान से नहीं जाना जा सकता, उसका ज्ञान वेद से होता है -

**प्रत्यक्षेणानुमिता वा यस्तूपायों न बुध्यते,
एनं विदन्ति वेदेन तस्माद् वेदस्य वेदता।**

वेद की समस्त शिक्षाएँ सार्वभौम हैं। वेद भगवान् मानव मात्र को हिन्दू, सिख, मुसलमान, ईसाई, बौद्ध, जैन आदि कुछ भी बनने के लिये नहीं कहते। वेद भगवान् की स्पष्ट आज्ञा है- 'मनुर्भव' अर्थात् मनुष्य बनो? सभी प्राणियों में मित्र भाव की प्रार्थना है-

'मित्रस्य चक्षुषा सर्वाणि भूतानि समीक्षे, एवं -

'सहृदयं सामनस्यमविद्वेषं कृणोमि वः।

अन्यो अन्यमभि हर्यत वः सं जातमिवाछन्या।'¹²

ईश्वर ने हमें सहृदय, एक मनवाला बिना द्वेष के बनाया है। हम एक दूसरे से ऐसे स्नेह करें, जैसे गाय अपने नवजात बछड़े से करती है -

'समानी व आकृतिः समाना हृदयानि वः, ?

समानमस्तु वो मनो यथाः वः सुसहासति।'¹³

हम सबके जीवन लक्ष्य एक हो, हृदय और मन एक हो, ताकि मिलकर जीवन में उस एक लक्ष्य को प्राप्त कर सकें।

मानव धर्म का ऐसा उच्चतम, श्रेष्ठतम और वरणीय स्वरूप अन्यत्र दुर्लभ है। वैदिक धर्म हमें सुख-शांति, समाज में समृद्धि, सेवा भावना, समान्यस्य, सहयोग, सत्याचरण, सदाचरण संवेदना से परिपूर्ण हृदय और मननशील मनुष्य बनने की ओर उत्प्रेरित करता है। वेद में इसी भावना को दृढ़ किया गया है कि एक ही आत्मतत्त्व प्रत्येक पदार्थ में प्रतिबिम्बित होकर भिन्न-भिन्न नाम-रूपों से अभिहित हो रहा है, अतएव समग्र ब्रह्माण्ड एक ही तत्त्व से अधिष्ठित है।

विश्व शांति और वसुधैव कुटुम्बकम् की भावना बलवती, फलवती हो, इसका एक ही उपाय है कि सारा

मानव समुदाय अपनी-अपनी मान्यताओं को निष्पक्षता की तुला पर तौलकर देखे कि उनमें सत्य के साथ मानव जीवन के लिए कितना लाभप्रद अंश है, इस कसौटी पर जो - जो मान्यताएँ खरी न उतर रही हों, उन्हें तुरन्त त्याग दें। इस प्रकार के त्याग में राष्ट्रीय प्रतिष्ठा अथवा आत्म-गौरव जैसे भावुकतापूर्ण प्रश्नों को जोड़ना बुद्धिमानी नहीं। यह कार्य विश्व के विचारकों समाज को नेतृत्व देने वालों और विवेकशील विद्वानों का, जो अपनी मानव जाति के प्रति शुभेच्छा एवं करुणा रखते हों और उसकी सुख-शान्ति का उत्तरदायित्व अपने कंधों पर समझते हो। वे इस धरा को स्वर्ग बनाने का प्रयत्न करें। जन साधारण का कर्तव्य है कि वह उसके निर्णय में विश्वास करें और आस्थापूर्वक उसका पालन करें।

विचार और व्यवहार को इन्हीं सूत्रों को पकड़कर 'वसुधैव कुटुम्बकम्' की भावना बलवती होगी, और हम मनु की तरह ही औदात्य भाव से पूरित होंगे-

'बोले देखो कि यहाँ पर कोई भी नहीं पराया,

हम अन्य न और कुटुम्बी, हम केवल एक हमी

है।'¹¹

संदर्भ ग्रन्थ सूची

- 1- मानव मूल्य और साहित्य - पृ. 89 धर्मवीर भारती।
- 2- मानव मूल्य और साहित्य - पृ. 94 धर्मवीर भारती।
- 3- श्रीमद्भागवत अध्याय 12 श्लोक सं. 13?।
- 4- मनुस्मृति षष्ठ अध्याय श्लोक सं. 91।
- 5- उदीयमान भारतीय समाज पृ. 25 - डॉ. सरोज शर्मा।
- 6- तुलसी के हिय होरि - पृ. 29 - विष्णुकान्त शास्त्री।
- 7- मानव मूल्य और साहित्य - पृ. 49- धर्मवीर भारती।
- 8- मानव मूल्य और साहित्य - पृ. 97 - धर्मवीर भारती।
- 9- कामायनी - दर्शन सर्ग - पृ. 106 जयशंकर प्रसाद (प्रतिमान प्रकाशन संस्करण - 2000)।
- 10- समकालीन भारतीय साहित्य जुलाई 2005, मेरे साक्षात्कार श्री नरेश मेहता से उद्धृत।
- 11- कामायनी आनन्द सर्ग - पृ. 124 - जयशंकर प्रसाद।
- 12- अथर्ववेद 3/30/1।
- 13- ऋग. 10/191/4।



पवित्र हिंसा : इस्लाम, साम्प्रदायिकता और खैबर पख्तूनख्वा का युद्धक्षेत्र

सारांश



— विरेश कुमार मिश्रा

शोध छात्र —

रक्षा एवं सामरिक अध्ययन विभाग,
एस. एम. एम. टाउन (पी. जी.)
कालेज, बलिया—(उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—

viresh9889935711@gmail.com



— रिसर्च सुपरवाइजर

— डॉ. अजय कुमार पाण्डेय

सहायक प्रोफेसर —

रक्षा एवं सामरिक अध्ययन विभाग,
एस. एम. एम. टाउन (पी. जी.)
कालेज, बलिया—(उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—

ajaiarpandey79@gmail.com

यह लेख पाकिस्तान के खैबर पख्तूनख्वा (केपी) प्रान्त में इस्लामी विचारधारा, साम्प्रदायिक पहचान और आतंकवादी हिंसा के परस्पर सम्बन्धों की जांच करता है। यह एक गुणात्मक ऐतिहासिक दृष्टिकोण अपनाता है, जिसमें माध्यमिक स्रोतों (शैक्षणिक साहित्य, रिपोर्ट्स, समाचार) का विश्लेषण किया गया है और साम्प्रदायिक संघर्ष की समयरेखा को पुनर्निर्मित किया गया है। प्रमुख निष्कर्षों से पता चलता है कि केपी में साम्प्रदायिक संघर्ष जिया-उल-हक के इस्लामीकरण नीतियों और सोवियत-अफगान युद्ध से उत्पन्न हुआ, जिसने विरोधी धार्मिक समूहों को सशक्त बनाया।

आतंकवादी साम्प्रदायिक संगठनों (देवबंदी संगठन जैसे सिपाह-ए-सहाबा/लश्कर-ए-जंगवी और नए कट्टरपंथी बरेलवी समूहों तथा आईएस-खोरासान जैसे नए खिलाड़ियों) के उदय ने हिंसा को सुन्नी-शिया झगड़ों तक फेला दिया है। हाल के उदाहरण जैसे 2022 में पेशावर के शिया मस्जिद बमबारी और 2024 में कम में शिया नागरिकों पर घात लगाकर हमला — दर्शाते हैं कि कैसे स्थानीय शिकायतें (जमीन, जनजातीय विवाद) और बाहरी प्रभाव (ईरान-सऊदी प्रतिद्वन्द्विता, अफगान तालिबान का प्रभाव) ने संघर्ष को और तीव्र कर दिया है। यह विश्लेषण साम्प्रदायिक गतिशीलता में पैटर्न और विरोधाभासों की पड़ताल करता है, जिसमें ऐतिहासिक रूप से बहुलवादी पख्तून समाज के आतंकवादी पहचान की राजनीति के शिकार होने का विरोधाभास भी शामिल है। यह निष्कर्ष निकालता है कि साम्प्रदायिक आतंकवाद को कम करने के लिए सूक्ष्म नीतिगत उपायों (कानून प्रवर्तन, संवाद, शिक्षा सुधार) की आवश्यकता है और साथ ही विचारधारात्मक धाराओं और जमीनी स्तर पर सुलह पर और शोध करने का सुझाव देता है।

की वर्ड — साम्प्रदायिकता, खैबर पख्तूनख्वा, तालिबानीकरण, इस्लाम, सुन्नी-शिया सम्बन्ध, आतंकवाद, विदेशी प्रभाव, पाकिस्तान।

परिचय—

पाकिस्तान में साम्प्रदायिक संघर्ष—विशेष रूप से सुन्नी और शिया मुसलमानों के बीच— एक प्रमुख सुरक्षा और सामाजिक संकट बन गया है। पाकिस्तान, जिसकी स्थापना एक “मुस्लिम” मातृभूमि के रूप में हुई थी तथा एक इस्लामी राज्य बनने की आकांक्षा रखता है, लेकिन राजनीति में इस्लाम की भूमिका को लेकर आन्तरिक मतभेदों ने हिंसा को हवा दी है। अफगानिस्तान की सीमा पर स्थित खैबर पख्तूनख्वा (केपी), दशकों के विद्रोह और आतंकवाद के साथ, साम्प्रदायिक और विचारधारात्मक संघर्ष का एक प्रमुख युद्धक्षेत्र बनकर उभरा है। यह पत्र पूछता है— कैसे इस्लामी विचारधाराएँ, साम्प्रदायिक आन्दोलन, राज्य की कार्यवाइयाँ और विदेशी विचारधाराएँ खैबर पख्तूनख्वा में हिंसा को आकार देने के लिए एक साथ आई



हैं? इसका उत्तर देने से न केवल क्षेत्रीय उथल-पुथल, बल्कि पाकिस्तान में धर्म और राजनीति के व्यापक मुद्दों पर भी प्रकाश पड़ता है।

यह अध्ययन महत्वपूर्ण है क्योंकि केपी का साम्प्रदायिक संघर्ष, जनजातीय जमीन विवादों से लेकर मस्जिद बमबारी तक पाकिस्तानी इस्लाम और आतंकवाद की विकसित होती प्रकृति को दर्शाता है। पहले के कार्यों में उल्लेख किया गया है कि पाकिस्तान का सुन्नी-शिया संघर्ष दक्षिण एशिया की इस्लामी विरासत में गहरी जड़ें रखता है। हाल के शोध में अफगान जिहाद के युग और सुन्नी उप-साम्प्रदायों (देवबंदी, बरेलवी, सलाफी) के बीच प्रतिद्वन्द्विता तथा साम्प्रदायिकता को पुनर्जीवित करने में महत्वपूर्ण बताया गया है। यह लेख उस साहित्य का संश्लेषण और विस्तार करता है, जिसमें विशेष रूप से केपी पर ध्यान केन्द्रित किया गया है। यह प्रासंगिक अध्ययनों की समीक्षा के साथ शुरू होता है, फिर शोध पद्धति की रूपरेखा प्रस्तुत करता है। मुख्य भाग ऐतिहासिक पृष्ठभूमि केपी में प्रमुख इस्लामी साम्प्रदाय, साम्प्रदायिक आन्दोलनों का उदय प्रमुख आतंकवादी घटनाएँ, राज्य की भूमिका विदेशी विचारधारात्मक प्रभाव और सामाजिक-सांस्कृतिक परिणामों पर अनुभागों में विभाजित है। चर्चा इन निष्कर्षों को एकीकृत करती है और निष्कर्ष नीति और शोध के लिए निहितार्थ और दिशाओं पर प्रकाश डालता है।

साहित्य समीक्षा—

पाकिस्तान की साम्प्रदायिकता के विद्वत्तापूर्ण विश्लेषण में इसके ऐतिहासिक मूल और विकसित होती गतिशीलता पर जोर दिया गया है। जमान (1998) ने दिखाया कि पाकिस्तान में सुन्नी-शिया संघर्ष की “इस्लाम और दक्षिण एशिया के इतिहास में गहरी जड़ें हैं”, जो सार्वजनिक जीवन में धर्म पर बहस के साथ जुड़ा हुआ है।

उनका तर्क है कि 1980 के दशक से साम्प्रदायिक पहचानों को सक्रिय रूप से “पुनर्जीवित... और निर्मित” किया गया है, जिसमें साम्प्रदायिक चेतना को बढ़ावा देने वाले नए मास मीडिया और साहित्य ने सहायता की है। इसी तरह, यूसुफ (2012) दस्तावेज कहते हैं कि कैसे जनरल जिया-उल-हक की 1977-1988 की नीतियों (इस्लामीकरण, ईशनिन्दा कानून) और सोवियत-अफगान युद्ध ने राज्य संस्थानों में एक रूढ़िवादी सुन्नी (देवबंदी) पूर्वाग्रह को शामिल किया। उदाहरण के लिए, जिया के 1980 के जकात अध्यादेश (एक धार्मिक कर) को एक ऐसे तरीके से लागू किया गया जिसने शिया प्रथाओं को नाराज किया जा सके जिससे बड़े पैमाने पर शिया विरोध और

कट्टर सुन्नी प्रतिक्रिया हुई। इन सुधारों ने बरेलवी और शिया व्याख्याओं को “बाहर” कर दिया, जिससे साम्प्रदायिक एकीकृत हिंसा की नींव पड़ी।

हाल के विश्लेषण नए रुझानों पर प्रकाश डालते हैं। यूसुफ (2012) ने 2010 के दशक में साम्प्रदायिक हिंसा के पुनरुत्थान का उल्लेख किया है, जो पाकिस्तानी तालिबान के उदय और लश्कर-ए-जंगवी जैसे आतंकवादी समूहों के साथ इसके सम्बन्धों से जुड़ा है। क्राइसिस ग्रुप (2022) इसी तरह रिपोर्ट करता है कि तालिबान और सलाफी आतंकवादियों ने सांप्रदायिक संघर्ष को अपने पिछले दायरे से आगे फैला दिया है, जिसमें पहले के सहिष्णु सुन्नी गुट भी शामिल हो गए हैं। यह पाकिस्तान में चार मुख्य सुन्नी उप-साम्प्रदायों (बरेलवी, देवबंदी, अहल-ए-हदीस/सलाफी और जमात-ए-इस्लामी पुनरुत्थानवादी) और 20-25 प्रतिशत शिया अल्पसंख्यक की पहचान करता है। साहित्य विदेशी विचारधारात्मक प्रभावों का भी वर्णन करता है: विद्वान इस बात पर जोर देते हैं कि पाकिस्तान ईरान-सऊदी क्षेत्रीय प्रतिद्वन्द्विता का “रंगमंच” बन गया है, जहाँ दोनों राज्य साम्प्रदायिक प्रॉक्सी को वित्तपोषित करते हैं। विशेष रूप से, ईरान में 1970 के दशक के अन्त में इस्लामी क्रांति ने पाकिस्तानी शियाओं को सशक्त बनाया, जब कि सऊदी वहाबी नेटवर्क (विशेष रूप से अफगान जिहाद फंडिंग के माध्यम से) ने कट्टर सुन्नियों को मजबूत किया।

केपी में तालिबानीकरण और आतंकवाद पर अध्ययन अफगान गतिशीलता के प्रभाव को दर्शाते हैं। कुछ कार्य (जैसे यूसुफ 2012, अनवर 2019) जांच करते हैं कि कैसे तालिबान विचारधारा ने पख्तून जनजातियों के बीच पकड़ बनाई, स्थानीय संस्कृति और सत्ता को बदल दिया। केपी में साम्प्रदायिकता और तालिबानवाद के विशिष्ट परस्पर सम्बन्ध पर कम स्पष्ट कार्य हैं, जिसे यह लेख सम्बोधित करना चाहता है। अन्त में दक्षिण एशिया में इस्लाम पर कार्य (जैसे अंसारी 2002, अदास 1981) ने इस क्षेत्र की बहुलवादी इस्लामी विरासत (सूफी आदेश, समन्वयवादी परम्पराओं) की पृष्ठभूमि प्रदान करते हैं, जो अब दबाव में है। संक्षेप में, साहित्य से पता चलता है कि पाकिस्तान में साम्प्रदायिकता ऐतिहासिक शिकायतों, राज्य नीतियों, वैश्विक जिहाद और विदेशी प्रभाव का उत्पाद है। यह समीक्षा केपी के “पवित्र हिंसा” के युद्धक्षेत्र के वर्तमान विश्लेषण के लिए मंच तैयार करती है।

शोध पद्धति—

यह पत्र एक गुणात्मक, वर्णनात्मक दृष्टिकोण का



उपयोग करता है। यह माध्यमिक स्रोतों का एक ऐतिहासिक विषय-वस्तु विश्लेषण करता है: पाकिस्तान के साम्प्रदायिक संघर्षों से सम्बन्धित सहकर्म-समीक्षित अध्ययन, नीति रिपोर्ट, समाचार मीडिया और आधिकारिक दस्तावेज। शोध खैबर पख्तूनख्वा में साम्प्रदायिक विकास की एक समयरेखा का पुनर्निर्माण करता है, जो घटनाओं को विचारधारात्मक और राजनीतिक बदलावों के साथ सहसम्बन्धित करता है। यह स्रोतों में रिपोर्ट किए गए उनके साहित्य और सार्वजनिक बयानों की समीक्षा करके विभिन्न इस्लामी आन्दोलनों के विचारधारात्मक विश्लेषण को भी नियोजित करता है। पद्धति में क्रॉस-केस तुलना (उदाहरण के लिए, शिया बनाम सुन्नी साम्प्रदायिक घटनाएं) और नीति समीक्षा (राज्य की कार्यवाहियों और कानूनी उपायों का मूल्यांकन) शामिल है। कोई प्राथमिक क्षेत्र डेटा का उपयोग नहीं किया गया है, इसके बजाय अध्ययन मौजूदा विवरणों को संश्लेषित करता है ताकि यह आलोचनात्मक रूप से आकलन किया जा सके कि समय के साथ केपी में धर्म, पहचान और विदेशी विचारधाराओं ने हिंसा को कैसे आकार दिया है। प्रमुख संदर्भ (जैसे क्राइसिस ग्रुप रिपोर्ट, शैक्षणिक लेख) प्रमुख घटनाओं के लिए अनुभवजन्य साक्ष्य प्रदान करते हैं।

ऐतिहासिक पृष्ठभूमि—

पाकिस्तान का उत्तर-पश्चिम लंबे समय से विवाद का एक सीमान्त क्षेत्र रहा है। ब्रिटिश औपनिवेशिक शासन के तहत, पख्तून जनजातीय क्षेत्र (अब केपी और पूर्व एफएटीए) फ्रंटियर क्राइम्स रगेजुलेशन के तहत अर्ध-स्वायत्त थे। विभाजन (1947) पर एनडब्ल्यूएफपी पाकिस्तान में शामिल हो गया इसकी पश्तून आबादी, जिसे खान अब्दुल गफ्फार खान जैसे नेताओं ने संगठित किया था, में एक समन्वयवादी, मुख्य रूप से सूफी प्रभावित इस्लामी संस्कृति थी। सांप्रदायिक पहचान (सुन्नी बनाम शिया) मौजूद थी लेकिन राजनीतिक रूप से प्रमुख नहीं थी। 1970 और 1980 के दशक में, यह नाटकीय रूप से बदल गया। शिया के इस्लामीकरण ने कानून और शिक्षा में रूढ़िवादी सुन्नी मानदण्डों (देवबंदी व्याख्याओं को प्राथमिकता देते हुए) को पेश किया।

साथ ही, 1979 में अफगानिस्तान पर सोवियत आक्रमण ने केपी को मुजाहिदीन के लिए एक आधार बना दिया, जिससे हथियार, मदरसा फंडिंग और वहाबी-प्रभावित विचारधारा आई। अफगान तालिबान का उदय (1990 के दशक) का भी प्रभाव पड़ा। केपी में पख्तून जनजातियाँ (जैसे खुर्रम और दीर में) अफगान तालिबान

का समर्थन करने वालों और स्थानीय शिया जनजातियों के बीच विभाजित हो गई। विद्वानों ने उल्लेख किया है कि अफगान जिहाद “केपी में सुन्नी इस्लाम के एक सैन्य रूप में लेकर आया”, जब कि ईरान की क्रांति ने शिया प्रभाव लाया। इन घटनाक्रमों ने साम्प्रदायिकता की नींव रखी। पारम्परिक पख्तून जनजातीय विवाद धार्मिक पहचान के साथ अतिछादित/छायांकित होने लगे, जैसा कि हम देखेंगे।

खैबर पख्तूनख्वा में इस्लामी विचारधाराएँ—

पाकिस्तान की मुस्लिम आबादी धार्मिक रूप से विविध है। क्राइसिस ग्रुप के अनुसार— चार सुन्नी धाराएँ प्रचलित हैं— बरेलवी (सूफी-उन्मुख), देवबंदी (रूढ़िवादी हनफी), अहल-ए-हदीस/सलाफी, और पुनरुत्थानवादी (जमात-ए-इस्लामी)। शिया (ज्यादातर बारहवीं इमामी) पाकिस्तान की आबादी का लगभग 20–25 प्रतिशत हिस्सा बनाते हैं, और केपी में भी महत्वपूर्ण शिया समुदाय हैं (जैसे कुर्रम में तुरी जनजाति)। केपी में, देवबंदी स्कूल का एक मजबूत संस्थागत प्रभाव है, जिसमें कई मदरसे कट्टर व्याख्याओं का प्रचार करते हैं। देवबंदी नेटवर्क में ऐतिहासिक रूप से प्रभावशाली धार्मिक विद्यालय शामिल हैं, जैसे— अकोरा खट्टक में दारुल उलूम हक्कानिया, जिसने अफगान तालिबान के नेताओं को तैयार किया। बरेलवी स्कूल, जिसे एक समय अधिक सहिष्णु माना जाता था, का भी केपी में अनुसरण है, विशेष रूप से स्थानीय संतों और मजारों की वंशावली वाले शहरी पाकिस्तानियों के बीच।

हाल ही में, राजनीतिक रूप से सक्रिय बरेलवी समूहों (जैसे तहरीक-ए-लब्बैक पाकिस्तान) ने ईशानिन्दा पर आक्रामक रुख अपनाया है। अहल-ए-हदीस (सलाफी) धारा छोटी है लेकिन मौजूद है, जो अक्सर जमात-ए-इस्लामी के सुधारवादी सिद्धान्त के साथ संरेखित होती है। शियाओं में, केपी के शिया (जैसे पाराचिनार में) अक्सर पारम्परिक नजफी धार्मिक विद्यालयों का अनुसरण करते हैं, जो विशिष्ट अनुष्ठान प्रथाओं (जैसे मुहर्रम जुलूस, मातम) को बनाए रखते हैं।

इस्लामी विचारधाराओं का यह मोजेक संभावित दरार पैदा करता है। क्राइसिस ग्रुप नोट करता है कि साम्प्रदायिक विद्रोह मुख्य रूप से पहले के दशकों में देवबंदी लाइनों (सिपाह-ए-सहाबा और लश्कर-ए-जंगवी के माध्यम से, नीचे देखें) के साथ चला था, लेकिन “सांप्रदायिक आतंकवाद अब सुन्नी इस्लामवादी समूहों की पूरी श्रृंखला में फैल गया है, “जिसमें बरेलवी गुट भी



शामिल हैं। दूसरे शब्दों में, केपी के धार्मिक परिदृश्य में अब कई परम्पराओं के आतंकवादी तत्व शामिल हैं। केपी के पख्तून ऐतिहासिक रूप से पख्तूनवाली (जनजातीय सम्मान के कोड) और सूफी परम्पराओं (जैसे मजारों के लिए श्रद्धा) के लिए जाने जाते हैं। साम्प्रदायिक विचारधारा के प्रवाह ने इन सांस्कृतिक मानदण्डों को तनाव में डाल दिया है, क्योंकि चरमपंथी धार्मिक विद्वान स्थानीय रीति-रिवाजों को गैर-इस्लामिक घोषित करते हैं। संक्षेप में, प्रान्त की इस्लामी “विचारधाराएँ” वैचारिक धाराएँ प्रदान करती हैं, जिनसे साम्प्रदायिक आन्दोलन अपनी पहचान और शिकायतें खींचते हैं।

साम्प्रदायिक आन्दोलनों का उदय—

पाकिस्तान में साम्प्रदायिक आन्दोलन 1980 के दशक की शुरुआत में खुले तौर पर संगठित होने लगे। सुन्नी पक्ष, देवबंदी-समर्थित सिपाह-ए-सहाबा पाकिस्तान (एसएसपी) ने 1985 में एक शिया-विरोधी मिलिशिया के रूप में गठन किया। इसका स्पष्ट लक्ष्य शियाओं को नेतृत्व से बाहर करना और उन्हें गैर-मुस्लिम के रूप में मान्यता दिलाना था। एसएसपी का लश्कर-ए-जंगवी (एलईजे), जिसकी स्थापना 1996 में हुई, एक और अधिक हिंसक उपसमूह बन गया। 1980 और 1990 के दशक के दौरान, एसएसपी और एलईजे ने पाकिस्तान की अधिकांश सांप्रदायिक हिंसा को अंजाम दिया। उन्होंने शिया नेताओं की हत्या की, जुलूसों और इमामबाड़ों पर हमला किया, और शिया कोटा हटाने की मांग की। प्रतिक्रिया में, शिया समूहों ने भी एकजुट होना शुरू कर दिया।

तहरीक-ए-निफाज-ए-फिक्ह-ए-जाफरिया (टीजेएफ) जैसे संगठन शिया हितों की रक्षा के लिए और जुलूस आयोजित करने के लिए उभरे। समय के साथ, साम्प्रदायिक आतंकवाद का चेहरा विविध हो गया। 2000 के दशक तक, क्राइसिस ग्रुप एक नए युग का अवलोकन करता है, जिसमें बरेलवी गुट शामिल हो गए। कट्टरपंथी लब्बैक पार्टी (एक बरेलवी आन्दोलन) ने ईशानिन्दा के मुद्दों पर हिंसक विरोध और यहाँ तक कि हत्याएं भी कीं, जो 2021 में एक कार्यकर्ता की भीड़ द्वारा हत्या (सियालकोट घटना) में समाप्त हुई। इसके समानांतर, वैश्विक जिहादवाद का उदय पाकिस्तान के साम्प्रदायिक मिश्रण में सलाफी आतंकवादियों को लेकर आया। कई निराश पूर्व-तालिबान और लश्कर कैंडर इस्लामिक स्टेट खोरासान प्रान्त (आईएसकेपी) में शामिल हो गए, जो एक सलाफी जिहादी समूह है। आईएसकेपी ने शियाओं पर केपी के कुछ सबसे भयानक हमले किए हैं, इसने मार्च

2022 में पेशावर मस्जिद बमबारी का दावा किया, जिसमें 60 से अधिक शियाओं की मौत हो गई। संक्षेप में, केपी में साम्प्रदायिक पहचानों को दोनों पक्षों के समूहों द्वारा सचेत रूप से विकसित किया गया है। सुन्नी चरमपंथी संगठनों ने शियाओं को “काफिर” (अविश्वासी) के रूप में चित्रित किया है और इसके विपरीत, प्रत्येक ने हिंसा को सही ठहराने के लिए धार्मिक साहित्य और प्रचार का उपयोग किया है। ये संगठन मदरसों, दान नेटवर्क और राजनीतिक मोर्चों के माध्यम से समर्थन प्राप्त करते हैं, जो अक्सर मुख्यधारा की राजनीति में विलीन हो जाते हैं। उदाहरण के लिए, एसएसपी ने राजनीतिक रूप से अहले सुन्नत वाल जमात के रूप में पुनर्गठन किया, जबकि कई आतंकवादी भूमिगत रूप से सक्रिय रहते हैं।

प्रमुख आतंकवादी घटनाएँ—

केपी ने कई साम्प्रदायिक और आतंकवाद-सम्बन्धी घटनाओं को देखा है। शिया समुदायों को बार-बार निशाना बनाया गया है। 2022 में, एक आत्मघाती हमलावर ने पेशावर के करमा इलाके में एक शिया मस्जिद पर हमला किया, जिसमें 60 से अधिक उपासक मारे गए। केपी में वर्षों में यह शियाओं पर सबसे बड़ा हमला था। नवम्बर, 2024 में बंदूकधारियों ने कुर्रम जिले में शिया यात्रियों के एक काफिले पर घात लगाकर हमला किया, जिसमें 40 लोग मारे गए। ये पाराचिनार-कुर्रम क्षेत्र में व्यापक झड़पों का हिस्सा थे, जहाँ साम्प्रदायिक हिंसा में 2024 के अन्त में 130 से अधिक लोग मारे गए। ऐसे हमलों का दावा सुन्नी विद्रोहियों (तहरीक-ए-तालिबान पाकिस्तान और सम्बद्ध समूहों) ने किया, जो शियाओं को विधर्मी बताते हैं।

पाकिस्तानी शिया शोकाकुल लोग नवम्बर, 2024 में कुर्रम जिले में शिया यात्रियों पर हमले के बाद विरोध प्रदर्शन करते हुए। खैबर पख्तूनख्वा में इन हत्याओं ने राष्ट्रव्यापी आक्रोश पैदा किया और साम्प्रदायिक हिंसा को बढ़ावा देने वाले सामुदायिक तनाव को रेखांकित किया।

सुन्नी लक्ष्यों को भी नुकसान उठाना पड़ा है। लश्कर-ए-इस्लाम (पूर्व जनजातीय बेल्ट में एक आतंकवादी समूह) ने पाकिस्तानी सेनाओं और प्रतिद्वन्द्वी इस्लामवादियों के साथ झड़पें की, कभी-कभी सूफी मजारों (जिन्हें गैर-इस्लामिक माना जाता है) को जला दिया। हालांकि संख्या में कम, साम्प्रदायिक हमलों के बाद प्रतिशोध में सुन्नी पीड़ितों की रिपोर्ट भी की गई है (जैसे सांप्रदायिक हमलों के बाद प्रतिशोध में सुन्नी झाड़वरो की हत्या)। अन्य प्रमुख घटनाओं में स्वात तालिबान विद्रोह



(2007–2009) शामिल है, जिसका नेतृत्व मौलाना फजलुल्लाह ने किया था, जो स्पष्ट रूप से सांप्रदायिक नहीं था, लेकिन इसने स्थानीय पख्तूनों पर कठोर शरिया लागू की और उन्हें निशाना बनाया जिन्हें वह गैर-इस्लामिक मानते थे (जिसमें संगीत और महिलाओं की गतिविधियों पर प्रतिबन्ध शामिल थे)। 2007 में इस्लामाबाद के लाल मस्जिद की घेराबन्दी में भी साम्प्रदायिक रंग था, क्योंकि यह एक कट्टरपंथी धार्मिक विद्वान (देवबन्दी स्कूल) और राज्य के बीच था। कुर्रम में, 2007 (200 से अधिक मारे गए, सुन्नियों को पाराचिनार से निष्कासित कर दिया गया) और फिर 2012 और 2017 में आत्मघाती बमबारी के साथ ऐतिहासिक उभार हुए। हर मामले में, हिंसा ने सशस्त्र आतंकवादियों की रणनीति को दर्शाया— बमबारी, गोलीबारी और अल्पसंख्यकों को डराना। ये घटनाएँ केपी में साम्प्रदायिक विचारधाराओं के घातक अभिव्यक्ति को उजागर करती हैं।

राज्य की भूमिका—

पाकिस्तान की राज्य और सुरक्षा तंत्र ने सांप्रदायिक संघर्ष में जटिल भूमिकाएँ निभाई हैं। क्राइसिस ग्रुप नोट करता कि अधिकारियों ने “अक्सर साम्प्रदायिक आतंकवाद को नजरअंदाज किया है” या केवल बल के साथ प्रतिक्रिया दी। जिया के शासन के दौरान, साम्प्रदायिक समूहों को कभी-कभी मौन समर्थन मिलता था यदि वे शासन के लक्ष्यों (जैसे ईरान-विरोधी नीतियों या पंजाबी वोट बैंक) के साथ संरेखित होते थे। खुफिया एजेंसियों ने 1980 के दशक में जिहादी लड़ाकों की भर्ती की, जिनमें से कुछ बाद में शिया लक्ष्यों पर टूट पड़े। क्रमिक सरकारों ने भी सुविधा के लिए साम्प्रदायिक संगठनों पर प्रतिबन्ध लगाने और उन्हें वैध बनाने के बीच झूला खाया है। उदाहरण के लिए, एसएसपी/एलईजे पर कई बार प्रतिबन्ध लगाया गया, लेकिन इसके नेताओं को अक्सर रिहा कर दिया गया, जिससे उन्हें पुनर्गठित होने की अनुमति मिली। हाल ही में, केपी की प्रान्तीय सरकार ने सार्वजनिक रूप से साम्प्रदायिकता की निंदा की है। 2024 के अन्त में केपी के मुख्यमंत्री ने चेतावनी दी कि “जो कोई भी हथियार उठाएगा, उसे आतंकवादी माना जाएगा” और जोर देकर कहा कि सुरक्षा बल हिंसा प्रभावित कुर्रम में मौजूद रहेंगे। फिर भी, आलोचकों का तर्क कि प्रवर्तन में अभी भी कमियाँ हैं। न्यायपालिका की घृणा भाषण (जैसे ईशनिंदा के उपदेश) और मदरसा निगरानी के ढीले संचालन ने साम्प्रदायिक बयानबाजी को फलने-फूलने में सक्षम बनाया है।

स्थानीय स्तर पर, जनजातीय क्षेत्रों में कानून-व्यवस्था कभी-कभी विफल हो गई है। कुर्रम दशकों तक प्रभावी रूप से केन्द्रीय नियंत्रण से बाहर था। राज्य प्रशासन केवल 2018 में एफएटीए के केपी में विलय के बाद ही विस्तारित हुआ। जनजातीय झगड़े (अक्सर जमीन पर) साम्प्रदायिक निष्ठाओं के साथ ओवरलैप हो गए हैं, जिससे बदले के चक्र पैदा हुए हैं जिन्हें स्थानीय पुलिस तोड़ने में संघर्ष करती है। सेना ने ऑपरेशन (जैसे स्वात 2009) शुरू किए जिन्होंने तालिबान विद्रोह को दबा दिया लेकिन साम्प्रदायिक आतंकवाद को पूरी तरह से सम्बोधित नहीं किया। संक्षेप में, राज्य की प्रतिक्रिया ने कठोर कार्रवाई और राजनीतिक समायोजन के बीच झूला खाया है। विश्लेषकों का तर्क है कि एक अधिक सक्रिय रणनीति की आवश्यकता है जो उकसाने पर मुकदमा चलाए और आतंकवादी नेटवर्क को नष्ट करे न कि केवल विद्रोहियों को मारे। ऐसे मिश्रित परिणामों का मतलब है कि राज्य की कार्रवाई केपी के युद्धक्षेत्र में एक विवादास्पद कारक बनी हुई है। सुरक्षा बल आतंकवादियों का लक्ष्य हैं और कभी-कभी साम्प्रदायिक गतिशीलता के सुविधाकर्ता भी।

विदेशी विचारधारात्मक प्रभाव—

केपी का साम्प्रदायिक संघर्ष विदेशी विचारधाराओं और भू-राजनीतिक प्रतिद्वन्द्विता से गहराई से जुड़ा हुआ है। 1970 और 1980 के दशक के अन्त में, पाकिस्तान शीत युद्ध और ईरान-इराक-सऊदी प्रतिद्वन्द्विता के लिए एक मोर्चा बन गया। 1979 की ईरानी क्रांति का एक भूकम्पीय प्रभाव था। पाकिस्तानी शियाओं ने ईरान की धार्मिक विजय से सशक्त महसूस किया, जिससे घर पर संगठित शिया राजनीति में योगदान मिला। इसके विपरीत, सऊदी अरब और अन्य खाड़ी राज्यों ने पाकिस्तानी मदरसों और दान संगठनों को वित्तपोषित किया, जिससे वहाबी/सलाफी सिद्धान्त फैला जिसने कई देवबन्दी उलेमा को प्रभावित किया। कुबरा और झेन (2022) इस बात को रेखांकित करते हैं कि पाकिस्तान “सऊदी और ईरान से गैर-राज्य अभिनेताओं के लिए एक उपयुक्त आश्रयस्थल” बन गया, जो अपने साम्प्रदायिक एजेंडे को आगे बढ़ा रहे थे। इस बाहरी हस्तक्षेप ने आंतरिक विभाजनों को तेज कर दिया। दशकों से ईरान और सऊदी अरब दोनों पर प्रभाव हासिल करने के लिए साम्प्रदायिक समूहों को प्रायोजित करने का आरोप लगाया गया है, जिससे पाकिस्तान ‘ईरान-सऊदी साम्प्रदायिक लड़ाई’ का रंगमंच बन गया है।

अफगान संघर्ष ने भी विदेशी तत्वों को आयात



किया। सोवियत-विरोधी जिहाद के दौरान, अमेरिका और पाकिस्तान ने जनजातीय क्षेत्रों में संसाधन डाले, जिससे जिहाद और साम्प्रदायिक युद्ध का महिमामंडन करने वाला साहित्य आया।

2001 के बाद, अफगान तालिबान और अल-कायदा के लड़ाके केपी में शरण लेने लगे कुछ स्थानीय विद्रोहों में शामिल हो गए। हाल के वर्षों में, आईएसआईएस-खोरासान प्रांत (आईएसकेपी) का उदय एक अंतरराष्ट्रीय घटना है। केपी में इसके भर्ती किए गए कई पूर्व-टीटीपी आतंकवादी हैं, जो मध्य पूर्वी और अफगान जिहादी नेटवर्क द्वारा कट्टर बनाए गए थे। जैसा कि ऊपर उद्धृत किया गया है, आईएसकेपी ने केपी में प्रमुख हमलों (जैसे 2022 पेशावर बमबारी) का दावा किया है। यहाँ तक कि ईरान के रिवोल्यूशनरी गार्ड जैसे साम्प्रदायिक विचारकों पर कभी-कभी शिया मिलिशिया का समर्थन करने का आरोप लगाया गया है। संक्षेप में, विदेशी विचारधारात्मक प्रभावों ने केपी के साम्प्रदायिक लड़ाइयों को संसाधन, वैधता और योद्धा प्रदान किए हैं। इनमें अल-कायदा/आईएसआईएस द्वारा फैलाई गई वैश्विक जिहादी कथा, साथ ही रियाद और तेहरान से राज्य-समर्थित कथाएं शामिल हैं।

परिणाम यह है कि स्थानीय विवाद अक्सर क्षेत्रीय महत्व ले लेते हैं, और केपी में आतंकवादी नेटवर्क व्यापक मध्य पूर्वी संघर्षों से जुड़े हुए हैं।

सामाजिक-सांस्कृतिक परिणाम—

आतंकवादी साम्प्रदायिकता का उदय केपी के समाज और संस्कृति को गहराई से प्रभावित कर चुका है। लम्बे समय से चली आ रही बहुलवादी परम्पराएँ नष्ट हो गई हैं। उदाहरण के लिए— शिया तीर्थयात्रियों की घातक टारगेटिंग ने केपी के शिया समुदायों के बीच डर बोया है। कई अब सार्वजनिक सभाओं से बचते हैं और कुछ संघर्ष क्षेत्रों से पलायन कर गए हैं। शैक्षिक और सांस्कृतिक जीवन बाधित हुआ है।

तालिबान और साम्प्रदायिक समूहों ने स्वात जैसे क्षेत्रों में लड़कियों की शिक्षा पर प्रतिबन्ध लगा दिया और मनोरंजन पर सेंसर लगा दिया, जिससे पख्तून सामाजिक मानदण्डों को कमजोर किया गया। सूफी प्रथाएँ (जो लम्बे समय से इस क्षेत्र में आम थीं) कट्टरपंथियों के हमलों का शिकार हुई हैं, जिससे कुछ स्थानीय मजारों का विनाश हुआ है और रूढ़िवादिता बढ़ी है। सामुदायिक सम्बन्ध टूट गए हैं। जहाँ एक बार सुन्नी और शिया जनजातीय सदस्य आपस में विवाह करते थे और संयुक्त रूप से जिरगा

(परम्परागत सभा) आयोजित करते थे, वहीं अब पाराचिनार / कुर्रम जैसे क्षेत्रों में साम्प्रदायिक/रुबीकरण के कारण अलग-अलग बस्तियाँ बन गई हैं। शांति मार्च और अंतरधार्मिक संवाद जैसी नागरिक समाज पहले भी उभरी हैं, परन्तु ये अभी नाजुक अवस्था में हैं।

आर्थिक रूप से, हिंसा ने बाजारों और यातायात को गंभीर रूप से बाधित किया है। 2024 में कुर्रम में नाकाबंदी के दौरान सप्ताहों तक आपूर्ति ठप रही, जिससे आम लोगों को भारी कठिनाइयों का सामना करना पड़ा। संक्षेप में, साम्प्रदायिक हिंसा ने दोनों पक्षों में प्रतिशोध और पीड़ा के चक्र को जन्म दिया है, जिससे पीढ़ीगत नफरत की गहरी खाइयाँ बन गई हैं। जैसा कि एक स्थानीय नेता ने 2007 के संघर्षों को “अकथनीय हिंसा के कृत्य” बताया था, वह भावना आज भी समाज में गहराई से रच-बस गई है।

चर्चा—

साक्ष्य एक जटिल तस्वीर प्रस्तुत करता है। एक स्पष्ट पैटर्न यह है कि खैबर पख्तूनख्वा में साम्प्रदायिकता विकसित हुई है, जो कभी मुख्य रूप से एक सुन्नी-शिया संघर्ष (शियाओं के खिलाफ देवबंदी आतंकवाद द्वारा संचालित) था, वह अब व्यापक हो गया है। जैसा कि क्राइसिस ग्रुप नोट करता है, “साम्प्रदायिक आतंकवाद अब सुन्नी इस्लामवादी समूहों के पूरे स्पेक्ट्रम तक फैल गया है, “ जिसमें बरेलवी और सलाफी गुट शामिल हैं। यह बदलाव कुछ हद तक विरोधाभासी है, क्योंकि बरेलवी इस्लाम परम्परागत रूप से कम टकरावपूर्ण रहा है। यह सुझाव देता है कि राजनीतिक और रणनीतिक विचार (जैसे ईशानिन्दा की भावनाओं का शोषण) धार्मिक मतभेदों को ओवरराइड कर सकते हैं।

एक अन्य प्रमुख निष्कर्ष संदर्भ का महत्व है— भूमि और सत्ता पर स्थानीय विवाद अक्सर साम्प्रदायिक शब्दावली में लपेटे जाते हैं। उदाहरण के लिए, बोशेहरा में कुर्रम भूमि विवाद एक जनजातीय विवाद के रूप में शुरू हुआ लेकिन साम्प्रदायिक रेखाओं के साथ भड़क उठा। इस प्रकार, साम्प्रदायिक हिंसा को केवल धर्मशास्त्र या विदेशी प्रभाव से नहीं समझा जा सकता, यह भौतिक शिकायतों में भी निहित है।

विरोधाभास भी सामने आते हैं। मुस्लिम राष्ट्र के रूप में पाकिस्तान की पहचान इसकी बहु-साम्प्रदायिक वास्तविकता के साथ संघर्ष करती है। कुछ अहिंसक इस्लामी राजनीतिक दलों (जैसे जेयूआई-एस, जिसने 2002-2007 में केपी पर शासन किया) को राष्ट्रवादी



शासन और साम्प्रदायिक रुख की मांग करने वाले धार्मिक समर्थकों के बीच संतुलन बनाना पड़ा है। एक अन्य विरोधाभास राज्य की दोहरी भूमिका है। यह सिद्धान्त रूप में साम्प्रदायिक हत्या को प्रतिबन्धित करता है, फिर भी कभी-कभी विदेश में इस्लामवादी प्रॉक्सी के साथ सम्बन्ध रखने का आरोप लगाया जाता है। धर्मनिरपेक्ष राष्ट्रवादी नेताओं (जैसे बेनजीर भुट्टो) का उदय अक्सर साम्प्रदायिक तनाव के प्रकोप के साथ मले खाता है, जो इंगित करता है कि आन्तरिक सत्ता संघर्ष धर्म के शोषण को बढ़ावा दे सकते हैं।

व्यापक निहितार्थ महत्वपूर्ण हैं। खैबर पख्तूनख्वा का अनुभव दर्शाता है कि कैसे आधुनिक संघर्ष विचारधारा और व्यावहारिकता को मिलाते हैं। आतंकवादी सत्ता संघर्षों और अन्तरराष्ट्रीय राजनीति में धर्म को एक उपकरण के रूप में उपयोग करते हैं। यह पाकिस्तान की सामाजिक एकजुटता की नाजुकता को भी दर्शाता है। गहन बहुलवाद कभी स्वाभाविक माना जाता था, लेकिन अब घेराबंदी में है। महत्वपूर्ण रूप से, विश्लेषण से पता चलता है कि हिंसा को कम करने के लिए केवल सैन्य कार्रवाई से अधिक की आवश्यकता है, इसमें वैचारिक कथनों और सामाजिक-आर्थिक असमानताओं को संबोधित करना शामिल है।

निष्कर्ष—

खैबर पख्तूनख्वा के “पवित्र हिंसा” के इस अध्ययन से पता चलता है कि पाकिस्तान में साम्प्रदायिकता केवल धार्मिक विवाद की विरासत नहीं है, बल्कि एक गतिशील, बहुआयामी संघर्ष है। प्रमुख निष्कर्षों में शामिल हैं—

1. ऐतिहासिक कारक — जिया-उल-हक के सुन्नी— केन्द्रित इस्लामीकरण और अफगान जिहाद ने साम्प्रदायिक जुटाव लिए उपजाऊ जमीन तैयार की।

2. कर्ताओं का विस्तार— समय के साथ, विभिन्न इस्लामी स्कूलों (देवबंदी, बरेलवी, सलाफी) के चरमपंथी समूह संघर्ष में शामिल हो गए हैं।

3. राज्य की भूमिका — पाकिस्तानी अधिकारियों की असंगत नीतियों और रणनीतिक विकल्पों ने कभी-कभी विभाजन को बढ़ावा दिया है।

4. बाहरी कारक — विदेशी विचारधाराओं और प्रतिद्वन्द्विताओं (सऊदी बनाम ईरानी प्रभाव, अफगान तालिबान, वैश्विक जिहाद) ने साम्प्रदायिक पहचानों को तीव्र किया है।

5. स्थानीय शिकायतें — जनजातीय और आर्थिक विवाद अक्सर साम्प्रदायिक नारों के तहत भड़क

उठते हैं, जिसके घातक परिणाम होते हैं।

नीति के लिए, इन निष्कर्षों का तात्पर्य है कि व्यापक रणनीतियों की आवश्यकता है— नफरत—विरोधी कानूनों को लागू करना, मदरसों में सुधार, अंतर-साम्प्रदायिक संवाद को बढ़ावा देना, और जनजातीय क्षेत्रों को अधिक प्रभावी ढंग से एकीकृत करना। कराची जैसे नागरिक विरोध (जैसे 2024 कुर्रम हमलों के बाद) जवाबदेही और सुलह की मांग करते हैं। आगे के शोध के लिए खैबर पख्तूनख्वा में साम्प्रदायिक समुदायों की सूक्ष्म स्तरीय गतिशीलता और साम्प्रदायिक प्रचार फैलाने में डिजिटल मीडिया की भूमिका पर ध्यान देने की आवश्यकता है।

आईएसकेपी और लब्बेक जैसे नए कर्ताओं पर निगरानी महत्वपूर्ण होगी। अन्तः, खैबर पख्तूनख्वा को स्थिर करने के लिए धार्मिक पहचान पर वैचारिक लड़ाई और उन संरचनात्मक मुद्दों (गरीबी, शासन) को सम्बोधित करना होगा जो उग्रवादियों को विश्वास का शोषण करने में सक्षम बनाते हैं। केवल ऐतिहासिक विभाजनों को पाटकर और चरमपंथी कथनों का मुकाबला करके ही पाकिस्तान अपने संस्थापकों द्वारा परिकल्पित “सहिष्णुता और भाईचारे” की ओर बढ़ सकता है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. अली, एम. (2024, 22 नवम्बर), पाकिस्तानी शहर में हंगामा : बस काफिले में 40 शियाओं की गोलीबारी के बाद, रॉयटर्स।
2. अली, एम., और ग्रीनफील्ड, सी. (2024, 1 दिसम्बर), पाकिस्तान में साम्प्रदायिक झड़पों में मरने वालों की संख्या अब 130 से अधिक, अधिकारी का बयानरॉय टर्स।
3. क्राइसिस ग्रुप — (2022), पाकिस्तान में साम्प्रदायिक हिंसा का नया युग (एशिया रिपोर्ट नवम्बर 327), अन्तर्राष्ट्रीय संकट समूह।
4. कुबरा, ए., और झेन, जे. (2022), पाकिस्तान के साम्प्रदायिक संघर्ष में सऊदी अरब और ईरान का कारक, ओपन जर्नल ऑफ सोशल साइंसेज, 10 (5), 168–185।
5. रहमान, जेड. यू. (2024, 1 दिसम्बर), कुर्रम के खूनी चक्रों की जड़ें. डॉन।
6. यूसुफ, एच. (2012). साम्प्रदायिक हिंसा: पाकिस्तान की सबसे बड़ी सुरक्षा चुनौती ? (छक्क रिपोर्ट, जुलाई 2012). नॉर्वेजियन पीस बिल्डिंग रिसोर्स सेंटर।
7. जमान, एम.क्यू. (1998), पाकिस्तान में साम्प्रदायिकता : शिया और सुन्नी पहचान का उग्रवाद, मॉडर्न एशियन स्टडीज, 32 (3), 689–716।



Received: 06 Feb., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं में सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति के प्रति जागरुकता का अध्ययन (लखनऊ जिले के सन्दर्भ में)



— डॉ. प्रीती द्विवेदी
एसोसिएट प्रोफेसर —
समाजशास्त्र विभाग,
महिला महाविद्यालय (पी. जी.)
कॉलेज, किदवईनगर,
कानपुर-208011 (उ.प्र.)

ई-मेल:
preetidwivedi1000@gmail.com

शोध सारांश

प्रस्तुत शोधपत्र असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं की समस्याओं को समझने का एक प्रयास है। शोध में असंगठित क्षेत्र में कार्यरत कुल 60 महिला श्रमिकों को यादृच्छिक विधि से चुना गया। जिसमें घरेलू कामकाज, भवन-निर्माण, फल व सब्जी विक्रेताओं को शामिल किया गया है। महिला उत्तरदाताओं से साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग करके आंकड़ों को एकत्र किया गया। असंगठित क्षेत्र की विशेषता प्राकृतिक निर्भरता, अनुबन्ध कार्य, असुरक्षित वातावरण, निम्न आय, कानून तथा अधिकार से वंचित, कौशल और शिक्षा की कमी है। जिसके कारण असंगठित क्षेत्र के श्रमिकों को खराब स्वास्थ्य स्थिति, काम में उत्पीड़न, अपर्याप्त और असमान वेतन संरचना, घटिया आवास सुविधाएँ, सुरक्षा उपायों की कमी, महिला श्रमिकों पर अत्याचार और श्रमिकों के बच्चों के लिए उचित शिक्षा न होने जैसी समस्याओं का सामना करना पड़ता है। अतः असंगठित श्रमिकों के सामाजिक तथा आर्थिक स्थिति में सुधार के लिए सरकारी तथा कानूनी स्तर पर आवश्यक कदम उठाये जाने की आवश्यकता है।

शब्दकुँजी — असंगठित क्षेत्र, सामाजिक-आर्थिक स्थिति, सरकार, महिलाएं।

प्रस्तावना—

विकासशील अर्थव्यवस्था के श्रम बल में दो व्यापक क्षेत्र शामिल हैं, संगठित और असंगठित। संगठित क्षेत्र को उस क्षेत्र के रूप में परिभाषित किया जा सकता है जिसमें केन्द्र, राज्य और स्थानीय सरकार द्वारा दी जाने वाली गतिविधियाँ शामिल हैं। इसमें पूरी तरह से वेतनभोगी श्रम शामिल हैं और वे श्रम कानून द्वारा संरक्षित हैं। इस क्षेत्र में श्रम उत्पादकता अधिक होने की संभावना है। यहाँ तक संगठित क्षेत्र में कार्यशील लोगों की आय भी अपेक्षाकृत अधिक है, जो काफी हद तक संघबद्ध है। दूसरी ओर असंगठित क्षेत्र जिसमें दावाकृत वेतनभोगी या 'श्रमजीवी निर्धन' शामिल है, जो अकस्मात् और प्राकृतिक बाधाओं के कारण बड़े पैमाने पर गैर-संघबद्ध है। भारत में अधिकांश कार्यबल असंगठित क्षेत्र में शामिल है। यह क्षेत्र निम्न वेतन, अस्थिर और अनियमित रोजगार तथा कानून या ट्रेड यूनियनों से सुरक्षा की कमी से चिन्हित है। असंगठित क्षेत्र के अन्तर्गत छोटे और सीमान्त किसान, भूमिहीन खेतिहर मजदूर, पशुपालक, बीड़ी बनाने वाले श्रमिक, भवन निर्माण में कार्यरत



श्रमिक, बंधुआ मजदूर, प्रवासी मजदूर, सब्जी व फल विक्रेता तथा न्यूज पेपर विक्रेता आदि आते हैं। असंगठित क्षेत्र में महिला श्रमिकों की अत्यधिक माँग कृषि, निर्माण क्षेत्र और घरेलू कार्यों में होती है। आमतौर पर महिलाएं इस तरह के कार्य अपनी एवं परिवार की आजीविका के लिए करती हैं। बड़े पैमाने पर गरीब तथा अशिक्षित महिलाओं के लिए असंगठित क्षेत्र रोजगार का एक अवसर हैं, जिसमें वे बिना अधिकार के कार्य करती हैं।

असंगठित श्रमिक श्रम संघ सम्बन्धी अधिनियमों से प्रशासित नहीं होते क्योंकि जिन प्रतिष्ठानों में वे काम करते हैं, वहाँ ऐसे अधिनियम लागू नहीं होते हैं। इसलिए उनके कार्यदशा भी सुरक्षित नहीं होती जिससे स्वास्थ्य सम्बन्धी समस्याएं बहुत बड़ी संख्या में लगातार देखने को मिलती हैं। साथ ही उन्हें चिकित्सा देखभाल, दुर्घटना मुआवजा, वेतन सहित अवकाश और पेंशन योजनाओं का लाभ भी नहीं मिल पाता। इस तरह जहाँ एक ओर इनकी सामाजिक सुरक्षा का बड़ा और अहम सवाल है वहीं दूसरी तरफ बालश्रम, महिलाओं को वेतन असमानता और उनका शारीरिक, मानसिक तथा यौन शोषण व उनका अधिकार हनन आम बात है।

यह अध्ययन मुख्य रूप से असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं पर केन्द्रित है। उन्हें कार्यस्थल पर कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है जैसे— कम वेतन, भुगतान रहित अतिरिक्त काम और स्वास्थ्य सम्बन्धित समस्याएं। उनमें अधिकारों से सम्बन्धित सरकारी योजनाओं के बारे में जागरूकता का स्तर बहुत कम होता है। सरकार को इन महिला श्रमिकों के अधिकारों

को सुनिश्चित करने के लिए कानूनी योजना बनानी चाहिए। समाज में असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं की समस्याओं और मुद्दों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए ताकि वे स्वयं को आत्मनिर्भर बना सकें।

उद्देश्य—

यह अध्ययन मुख्य रूप से निम्नलिखित उद्देश्य पर केन्द्रित है—

(1) असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं की सामाजिक तथा आर्थिक पृष्ठभूमि को समझना।

(2) असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं का अपने कार्यक्षेत्र में लैंगिक भेदभाव व कार्य संतुष्टि का अध्ययन।

अनुसंधान की पद्धति—

अध्ययन के लिए लखनऊ जिले के कल्ली पश्चिम क्षेत्र को लिया गया है। प्राथमिक आंकड़ों को एकत्र करने के लिए साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग किया गया है तथा द्वितीयक आंकड़ों को एकत्र करने के लिए पुस्तकों, प्रकाशित पत्रिकाओं, शोधपत्रों एवं वेबसाइट का उपयोग किया गया है। असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिला उत्तरदाताओं से साक्षात्कार अनुसूची का उपयोग करके आंकड़ों को एकत्र किया गया। अध्ययन के लिए असंगठित क्षेत्र में कार्यरत कुल 60 महिला श्रमिकों को यादृच्छिक विधि से चुना गया।

असंगठित क्षेत्र में कार्यरत उत्तरदाताओं के रूप में चयनित महिला श्रमिकों का प्रकार निम्नलिखित तालिका में दिखाया गया है— (तालिका देखें)

असंगठित क्षेत्र में कार्यरत उत्तरदाताओं के रूप में चयनित महिला श्रमिक

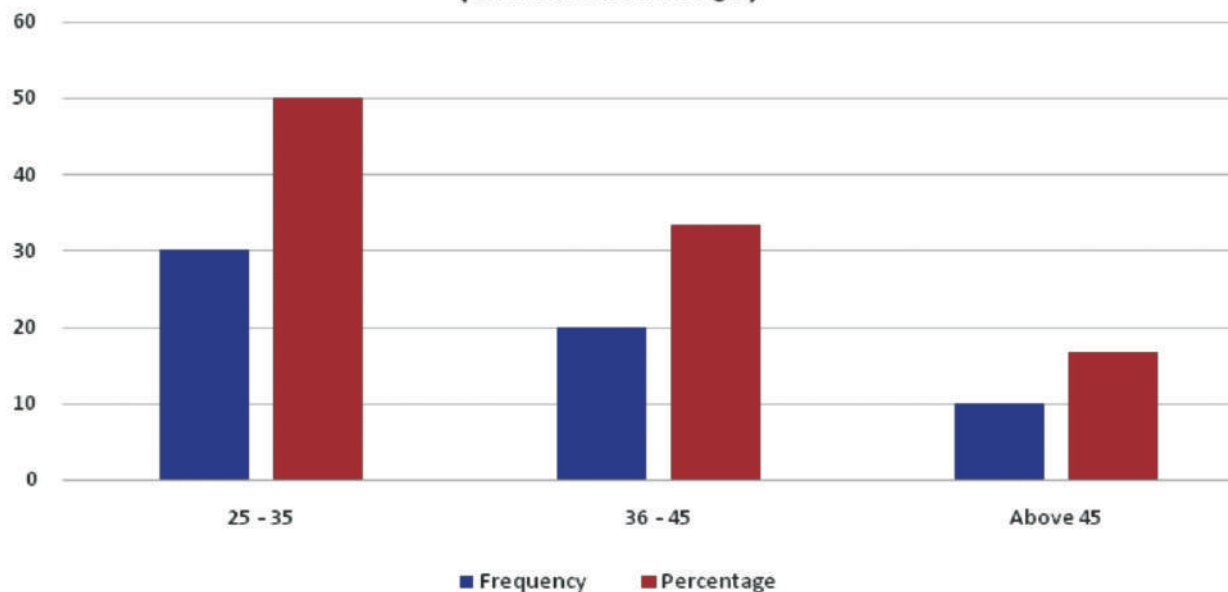
उत्तरदाताओं का प्रकार	उत्तरदाताओं की सं०
घरेलू कामकाज करने वाली महिलाएं	20
निर्माण कार्य करने वाली महिलाएं	20
फल व सब्जी बेचने वाली महिलाएं	20
कुल योग	60

तालिका (1) आयु के आधार पर

आयु	आवृत्ति	प्रतिभात
25—35	30	50
36—45	20	33.33
45 से ऊपर	10	16.66



(Chart-1 Based on Age)



तालिका (2) शिक्षा के आधार पर

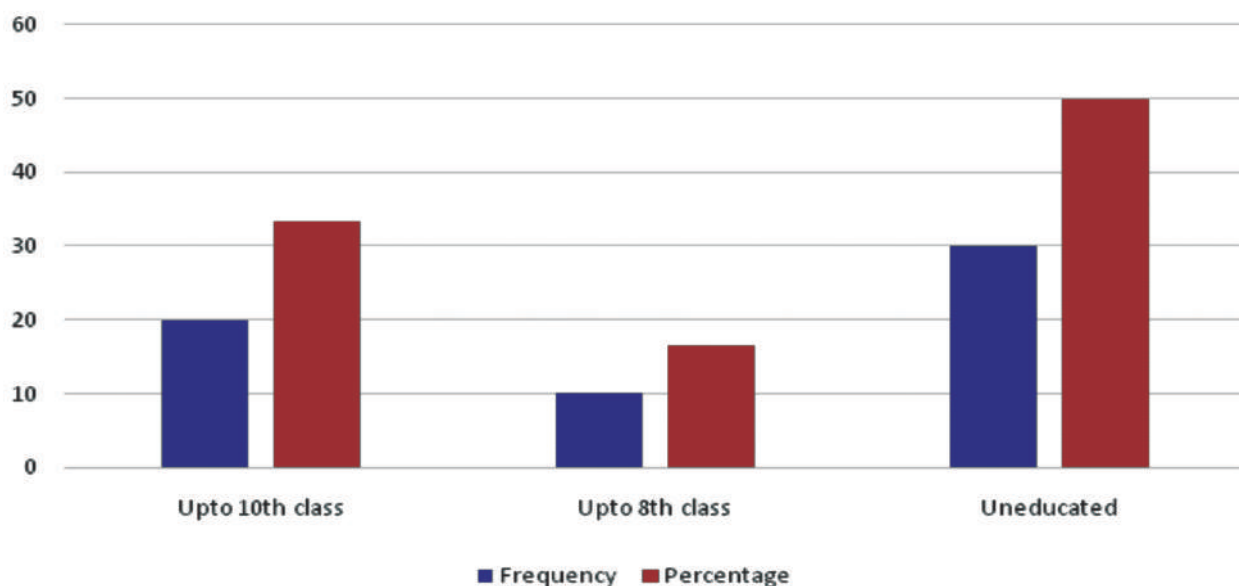
शिक्षा	आवृत्ति	प्रतिशत
10वीं कक्षा तक	20	33.33
8वीं कक्षा तक	10	16.66
बिना पढ़ी लिखी	30	50

ऑकड़ों का विश्लेषण –

महिलाएँ थीं।

पिछले पृष्ठ की तालिका-1 आयु के आधार पर तालिका-2 शिक्षा के आधार पर शिक्षा पर के ऑकड़ों का विश्लेषण करने पर ज्ञात होता है कि 25-35 आधारित इस तालिका-2 में 10वीं कक्षा तक के आयु वर्ग की 50 प्रतिशत, 36-45 आयुवर्ग की 33.33 उत्तरदाताओं में 33.33 प्रतिशत, 8वीं कक्षा तक 16.66 प्रतिशत तथा 45 से ऊपर आयुवर्ग की 16.66 प्रतिशत प्रतिशत तथा बिना पढ़ी लिखी महिलाओं का प्रतिशत

(Chart-2 Based on Education)

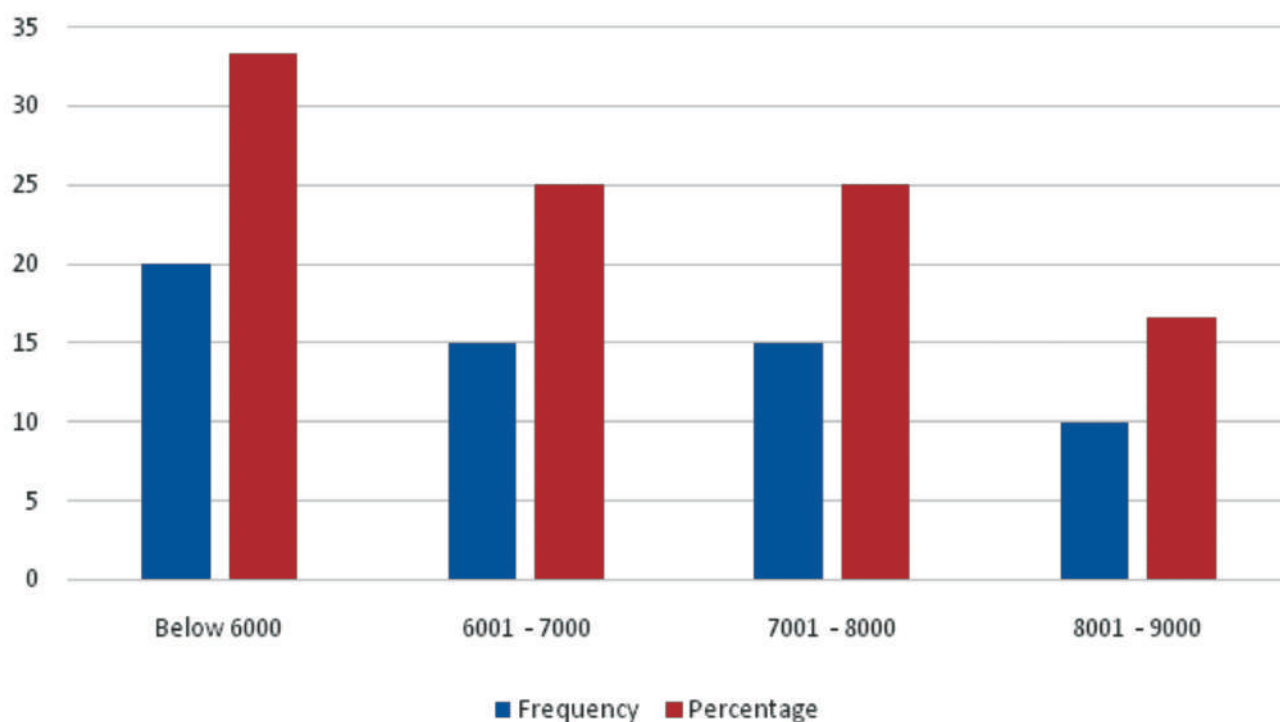




तालिका (3) आय के आधार पर

आय	आवृत्ति	प्रतिशत
6000 से कम	20	33.33
6001 — 7000	15	25
7001 — 8000	15	25
8001 — 9000	10	16.66

(Chart-3 On the basis of Income)



सर्वाधिक अर्थात् 50 प्रतिशत रहा। (तालिका-2 देखें)

आय के आधार पर प्रस्तुत की गयी तालिका-3 से पता चलता है कि 33.33 प्रतिशत महिला उत्तरदाताओं की मासिक आय 6000 से कम है। 50 प्रतिशत उत्तरदाताओं की मासिक आय 6001 से 8000 के बीच है तथा 16.66 प्रतिशत उत्तरदाताओं की मासिक आय 8001 से 9000 के बीच है। अशिक्षा इन महिलाओं के सामाजिक-आर्थिक क्षेत्र में मिलने वाली चुनौतियों का एक बहुत बड़ा कारण है। (क्रमांक तालिका-3 देखें)

कार्य सन्तुष्टि के आधार पर दी गयी तालिका-4 के निष्कर्षों से पता चलता है कि केवल 33.33 प्रतिशत महिलाएं ही अपने कार्य से सन्तुष्ट हैं जब कि 66.66 प्रतिशत महिलाएं ऐसी हैं जो अपने कार्य से सन्तुष्ट नहीं हैं। अधिकतर महिलाओं ने कार्य के अधिक घण्टे, कम वेतन, समय पर वेतन ना मिल पाना, लैंगिक उत्पीड़न आदि को

कार्य असन्तुष्टि का बहुत बड़ा कारण बताया है। (तालिका-4 अगले पृष्ठ पर देखें)

तालिका (5) लैंगिक असमानता पर आधारित— इस तालिका-5 में 33.33 प्रतिशत महिलाएं ऐसी हैं जिनको अपने कार्य के दौरान लैंगिक असमानता का सामना नहीं करना पड़ता है जब कि 66.66 प्रतिशत महिलाएं वेतन सम्बन्धित लैंगिक असमानता की स्थिति का सामना करती हैं। जिनमें ज्यादातर निर्माण कार्य में लगी महिलाएं शामिल हैं। (क्रमांक तालिका-5 अगले पृष्ठ पर देखें)

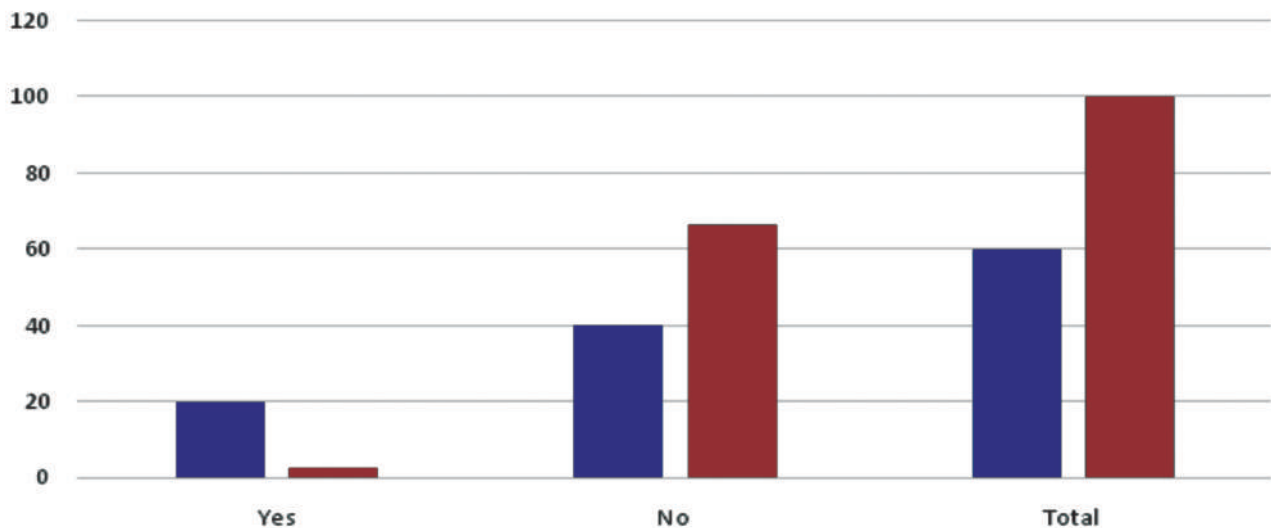
तालिका (6) सरकारी नीतियों के प्रति जागरुकता के आधार पर सरकारी नीतियों के प्रति जागरुकता के आधार पर प्रस्तुत की गयी तालिका-6 से पता चलता है कि केवल 16.66 प्रतिशत महिला श्रमिकों को सरकारी नीतियों के बारे में जानकारी है जबकि 83.33



तालिका (4) कार्य सन्तुष्टि के आधार पर

कार्य सन्तुष्टि	उत्तरदाताओं की संख्या	प्रतिभात
हाँ	20	33.33
नहीं	40	66.66
कुल योग	60	100

(Chart-4 On the basis of job satisfaction)

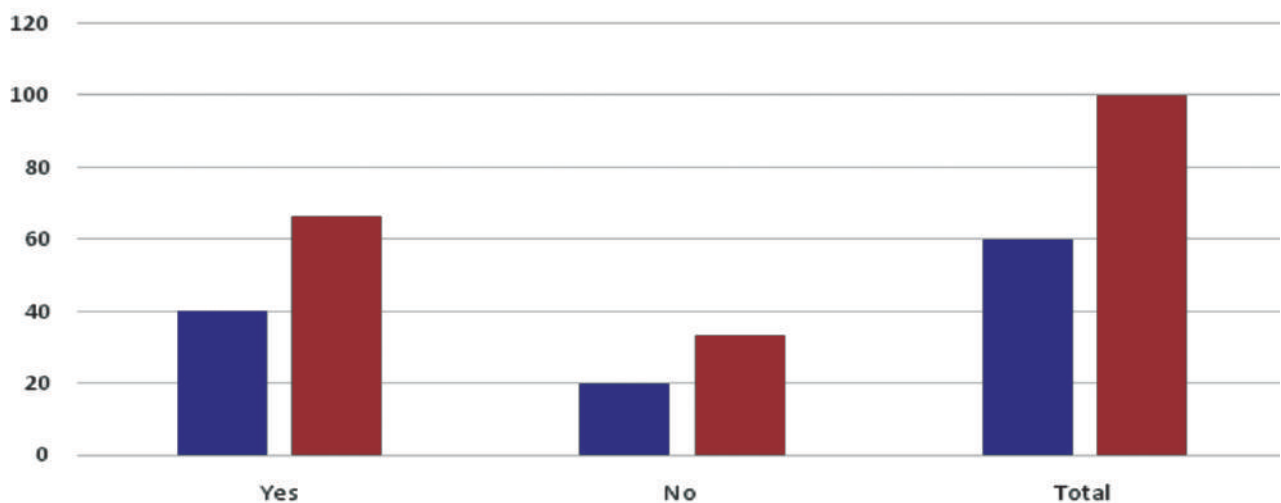


■ No. of Respondents ■ Percentage

तालिका (5) लैंगिक असमानता के आधार पर

लैंगिक असमानता	उत्तरदाताओं की सं०	प्रतिभात
हाँ	40	66.66
नहीं	20	33.33
कुल योग	60	100

(Chart-5 On the basis of gender inequality)



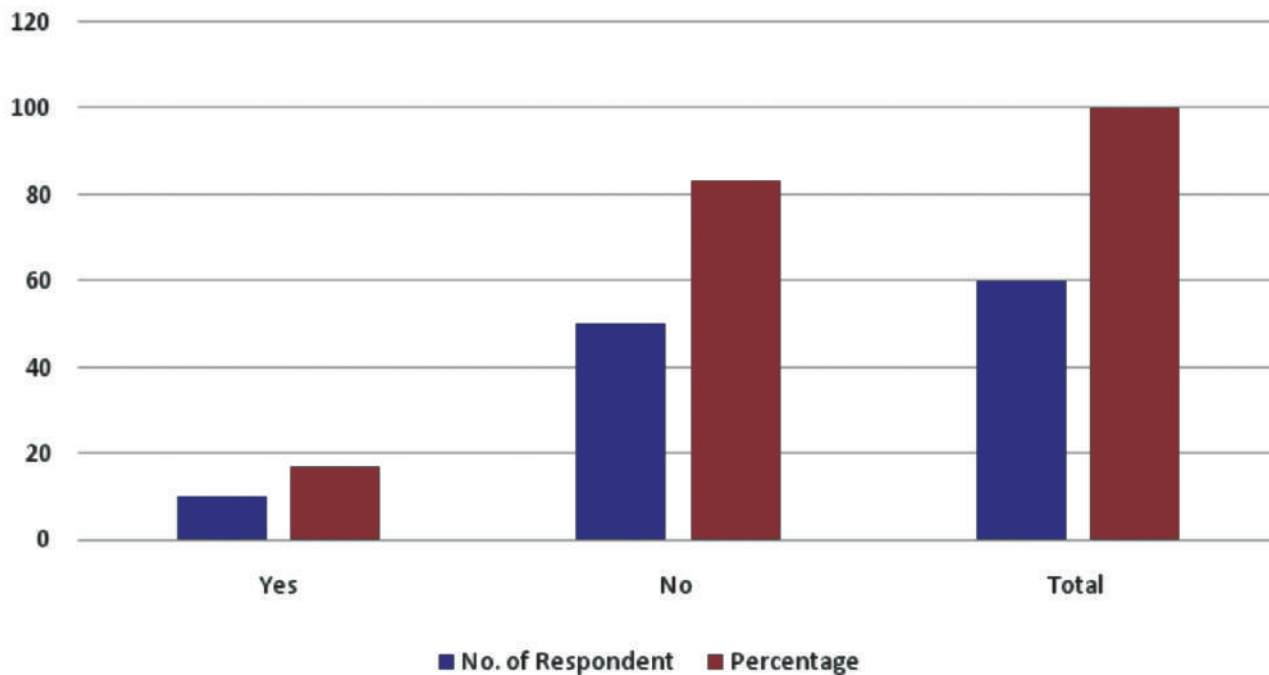
■ No. of Respondent ■ Percentage



तालिका (6) सरकारी नीतियों के प्रति जागरुकता के आधार पर

नीतियों के प्रति जागरुकता	उत्तरदाताओं की सं०	प्रतिभात
हाँ	10	16.66
नहीं	50	83.33
कुल योग	60	100

(Chart-6 Based on awareness of government policies)



प्रतिशत महिला श्रमिक सरकारी नीतियों के प्रति जागरुक नहीं हैं। जागरुकता के अभाव के कारण वे सरकारी नीतियों का लाभ नहीं ले पाती हैं। (तालिका- 6 देखें)

निष्कर्ष –

असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं से उनकी सामाजिक और आर्थिक स्थिति को अलग नहीं किया जा सकता। हालाँकि भारतीय संविधान समानता का अधिकार, समान काम के लिए समान वेतन की गारण्टी देता है लेकिन इसके बावजूद असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं की स्थिति दयनीय है। असंगठित क्षेत्र में कार्यरत महिलाओं को आर्थिक निर्णय लेने में सीमाओं का सामना करना पड़ता है। असंगठित क्षेत्र से जुड़ी महिलाओं को जीवन-यापन तथा परिवार के भरण-पोषण के लिए आजीवन काम करना पड़ता है। असंगठित क्षेत्र से सम्बन्धित महिलाओं के काम और रहने की स्थिति दोनों अविभाज्य है। असंगठित क्षेत्र की महिला श्रमिकों के लिए कामकाजी परिस्थितियों में सुधार की बहुत आवश्यकता है।

पिछले तीन दशकों के दौरान बनाये गए कानून अधिकांश महिला श्रमिकों की पहुँच से बाहर है क्योंकि वे इन कानूनों के प्रति जागरुक नहीं हैं। इसलिए असंगठित क्षेत्र में काम कर रही महिलाओं के सर्वांगीण विकास के लिए नीतियों के उचित कार्यान्वयन के लिए सरकार, सम्बन्धित विभागों, प्रबन्धन, श्रमिक संघों, स्थानीय निकायों, स्वैच्छिक संगठनों और महिला संगठनों से युक्त सभी एजेंसियों, संयुक्त पदाधिकारियों के एकीकृत दृष्टिकोण की आवश्यकता है। उन्हें कार्यस्थल पर कई समस्याओं का सामना करना पड़ता है जैसे— कम वेतन, भुगतान रहित अतिरिक्त काम और स्वास्थ्य सम्बन्धित समस्याएं। उनमें अधिकारों से सम्बन्धित सरकारी योजनाओं के बारे में जागरुकता का स्तर बहुत कम होता है। सरकार को इन महिला श्रमिकों के अधिकारों को सुनिश्चित करने के लिए कानूनी योजना बनानी चाहिए। समाज में असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं की समस्याओं और मुद्दों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए ताकि वे स्वयं को आत्मनिर्भर



बना सकें। समाज में असंगठित क्षेत्र में काम करने वाली महिलाओं की समस्याओं और मुद्दों को सर्वोच्च प्राथमिकता दी जानी चाहिए ताकि वे स्वयं को आत्मनिर्भर बना सकें।

References

- Khan, S. F. (2005). 'A sociological study of working women in informal sector of readymade garments industry in Faisalabad (Pakistan)', Journal of Agriculture and Social Science, 1813-2235/2005/01-1-60-61.
- Kumar, D. (2021). 'A analysis of women in unorganized sector: a case study of Meerut district', Cosmos Impact Factor, vol-8, ISSN: 2348-1269.
- Kumari, S. (2019). 'A study on socio-economic status of housemaid workers in Karnataka: a sociological study', International Journal of Academic Multidisciplinary Research, vol-3, ISSN: 2643-9670.
- Martini, M. A. (2011). 'Empowering women in the rural labor force with a focus on agricultural employment in the middle east and north Africa (MENA)', EGM/RW/2011/EP.9, Accra, Ghana.
- Masood, H. 'Women workers in unorganized sector in india : problems and prospects', South-Asian Journal of Multidisciplinary Studies, vol-2, ISSN: 2349-7858.



सुपर प्रकाशन

(विश्वविद्यालय स्तरीय लाइब्रेरी पुस्तकों के प्रकाशक एवं पुस्तक विक्रेता)

हम पुस्तकों को स्पष्ट शब्द सज्जा, डिजाइन एवं उत्तम कोटि की छपाई व अत्याधुनिक बाइंडिंग के साथ प्रकाशित करते हैं। विभागाध्यक्ष, एसोसिएट प्रोफेसर, प्रवक्ता, कवि, लेखक, रचनाकार - कहानीकार अपने संस्मरण, गीत, ग़ज़ल एवं कृतियाँ या अन्य किसी भी विधा पर उत्कृष्ट ग्रन्थ अथवा रिसर्च स्कालर (शोध कर्ता) थीसिस प्रकाशन हेतु तैयार हो तो मूल प्रति (Script) भेजकर एक माह में ही अपनी प्रति को पुस्तक के आकार में प्राप्त करें।

सुपर प्रकाशन देश-विदेश के समस्त शिक्षा जगत् से जुड़े डिग्री कालेजों (Higher Education) में यू जी सी के द्वारा उपलब्ध निर्धारित मानकों के अनुसार नेशनल एवं इन्टरनेशनल पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल में अपने शोध लेख (Research Paper) को 'दि गुंजन' एवं 'अभिनव गवेषणा' (मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इन्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल) के द्वारा प्रकाशित कराने का अवसर उपलब्ध कराता है।

सुपर प्रकाशन द्वारा हिन्दी साहित्य - कला संकाय, कामर्स संकाय एवं विज्ञान संकाय तीनों फैकल्टी की पुस्तकों एवं इनसाइक्लोपीडिया का प्रकाशन एवं विक्रय विश्वविद्यालय लाइब्रेरी स्तर पर किया जाता है। हमें एक बार सेवा का अवसर अवश्य प्रदान करें।

- सर्वेश तिवारी 'राजन'

(प्रबन्ध संपादक - 'दि गुंजन' एवं 'अभिनव गवेषणा')

(मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इन्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल)

के-444 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-208 027 (उत्तर प्रदेश)

मो0- 09335597658, 08896244776 E-mail:super.prakashan@gmail.com

Received: 08 Feb., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

भारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन (सुरक्षा के संदर्भ में)

सारांश



— लाल बाबू तिवारी
रिसर्च स्कालर —
रक्षा अध्ययन विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —
226007 (उ.प्र.)

ई-मेल:
lalbabulkw20@gmail.com

शोध निर्देशक —
— प्रो. ओ. पी. शुक्ला
विभागाध्यक्ष —
रक्षा अध्ययन विभाग,
लखनऊ विश्वविद्यालय, लखनऊ —
226007 (उ.प्र.)

ई-मेल:
opshuklodefence@gmail.com

भारत की विदेश नीति एक जटिल और गतिशील क्षेत्र है, जो देश के राष्ट्रीय हितों और सुरक्षा के लक्ष्यों को प्रतिबिंबित करता है। यह नीति विभिन्न कारकों से प्रभावित होती है, जिसमें भौगोलिक स्थिति, ऐतिहासिक अनुभव, आर्थिक आवश्यकताएँ, राजनीतिक विचारधारा और वैश्विक घटनाएँ शामिल हैं। सुरक्षा के संदर्भ में, भारत की विदेश नीति का उद्देश्य देश की क्षेत्रीय अखण्डता और संप्रभुता की रक्षा करना, साथ ही एक सुरक्षित और स्थिर क्षेत्रीय और वैश्विक वातावरण को बढ़ावा देना है। भारत की भौगोलिक स्थिति, जो इसे एशिया के केंद्र में स्थित करती है, इसकी विदेश नीति को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करती है। देश की लंबी भूमि और समुद्री सीमाएँ, विभिन्न देशों के साथ साझा की जाती हैं, जिससे सुरक्षा चुनौतियाँ उत्पन्न होती हैं। भारत के पड़ोसी देशों के साथ संबंध, जैसे कि पाकिस्तान और चीन, इसकी विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण पहलू हैं। हिंद महासागर में भारत की प्रमुख स्थिति, इसे एक महत्वपूर्ण समुद्री शक्ति बनाती है, और इसकी समुद्री सुरक्षा नीति को प्रभावित करती है। भारत का औपनिवेशिक इतिहास और गुटनिरपेक्ष आंदोलन में इसकी भूमिका ने इसकी विदेश नीति को आकार दिया है। भारत की षष्ठशताब्दी की नीति, जो शांतिपूर्ण सह-अस्तित्व, गैर-हस्तक्षेप और समानता के सिद्धांतों पर आधारित है, इसकी विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण पहलू है।

मुख्य शब्द— विदेश, नीति, सुरक्षा, अन्तर्राष्ट्रीय, रणनीति ।

भूमिका—

भारत की बढ़ती अर्थव्यवस्था और ऊर्जा सुरक्षा की आवश्यकताएँ इसकी विदेश नीति को प्रभावित करती हैं। देश की व्यापार और निवेश नीतियाँ, साथ ही अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संगठनों में इसकी भागीदारी, इसकी विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। भारत की लोकतांत्रिक राजनीतिक व्यवस्था और इसकी विदेश नीति पर घरेलू राजनीतिक दबावों का प्रभाव होता है। विभिन्न राजनीतिक दलों और हित समूहों के विचार, विदेश नीति के निर्णयों को प्रभावित करते हैं।

वैश्विक शक्ति संतुलन में परिवर्तन, अन्तर्राष्ट्रीय आतंकवाद और जलवायु परिवर्तन जैसी वैश्विक चुनौतियाँ भारत की विदेश नीति को प्रभावित करती हैं। संयुक्त राष्ट्र और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में भारत की भागीदारी, इसकी वैश्विक नीति को आकार देती है। भारत की विदेश नीति का मुख्य उद्देश्य देश की सुरक्षा को सुनिश्चित करना है। इसके लिए, भारत विभिन्न रणनीतियों का उपयोग करता है, जिसमें सैन्य तैयारी, कूटनीति, क्षेत्रीय और वैश्विक संगठनों में भागीदारी और द्विपक्षीय और बहुपक्षीय सुरक्षा समझौते शामिल हैं। भारत की परमाणु नीति, जो विश्वसनीय न्यूनतम प्रतिरोध पर



आधारित है, इसकी राष्ट्रीय सुरक्षा रणनीति का एक महत्वपूर्ण हिस्सा है।

भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ मित्रतापूर्ण और सहयोगात्मक संबंध बनाए रखने का प्रयास करता है। यह आर्थिक, सांस्कृतिक और रक्षा सहयोग के माध्यम से किया जाता है। भारत अपने पड़ोसी देशों को विकास सहायता प्रदान करता है, जिसमें बुनियादी ढांचे का विकास, शिक्षा, स्वास्थ्य और अन्य क्षेत्रों में सहायता शामिल है। भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ व्यापार और निवेश को बढ़ावा देता है, जिससे आर्थिक विकास को गति मिलती है।

भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ सुरक्षा सहयोग करता है, जिसमें आतंकवाद और अन्य सुरक्षा खतरों से निपटने में सहयोग शामिल है। भारत अपने पड़ोसी देशों के साथ सीमा विवादों को शांतिपूर्ण ढंग से हल करने का प्रयास करता है।

भारत और पाकिस्तान के बीच संबंध जटिल रहे हैं। सीमा विवाद, आतंकवाद और कश्मीर मुद्दा दोनों देशों के बीच तनाव का कारण बने हुए हैं। भारत और चीन के बीच संबंध भी जटिल हैं। सीमा विवाद और व्यापार असंतुलन दोनों देशों के बीच तनाव का कारण बने हुए हैं। भारत और नेपाल के बीच सम्बन्ध ऐतिहासिक और सांस्कृतिक रूप से मजबूत हैं। भारत नेपाल का एक प्रमुख व्यापार भागीदार और विकास सहायक है। भारत और बांग्लादेश के बीच सम्बन्ध मजबूत हो रहे हैं। दोनों देशों ने सीमा विवादों को हल किया है और व्यापार और सुरक्षा सहयोग को बढ़ाया है।

भारत और श्रीलंका के बीच सम्बन्ध भी मजबूत हैं। भारत श्रीलंका का एक प्रमुख व्यापार भागीदार और विकास सहायक है। भारत और भूटान के बीच सम्बन्ध बहुत मजबूत हैं। भारत भूटान का एक प्रमुख विकास सहायक है और दोनों देशों के बीच मजबूत सुरक्षा सहयोग है। भारत और मालदीव के बीच सम्बन्ध भी मजबूत हो रहे हैं। भारत मालदीव का एक प्रमुख व्यापार भागीदार और विकास सहायक है। भारत और म्यांमार के बीच संबंध भी मजबूत हो रहे हैं। भारत म्यांमार का एक प्रमुख व्यापार भागीदार और विकास सहायक है।

भारत को अपने कई पड़ोसी देशों के साथ सीमा विवादों का सामना करना पड़ता है। भारत को अपने पड़ोसी देशों से उत्पन्न होने वाले आतंकवाद का खतरा है। भारत को अपने पड़ोसी देशों में चीन के बढ़ते प्रभाव का सामना करना पड़ता है।

भारत की विदेश नीति अपने पड़ोसी देशों के साथ

संबंधों को प्राथमिकता देती है। भारत क्षेत्र में शांति, स्थिरता और समृद्धि को बढ़ावा देने के लिए अपने पड़ोसी देशों के साथ मिलकर काम करने के लिए प्रतिबद्ध है।

साहित्य की समीक्षा—

भारत की विदेश नीति हमेशा से ही एक महत्वपूर्ण विषय रही है। एक विकासशील देश होने के नाते, भारत को अपनी विदेश नीति को इस तरह से तैयार करना पड़ा है कि वह अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा कर सके और साथ ही वैश्विक मंच पर एक जिम्मेदार भूमिका निभा सके। भारत की विदेश नीति का एक महत्वपूर्ण पहलू महाशक्तियों के साथ उसके सम्बन्ध हैं।

भारत ने शीत युद्ध के दौरान किसी भी महाशक्ति के साथ गठबंधन नहीं किया। यह शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व के पाँच सिद्धान्त हैं। भारत संयुक्त राष्ट्र और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय संगठनों में सक्रिय भूमिका निभाता है। भारत अपनी विदेश नीति के फैसले स्वतंत्र रूप से लेता है।

भारत के संयुक्त राज्य अमेरिका, रूस, चीन और यूरोपीय संघ सहित कई महाशक्तियों के साथ सम्बन्ध हैं। भारत और संयुक्त राज्य अमेरिका के बीच सम्बन्ध हाल के वर्षों में मजबूत हुए हैं। दोनों देश आतंकवाद, जलवायु परिवर्तन और व्यापार जैसे मुद्दों पर सहयोग करते हैं। भारत और रूस के बीच लम्बे समय से चले आ रहे रणनीतिक सम्बन्ध हैं।

रूस भारत का सबसे बड़ा हथियार आपूर्तिकर्ता है। भारत और चीन के बीच सम्बन्ध जटिल हैं। दोनों देशों के बीच सीमा विवाद और व्यापार असंतुलन जैसे मुद्दे हैं। भारत और यूरोपीय संघ के बीच व्यापार और निवेश में मजबूत संबंध हैं। दोनों देश जलवायु परिवर्तन और आतंकवाद जैसे मुद्दों पर भी सहयोग करते हैं।

भारत की विदेश नीति को प्रभावित करने वाले कारकों का अध्ययन / सुरक्षा के संदर्भ में—

चीन एक बढ़ती हुई महाशक्ति है और भारत के लिए एक चुनौती है। भारत आतंकवाद से प्रभावित है और उसे इस खतरे से निपटने के लिए अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग की आवश्यकता है। जलवायु परिवर्तन भारत के लिए एक गंभीर खतरा है।

भारत की विदेश नीति एक जटिल और गतिशील क्षेत्र है। भारत को अपनी विदेश नीति को इस तरह से तैयार करना होगा कि वह अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा कर सके और साथ ही वैश्विक मंच पर एक जिम्मेदार भूमिका निभा सके।

भारत की विदेश नीति में विकासशील देशों के



साथ संबंधों का एक महत्वपूर्ण स्थान है। भारत हमेशा से विकासशील देशों के साथ एकजुटता और सहयोग को बढ़ावा देता रहा है। यह संबंध ऐतिहासिक, सांस्कृतिक, आर्थिक और राजनीतिक आधारों पर आधारित हैं।

भारत का विकासशील देशों के साथ एक लम्बा ऐतिहासिक और सांस्कृतिक सम्बन्ध रहा है। भारत ने हमेशा उपनिवेशवाद और साम्राज्यवाद के खिलाफ संघर्ष में विकासशील देशों का समर्थन किया है। भारत और कई विकासशील देशों के बीच साझा सांस्कृतिक विरासत है, जो इन देशों के बीच सम्बन्धों को और मजबूत बनाती है।

भारत विकासशील देशों के साथ आर्थिक सहयोग को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। भारत कई विकासशील देशों को विकास सहायता और तकनीकी सहायता प्रदान करता है। भारत विकासशील देशों के साथ व्यापार और निवेश को बढ़ावा देने के लिए भी काम कर रहा है।

भारत विकासशील देशों के साथ राजनीतिक सहयोग को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है। भारत संयुक्त राष्ट्र और अन्य अन्तर्राष्ट्रीय मंचों पर विकासशील देशों के हितों का प्रतिनिधित्व करता है। भारत विकासशील देशों के साथ मिलकर वैश्विक मुद्दों, जैसे कि जलवायु परिवर्तन, आतंकवाद और गरीबी, का समाधान करने के लिए काम कर रहा है।

भारत की विदेश नीति पंचशील के सिद्धांतों पर आधारित है, जो शान्तिपूर्ण सह-अस्तित्व, अहस्तक्षेप, समानता और पारस्परिक लाभ पर जोर देते हैं। भारत गुटनिरपेक्ष आंदोलन का एक संस्थापक सदस्य है, जो किसी भी शक्ति गुट में शामिल नहीं होने की नीति का पालन करता है। भारत विकासशील देशों के बीच सहयोग को बढ़ावा देने के लिए प्रतिबद्ध है।

भारत अफ्रीका के साथ अपने सम्बन्धों को मजबूत करने के लिए प्रतिबद्ध है। भारत ने अफ्रीका में कई विकास परियोजनाओं में निवेश किया है और अफ्रीकी छात्रों को छात्रवृत्ति प्रदान करता है। भारत दक्षिण पूर्व एशियाई देशों के साथ अपने सम्बन्धों को मजबूत करने के लिए प्रतिबद्ध है। भारत आसियान का एक संवाद भागीदार है और उसने दक्षिण पूर्व एशिया में कई विकास परियोजनाओं में निवेश किया है।

भारत लैटिन अमेरिकी देशों के साथ अपने सम्बन्धों को मजबूत करने के लिए प्रतिबद्ध है। भारत ने लैटिन अमेरिका में कई विकास परियोजनाओं में निवेश किया है और लैटिन अमेरिकी छात्रों को छात्रवृत्ति प्रदान करता है।

भारत की विदेश नीति में विकासशील देशों के साथ सम्बन्धों का एक महत्वपूर्ण स्थान है। भारत इन देशों के साथ अपने सम्बन्धों को और मजबूत करने के लिए प्रतिबद्ध है। भारत की विदेश नीति एक जटिल और गतिशील क्षेत्र है जो देश के राष्ट्रीय हितों, मूल्यों और वैश्विक आकांक्षाओं को दर्शाती है। यह नीति समय के साथ विकसित हुई है, जो बदलते अंतरराष्ट्रीय परिदृश्य और घरेलू प्राथमिकताओं को दर्शाती है।

भारत की विदेश नीति को इन चुनौतियों का सामना करते हुए अपने राष्ट्रीय हितों और वैश्विक आकांक्षाओं को संतुलित करना होगा। भारत को एक जिम्मेदार वैश्विक शक्ति के रूप में अपनी भूमिका निभानी होगी और अंतरराष्ट्रीय समुदाय के साथ मिलकर काम करना होगा।

भारत और चीन के बीच सीमा विवाद दशकों पुराना है, और यह दोनों देशों के बीच सम्बन्धों में एक प्रमुख मुद्दा रहा है। यह विवाद हिमालय में 3,488 किलोमीटर लम्बी सीमा से सम्बन्धित है, जिसे वास्तविक नियंत्रण रेखा (एल.ए.सी.) के रूप में जाना जाता है।

भारत और चीन के बीच सीमा विवाद 20वीं शताब्दी की शुरुआत में शुरू हुआ। 1914 में, ब्रिटिश भारत और तिब्बत ने शिमला समझौते पर हस्ताक्षर किए, जिसने मैकमोहन रेखा को दोनों देशों के बीच सीमा के रूप में स्थापित किया। हालांकि, चीन ने इस समझौते को कभी मान्यता नहीं दी।

1950 के दशक में, चीन ने अक्साई चिन क्षेत्र पर कब्जा कर लिया, जो भारत का हिस्सा है। 1962 में, चीन ने भारत पर हमला किया और अक्साई चिन और अरुणाचल प्रदेश के कुछ हिस्सों पर कब्जा कर लिया।

भारत और चीन के बीच सीमा विवाद अभी भी अनसुलझा है। दोनों देशों ने कई बार बातचीत की है, लेकिन कोई समझौता नहीं हुआ है।

हाल के वर्षों में, सीमा पर तनाव बढ़ गया है। 2020 में, गलवान घाटी में दोनों देशों के सैनिकों के बीच झड़प हुई, जिसमें 20 भारतीय सैनिक और कई चीनी सैनिक मारे गए।

भारत की विदेश नीति का उद्देश्य अपने राष्ट्रीय हितों की रक्षा करना और वैश्विक शांति और स्थिरता को बढ़ावा देना है। भारत गुटनिरपेक्ष आंदोलन का संस्थापक सदस्य है और उसने हमेशा बहुपक्षीयता और अन्तर्राष्ट्रीय सहयोग का समर्थन किया है।

चीन के साथ सीमा विवाद के सम्बन्ध में, भारत ने



बातचीत के माध्यम से शान्तिपूर्ण समाधान की मांग की है। हालांकि, भारत ने अपनी संप्रभुता और क्षेत्रीय अखण्डता की रक्षा करने की अपनी प्रतिबद्धता भी स्पष्ट की है।

भारत और चीन के बीच सीमा विवाद एक जटिल मुद्दा है जिसका कोई आसान समाधान नहीं है। हालांकि, दोनों देशों के लिए यह महत्वपूर्ण है कि वे बातचीत के माध्यम से शांतिपूर्ण समाधान खोजने के लिए मिलकर काम करें।

भारत की विदेश नीति हमेशा से ही शांति और सहयोग पर आधारित रही है। लेकिन पाकिस्तान से आतंकवाद भारत की विदेश नीति के लिए एक बड़ी चुनौती रहा है। पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित आतंकवाद ने भारत की सुरक्षा और स्थिरता को खतरे में डाल दिया है।

पाकिस्तान लम्बे समय से भारत में आतंकवादी गतिविधियों का समर्थन करता रहा है। पाकिस्तान स्थित आतंकवादी संगठन जैसे लश्कर-ए-तैयबा और जैश-ए-मोहम्मद भारत में कई आतंकी हमलों में शामिल रहे हैं। इन हमलों में मुंबई हमला, पठानकोट हमला और पुलवामा हमला शामिल हैं।

पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित आतंकवाद ने भारत के लिए कई चुनौतियाँ खड़ी की हैं। इसने भारत की सुरक्षा को खतरे में डाल दिया है, जिससे भारत को अपनी रक्षा पर अधिक खर्च करने के लिए मजबूर होना पड़ा है। इसने भारत और पाकिस्तान के बीच सम्बन्धों को भी तनावपूर्ण बना दिया है।

भारत ने पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित आतंकवाद से निपटने के लिए कई कदम उठाए हैं। भारत ने आतंकवाद के खिलाफ अन्तरराष्ट्रीय समुदाय का समर्थन जुटाया है। भारत ने पाकिस्तान पर आतंकवाद को रोकने के लिए दबाव बनाने के लिए कई देशों के साथ काम किया है।

भारत ने अपनी रक्षा क्षमताओं को भी मजबूत किया है। भारत ने अपनी सीमाओं की सुरक्षा के लिए अतिरिक्त सैनिकों और उपकरणों को तैनात किया है। भारत ने खुफिया जानकारी साझा करने और आतंकवाद विरोधी अभियानों में सहयोग करने के लिए अन्य देशों के साथ भी काम किया है। भारत को पाकिस्तान द्वारा प्रायोजित आतंकवाद से निपटने के लिए एक बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। भारत को आतंकवाद के खिलाफ अन्तरराष्ट्रीय समुदाय का समर्थन जुटाना जारी रखना चाहिए। भारत को अपनी रक्षा क्षमताओं को भी मजबूत करना चाहिए।

भारत को पाकिस्तान के साथ बातचीत के लिए भी

तैयार रहना चाहिए, लेकिन यह बातचीत आतंकवाद के मुद्दे पर केन्द्रित होनी चाहिए। भारत को पाकिस्तान को यह स्पष्ट करना चाहिए कि वह आतंकवाद को बर्दाश्त नहीं करेगा।

पाकिस्तान से आतंकवाद भारत की विदेश नीति के लिए एक गंभीर चुनौती है। भारत को इस चुनौती से निपटने के लिए एक मजबूत और बहुआयामी दृष्टिकोण अपनाने की आवश्यकता है। भारत को आतंकवाद के खिलाफ अन्तरराष्ट्रीय समुदाय का समर्थन जुटाना चाहिए, अपनी रक्षा क्षमताओं को मजबूत करना चाहिए और पाकिस्तान के साथ बातचीत के लिए तैयार रहना चाहिए।

निष्कर्ष—

भारत की विदेश नीति एक जटिल और गतिशील प्रक्रिया है, जो विभिन्न कारकों से प्रभावित होती है। सुरक्षा के संदर्भ में, भारत की विदेश नीति का उद्देश्य देश की क्षेत्रीय अखंडता और संप्रभुता की रक्षा करना, साथ ही एक सुरक्षित और स्थिर क्षेत्रीय और वैश्विक वातावरण को बढ़ावा देना है। भारत की विदेश नीति हमेशा से ही अपने पड़ोसी देशों के साथ सम्बन्धों को प्राथमिकता देती रही है। यह नीति 'पड़ोसी पहले' के सिद्धान्त पर आधारित है, जिसका उद्देश्य क्षेत्र में शांति, स्थिरता और समृद्धि को बढ़ावा देना है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. चौलिया एस. मोदी – भारत के प्रधानमंत्री की विदेश नीति। नई दिल्ली – ब्लूम्सबरीय 2019।
2. छिब्र पी. के, वर्मा – आर. विचारधारा और पहचान, भारत की बदलती पार्टी प्रणाली। न्यूयॉक – ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, 2019।
3. फ्रेडरिक्स जी. गुटों से गुटों तक – विभिन्न पार्टी प्रणालियों में भारत की विदेश नीति की भूमिकाएँ। इंडिया रिव्यू। 2019 – 18 (2) – 125/160।
4. गांगुली एस. – क्या मोदी ने वाकई भारत की विदेश नीति बदल दी है? वाशिंगटन क्वार्टरली, 2021/4 (2) – 131–143।
5. थॉम्पसन डब्ल्यू. आर. – भारतीय अभिजात वर्ग के विदेश नीति दृष्टिकोण – भिन्नता, संरचना और सामान्य भाजक। विदेश नीति विश्लेषण– 2020/13(2) – 416–438।
6. जॉर्ज वीके. खुला आलिंगन – मोदी और ट्रंप के युग में भारत – अमेरिका सम्बन्ध, नई दिल्ली – पेंगुइन – 2021।
7. गोखले एन. मोदी के तरीके से भारत की सुरक्षा – पठानकोट, सर्जिकल स्ट्राइक और बहुत कुछ, नई दिल्ली – ब्लूम्सबरीय 2019।
8. गुप्ता एस, मुलेन आर. डी., बसरूर आर., ब्लरेल एन., परदेसी एम. एस., गांगुली एस., मोदी के तहत भारतीय विदेश नीति – एक नया ब्राण्ड या सिर्फ रीपैकेजिंग? अन्तरराष्ट्रीय अध्ययन परिप्रेक्ष्य–2019/20 (1) – 1–45।

Received: 10 Feb., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

उच्चतर माध्यमिक स्तर अध्ययनरत् उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले छात्र-छात्राओं की समायोजन क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन

सारांश



— डॉ. विन्दुमती देवी
सहायक आचार्य —
शिक्षाशास्त्र विभाग,
उत्तराखण्ड संस्कृत विश्वविद्यालय,
हरिद्वार-249402 (उत्तराखण्ड)

ई. मेल—
vindudwivediusvv@gmail.com

शिक्षा नैतिक प्रशिक्षण की प्रक्रिया है, शिक्षा का कार्य राष्ट्र के लिए अच्छे नागरिक तैयार करना है। सामाजिक न्याय की स्थापना जिस प्रक्रिया द्वारा की जाती है, वह शिक्षा ही है। शिक्षा समूचे दृष्टिकोण को बदलकर बुराइयों की जड़ को दूर करने की चेष्टा है। शिक्षा आत्मा को उस परिवेश में ले जाती है जो उसके विकास की हर अवस्था में उन्नयन और सबसे अनुकूल है तथा व्यक्ति में सामाजिक चेतना लाती है। यदि व्यक्ति समुचित शिक्षा व प्रतिभा से सम्पन्न हो तो वह प्राणी जगत में सबसे सभ्य व दिव्य बन जाता है और यदि उसकी शिक्षा उचित रीति की नहीं है तो वह सारे प्राणियों में अधिक निम्न-स्तर का हो जाता है। शिक्षा के माध्यम से अच्छे व्यक्तित्व का निर्माण होता है। अच्छा व्यक्तित्व सन्तुलित होता है। सामंजस्य की योग्यता भी शिक्षा के द्वारा ही सम्भव है। शिक्षा जीवन के बसन्त से प्रारम्भ होनी चाहिए, क्योंकि बसन्त में ही कोपल होता है। शिक्षा का कार्य विकास के अवसर प्रदान करना है क्योंकि जब तक अनुकूल वातावरण नहीं मिलेगा, तब तक विकास की शक्ति छिपी रहती है। जीवन एवं संस्कृति की पूर्णतः का बहुमुखी विकास तथा जीवन की प्रकृति, अंगों का बोध, शिक्षा के द्वारा ही होता है। शिक्षा के द्वारा ही विद्यार्थी अपने अनुभव द्वारा विभिन्न वस्तुओं की एकता की पहचान करता है। शिक्षा उन सब शक्तियों के विकास का नाम है जिनके द्वारा मनुष्य अपने वातावरण पर नियंत्रण रखने तथा अपनी शक्तियों की सामर्थ्य उत्पन्न करता है। सही निष्कर्ष पर पहुँचने की क्षमता पैदा करना शिक्षा का एक महत्वपूर्ण ध्येय है तथा शिक्षा सत्य का अनुगमन करती है और सत्य तथा असत्य में भेद करने की क्षमता को पैदा करती है। शिक्षा प्रगति का साधन है। शिक्षा से व्यक्ति के अन्दर सही दृष्टिकोण उत्पन्न होता है, जिससे व्यक्ति और समाज दोनों का उत्थान होता है और एकता की जड़ें हमें शिक्षा में देखने को मिलती हैं। शिक्षा के माध्यम से ही हम एकता के सूत्र में बंध सकते हैं और प्रगति की ओर बढ़ सकते हैं। शिक्षा को हम खोई हुई शक्ति और सम्मान को पुनः प्राप्त करने का साधन मानते हैं। शिक्षा द्वारा व्यक्तियों में शाश्वत-मूल्यों का ज्ञान होता है, सुख-दुख व्यक्ति की आत्मा पर अपनी छाप छोड़ जाते हैं। अच्छे विचारों से ही मनुष्य-मनुष्य बनता है, जब हम विचार करते हैं तो प्रत्येक विचार हमारे शरीर पर कुछ असर डाल देता है जिस प्रकार हथौड़े की हल्की चोट भी लोहे पर प्रभाव डालती है, उसी प्रकार विचारों में सजीवता उत्पन्न होती है। अतः शिक्षा के द्वारा अच्छे विचारों का निर्माण होता है और शिक्षा अच्छे मनुष्य का निर्माण करती है।



प्रस्तावना—

शिक्षा सीखने की प्रक्रिया है। शिक्षा का अपना एक अलग ही उद्देश्य होता है। समाज में, राष्ट्र में, हर जगह शिक्षा ने अपनी एक अलग पहचान बना रखी है। शिक्षा की नींव को हिलाना इतना आसान नहीं है; क्योंकि शिक्षा कोई पुरानी इमारत नहीं है जिसे आसानी से हिला दिया जाये, शिक्षा की इमारत बहुत की मजबूत होती है। शिक्षा हमारे देश के भविष्य को निखारती है तथा आने वाले भविष्य के लिये हमें तैयार करती है। मनुष्य के जीवन में बहुत सी परेशानियाँ आती हैं। शिक्षा मनुष्य की परेशानियों को दूर करती है और उसे आगे बढ़ने की प्रेरणा देती है। शिक्षा ही मनुष्यों को उनके कर्तव्यों के विषय में बताती है कि मनुष्य का समाज के प्रति, राष्ट्र के प्रति तथा माता-पिता, भाई-बहन के प्रति क्या कर्तव्य है? कर्तव्यों की जानकारी भी हमें शिक्षा से ही मिलती है। मनुष्य के अन्दर नैतिक गुण तथा अच्छे-आचरण शिक्षा के माध्यम से ही आते हैं। संसार के कण-कण में शिक्षा बसी हुई है, जैसे वृक्ष हमें शिक्षा देता है कि 'दूसरों की हमेशा मदद करो' वृक्ष स्वयं धूप में रहकर मनुष्य को छाया प्रदान करता है। समुद्र से हमें शिक्षा मिलती है कि 'कभी लोभ मत करो' कहने का आशय है कि समुद्र के पास आपार पानी होने के कारण वो उसका लोभ नहीं करता है, बल्कि खुद प्यासा रहकर वह दूसरों को पानी पिलाता है— जैसे कि वृक्ष अपने फल स्वयं नहीं खाते दूसरों को देते हैं। ठीक इसी प्रकार का चरित्र मनुष्य को भी धारण करना चाहिए। कहने का तात्पर्य यह है कि संसार में रहने वाली हर चीज हमें कुछ ना कुछ शिक्षा देती है। बस उसके ज्ञान को समझने का नजरिया होना चाहिये, लेकिन ये ज्ञान तभी आयेगा जब हम शिक्षित होंगे।

शिक्षा एक गतिशील प्रक्रिया है। यह जीवनपर्यन्त चलती रहती है, फिर भी बालक के विकास को सुनियोजित दिशा देने के लिए उसकी समस्त शक्तियों के समुचित विकास के लिए समाज विद्यालय का निर्माण करता है। विकास के प्रत्येक क्षेत्र का जीवन में बहुत योगदान है, किन्तु मानसिक और बौद्धिक विकास का महत्व निश्चित ही अधिक है। विद्यालय में जब छात्र अध्ययन करता है तभी उसके अन्दर अध्ययन की आदतों में परिवर्तन होना शुरू होता है। व्यक्ति जब दूसरों के अनुभवों को शब्दों, निरीक्षण, चिन्तन, मनन द्वारा ग्रहण करता है तथा उसका लाभ उठाता है। व्यक्ति सदा अध्ययनरत रहता है, यह आवश्यक नहीं कि वह केवल शब्दों का अध्ययन करता है। ज्ञान को

ग्रहण करने की प्रक्रिया का नाम अध्ययन है। माध्यमिक स्तर की शिक्षा की सम्पूर्ण शिक्षा की रीढ़ की हड्डी कहा जाता है। क्योंकि इस स्तर की शिक्षा ही विद्यार्थी के पथ-पदर्शक का काम करती है। इस स्तर पर शिक्षा प्राप्त करने वाले छात्र अपनी किशोरावस्था में होते हैं अगर इस स्तर पर उन्हें सही मार्गदर्शन दिया जाये तो वे बड़ी से बड़ी सफलता प्राप्त कर सकते हैं।

छात्र विद्यालयों में सत्र पर्यन्त अध्ययन करके ज्ञानार्जन अर्जित करते हैं, परन्तु सभी छात्रों की ज्ञानार्जन की क्षमता समान नहीं होती है। छात्रों में वैयक्तिक भिन्नताएं पायी जाती हैं। परिणामस्वरूप छात्रों द्वारा अर्जित ज्ञान में भी भिन्नता पाई जाती है। छात्रों में कक्षा में पठित विषय वस्तु से जो ज्ञान अर्जित किया है इस अर्जित ज्ञान योग्यता एवं कार्यकुशलता के पीछे निम्न कारक होते हैं। इन कारकों में बुद्धि, रुचि, अभिरुचि, मानसिक स्तर, अभिप्रेरणा, अध्ययन आदतें, व्यक्तित्व इत्यादि छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि में सहायता प्रदान करते हैं। इन कारकों में अध्ययन आदतों का शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का बहुत बड़ा योगदान होता है। वर्तमान शिक्षा में शैक्षिक उपलब्धि की प्रक्रिया को संचालित कराने में अध्ययन आदतें सक्रिय भूमिका का निर्वाहन करती हैं। इनसे प्राप्त परिणामों से छात्र प्रत्यक्ष रूप से प्रभावित होते हैं। शिक्षा में छात्रों के व्यक्तित्व विकास की दृष्टि से आदतों का बहुत महत्व है। छात्रों में विभिन्न आदतें विद्यमान होती हैं इनमें कुछ अच्छी होती हैं और कुछ बुरी आदतें होती हैं। बुरी अवांछनीय आदतों में झूठ बोलना, चोरी करना, आज्ञा न मानना, गृह कार्य न करना, समय से विद्यालय न जाना, उददण्डता करना, आलस्य आदि हैं। जो शैक्षिक उपलब्धि पर नकारात्मक प्रभाव डालती हैं, और जो छात्र अपने जीवन में अच्छी, वांछनीय आदतें जैसे— ईमानदारी, कर्तव्यनिष्ठ, समभाव समदर्शी, समय का पालन, आज्ञा पालन विनय जैसी अनेक आदतों को अपने व्यवहार में उतारता है। उसकी शैक्षिक उपलब्धि पर सकारात्मक प्रभाव पड़ता है। हमारा सम्पूर्ण जीवन सामान्यतः आदतों का एक ताना बाना है। शायद ही हम ऐसा कोई कार्य करते हैं जिसका सम्बन्ध हमारी आदतों से न हो। आदतों की इसी व्यापकता को ध्यान में रखकर मनुष्य को आदतों का पुंज माना गया है।

अध्ययन की आवश्यकता एवं महत्व—

शोध समस्या के अन्तर्गत अध्ययन आदतों को



इसलिए चुनने की आवश्यकता हुई क्योंकि अध्ययन आदतें किसी भी विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव डालती हैं। इससे स्पष्ट होता है कि जिन छात्रों की अध्ययन आदतें अच्छी होती हैं, उनकी शैक्षिक उपलब्धि उच्चकोटि की होती है। लेकिन दूसरी तरफ जिन छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि निम्न होती है अर्थात् दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि अध्ययन आदतें शैक्षिक उपलब्धि से सीधे सम्बन्धित होती हैं। अध्ययन आदतों में प्रमुख उपभाग होते हैं। जैसे— एकाग्रता, समझने की योग्यता, कार्य अभिविन्यास, अन्तःक्रिया, अभ्यास, सहारा देना, अभिलेख करना तथा भाषा इत्यादि का अध्ययन पर प्रभाव पड़ता है। यदि यह भाग किसी भी प्रकार से प्रभावित होते हैं तो अध्ययन आदतें भी प्रभावित होती हैं। विद्यार्थियों के व्यक्तित्व एवं चारित्रिक विकास पर अध्ययन आदतों का महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है। छात्रों को अध्ययन आदतों को सदैव अपनाना चाहिए, लेकिन इनका दास नहीं होना चाहिए, बल्कि स्वामी होने का प्रयास सदैव करना चाहिए।

विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि प्राप्त करने में उनकी अध्ययन आदतें महत्वपूर्ण भूमिका निभाती हैं। स्वास्थ्य निर्माण दिनचर्या में अध्ययन का विशेष स्थान रखता है। उचित समय पर सोना प्रातःकाल किये गये कार्य को सन्ध्याकाल का निरीक्षण, दृढ़ संकल्प, ईमानदारी, नियमित अनुशासन विषयों का अध्ययन में उचित क्रम का निर्धारण गृहकार्य करना, समय का सदा उपयोग करना आदि अध्ययन आदतें हैं जो विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि के साथ-साथ व्यक्तित्व को भी सहेजती, संवारती एवं विकसित करती हैं। छात्र की शैक्षिक उपलब्धि में अध्ययन आदतों का विशेष योगदान होता है। अच्छी अध्ययन आदतों के कारण ही छात्रों को ज्ञान प्राप्त करने में शीघ्रता एवं सरलता होती है।

शैक्षिक उपलब्धि विद्यार्थियों द्वारा अधिगम किये गये एवं प्रयोग में लाये गये ज्ञान को मापने का सर्वोत्तम साधन है। बालकों के नैतिकता, सामाजिक मूल्यों में गिरावट का प्रभाव शिक्षा में देखने को मिलता है, जिसमें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि प्रभावित होती है। बालकों को प्रत्येक क्षेत्र में प्रतिस्पर्धा व तनावपूर्ण परिस्थिति का सामना करना पड़ता है। इसमें सफलता हेतु आवश्यक है कि वह अपने व्यवहार को शैक्षिक लक्ष्यों की प्राप्ति हेतु निर्मित करें। अतः विद्यार्थियों में शैक्षिक उपलब्धि व उसमें सम्बन्धित चरों का महत्वपूर्ण स्थान है।

शैक्षिक उपलब्धि के सन्दर्भ में रेखा 1996 द्वारा किए गए शोधकार्य में निष्कर्ष रूप में पाया गया की परिवार के सदस्यों द्वारा प्रदान किया गया निर्देशन व पथ प्रदर्शन विद्यार्थियों के अधिक अच्छे शैक्षिक दृष्टिकोण एवं शैक्षिक उपलब्धि में योगदान करता है। कुमुद ने अभिप्रेरणा के उच्च स्तर को शैक्षिक उपलब्धि के लिए महत्वपूर्ण माना है जब कि लिंग व परिवेश का विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता है। विद्यार्थियों के सन्दर्भ में शैक्षिक उपलब्धि एक महत्वपूर्ण कारक है जो शिक्षा, समाज, परिवार आदि ऐसे अनेक क्षेत्रों से जुड़ी हुई जो भिन्न भिन्न रूप में परिलक्षित होती है।

उपलब्धि से तात्पर्य किसी भी क्षेत्र में अर्जित ज्ञान से नहीं है। सामान्यतः हम उपलब्धि को शैक्षिक क्षेत्र में ही देखते हैं, लेकिन यह जीवन के सभी क्षेत्रों से सम्बन्धित होती है। अतः उपलब्धि का तात्पर्य विद्यार्थियों द्वारा कक्षा में विभिन्न विषयों में प्राप्त अंकों से नहीं अर्थात् उपलब्धि विद्यालय में बालक के अध्ययन विषय के अर्जित ज्ञान से है। शिक्षा शब्दकोश के अनुसार कुशलतापेक्षी क्षेत्र या ज्ञान के किसी क्षेत्र में प्राप्त दक्षता का स्तर जिसे साधारणतः विद्यालयी परीक्षा द्वारा प्राप्त किया जाता है। अन्य अर्थ में शैक्षिक उपलब्धि का प्रमुख आशय शिक्षा के क्षेत्र में प्राप्त परिणाम से है। शैक्षिक उपलब्धि विद्यार्थियों द्वारा किये जाने वाले कक्षा-कक्षों की क्रिया होती है, जो विद्यार्थियों द्वारा सम्पूर्ण सत्र में अधिगम की जाती है जो कि विभिन्न परीक्षाओं द्वारा ज्ञात की जाती है। शैक्षिक उपलब्धि, कक्षाकक्ष का वातावरण, पारिवारिक वातावरण, सृजनात्मकता, बुद्धिलब्धि, माता-पिता का अपने बच्चों के प्रति व्यवहार, किशोरावस्था एवं बाल्यावस्था आदि घटकों से प्रभावित होती है। स्पष्ट रूप में शैक्षिक उपलब्धि विद्यार्थियों की सभी उपलब्धियों को प्रभावित करती है तथा स्वयं भी अन्य गतिविधियों व उपलब्धियों से प्रभावित होती है।

समस्या कथन—

“उच्चतर माध्यमिक स्तर अध्ययनरत् उच्च एवं निम्न शैक्षिक उपलब्धि वाले छात्र—छात्राओं की समायोजन क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन।”

समस्या कथन में प्रयुक्त शब्दों का परिभाषीकरण—

माध्यमिक स्तर— माध्यमिक स्तर की शिक्षा प्राथमिक शिक्षा और उच्च शिक्षा के बीच की शिक्षा व्यवस्था है। माध्यमिक शिक्षा को सम्पूर्ण शिक्षा व्यवस्था की रीढ़ की



हड़डी कहा जाता है। माध्यमिक शिक्षा का उद्देश्य छात्रों का सर्वांगीण विकास करके राष्ट्रीय विकास व एकीकरण को सुनिश्चित करना है। देश में माध्यमिक शिक्षा का संचालन केन्द्रीय सरकार, राज्य सरकार, स्थानीय संस्थाओं, निजी संस्थानों तथा केन्द्रीय माध्यमिक शिक्षा के क्षेत्र में महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती है।

प्रो. हुमायूँ कबीर के शब्दों में— “माध्यमिक शिक्षा, शिक्षा की एक ऐसी कड़ी है जो प्राथमिक एवं उच्च शिक्षा को दृढ़ता के साथ एक कड़ी में बाँधती है। माध्यमिक शिक्षा शिक्षा प्रणाली का एक ऐसा द्वार है, जो एक ओर तो उच्च शिक्षा में प्रवेश के लिये रास्ता खोलता है जो बालकों के व्यक्तित्व का सर्वांगीण व सम्पूर्ण विकास भी माध्यमिक शिक्षा द्वारा ही पूर्णता को प्राप्त करता है।”

शैक्षिक उपलब्धि— शैक्षिक उपलब्धि से तात्पर्य शिक्षा के क्षेत्र में किसी भी छात्र द्वारा दिए गए निर्देशों से लाभ उठाने से है अर्थात् किसी भी शैक्षिक प्रेरक की उपस्थिति में जब कोई छात्र ज्ञान प्राप्त करके अधिकतम कार्य करने में समर्थ हो जाता है तब उसे उस छात्र की उपलब्धि कहते हैं। शैक्षिक उपलब्धि शैक्षिक कार्य में प्राप्त प्रवीणता तथा उसमें कामयाबी प्राप्त करने से है। सामान्यतः किसी भी छात्र की शैक्षिक उपलब्धि का सीधा सम्बन्ध उसके द्वारा वार्षिक परीक्षा में प्राप्त किये गये अंक उस छात्र की विद्यालय में उन्नति तथा अन्य विशेषताओं को प्रदर्शित करते हैं। एक ज्ञानार्जन परीक्षण यह जानने के लिए प्रयुक्त किया जाता है कि व्यक्ति ने क्या और कितना सीखा तथा वह कोई कार्य कितनी अच्छी तरह से कर सकता है। शैक्षिक उपलब्धि से तात्पर्य इन शिक्षण उद्देश्यों की प्राप्ति से है। विद्यार्थियों ने शैक्षिक उद्देश्यों को किस सीमा तक प्राप्त किया है यही उनकी शैक्षिक उपलब्धि को बताता है। शैक्षिक उपलब्धि से तात्पर्य शिक्षा के क्षेत्र में किसी भी छात्र द्वारा दिए गए निर्देशों से लाभ उठाने से है अर्थात् किसी भी शैक्षिक प्रेरक की उपस्थिति में जब कोई छात्र ज्ञान प्राप्त करके अधिकतम कार्य करने में समर्थ हो जाता है तब उसे उस छात्र की उपलब्धि कहते हैं।

सोधी के अनुसार— इन्होंने उपलब्धि की एक बहुत विस्तृत परिभाषा दी है— “उपलब्धि किसी कठिन कार्य को पूर्ण करना, उच्च ज्ञान प्राप्त करना, अपने कार्यों को शीघ्रता एवं आत्मनिर्भरता से पूर्ण करना, उच्च स्तर प्राप्त करना, दूसरों से आगे बढ़ना तथा अपनी सफलता, प्रतिभा द्वारा आत्मसम्मान को बढ़ाना।”

इवेल के अनुसार— “उपलब्धि परीक्षण का वह अभिकल्प है जो विद्यार्थी द्वारा ग्रहण किये गये ज्ञान, कुशलता व दक्षता का मापन करता है।”

समायोजन क्षमता — व्यक्ति को सफल एवं व्यवस्थित जीवन जीने के लिए या व्यतीत करने के लिए वातावरण और परिस्थितियों के साथ समायोजन स्थापित करना आवश्यक हो जाता है। संसार के समस्त प्राणियों के समान यह बौद्धिक प्राणी मनुष्य भी दिन-रात क्रियाशील रहता है। सोना, जागना, चिन्तन करना, खेलना, कार्य करना आदि सभी उसकी क्रियायें होती रहती हैं। सभी को अपने परिवेश की कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है और लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अनेक बाधाओं का सामना करना पड़ता है।

जब व्यक्ति को लक्ष्य की प्राप्ति सरलता से नहीं होती है तो उसे असंतोष का अनुभव होता है। असंतोष के कारण व्यक्ति के मन में एक संवेगात्मक तनाव रहता है, उसे दूर करने के लिए व्यक्ति बाधाओं को दूर करने का प्रयास करता है। तब वह परिस्थितियों या वातावरण से सामंजस्य स्थापित कर लेता है एवं बुद्धि व अन्य सामर्थ्यों से काम लेते हुए इन समस्याओं को सुलझाने में अपने को समायोजित कर लेता है। समायोजन को सामंजस्य, व्यवस्थापन या अनुकूलन भी कहते हैं। समायोजन की यह प्रक्रिया व्यक्ति के जीवन काल में निरन्तर चलती रहती है। यह एक सन्तुलित दशा है जिस पर पहुँचने पर हम व्यक्ति को सुसमायोजित कहते हैं। विभिन्न शिक्षाविदों की समायोजन सम्बन्धी प्रमुख परिभाषायें निम्नलिखित हैं।

बोरिंग, लैंगफील्ड एवं बेल्ड — “समायोजन वह प्रक्रिया है जिसके द्वारा प्राणी अपनी आवश्यकताओं और इन आवश्यकताओं की पूर्ति को प्रभावित करने वाली परिस्थितियों में सन्तुलन रखता है।”

गेट्स व अन्य — “समायोजन शब्द के दो अर्थ हैं। एक अर्थ में निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जिसके द्वारा व्यक्ति स्वयं और पर्यावरण के बीच अधिक सामंजस्य पूर्ण सम्बन्ध रखने के लिए अपने व्यवहार में परिवर्तन कर लेता है। दूसरे अर्थ में समायोजन एक सन्तुलित दशा है जिस पर पहुँचने पर हम उस व्यक्ति को सुसमायोजित कहते हैं।”

इस प्रकार पूर्ण समायोजित व्यक्ति उसी को कहते हैं जो अपनी मूल आवश्यकताओं को वातावरण से इस प्रकार संतुष्ट करें कि दूसरे की आवश्यकताओं की पूर्ति में



हस्तक्षेप न हों।

अध्ययन के उद्देश्य—

(1) उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् उच्च एवं निम्न उपलब्धि वाले छात्रों की समायोजन क्षमता का अध्ययन करना।

(2) उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् उच्च एवं निम्न उपलब्धि वाली छात्राओं की समायोजन क्षमता का अध्ययन करना।

(3) उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् उच्च एवं निम्न उपलब्धि वाले छात्र-छात्राओं की समायोजन क्षमता का तुलनात्मक अध्ययन करना।

अध्ययन की परिकल्पनाएँ—

(1) उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् उच्च एवं निम्न उपलब्धि वाले छात्रों की समायोजन क्षमता में सार्थक अन्तर नहीं होगा।

(2) उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् उच्च एवं निम्न उपलब्धि वाली छात्राओं की समायोजन क्षमता में सार्थक अन्तर नहीं होगा।

(3) उच्च माध्यमिक स्तर पर अध्ययनरत् उच्च एवं निम्न उपलब्धि वाले छात्र-छात्राओं की समायोजन क्षमता में कोई सार्थक अन्तर नहीं होगा।

अध्ययन का सीमांकन—

(1) प्रस्तुत अध्ययन कानपुर देहात जनपद के उच्च माध्यमिक विद्यालयों के छात्र एवं छात्राओं को सम्मिलित किया गया है।

(2) प्रस्तुत अध्ययन उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यालयों तक ही सीमित है।

(3) प्रस्तुत अध्ययन उच्च माध्यमिक विद्यालय के केवल कक्षा 11-12 के विद्यार्थियों को लिया गया है।

सम्बन्धित साहित्य का सर्वेक्षण

(क) शैक्षिक उपलब्धि से सम्बन्धित साहित्य —

चौहान (2003) ने शैक्षिक उपलब्धि और अध्ययन आदतों पर अध्ययन किया तथा पाया कि माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि उनके अध्ययन आदत से सम्बन्धित होती है तथा उन्होंने यह भी बताया कि शैक्षिक उपलब्धि एवं अध्ययन आदत धनात्मक रूप से एक दूसरे से सम्बन्धित हैं।

आलुजा (2004) ने सामाजिक व्यक्तित्व शैक्षिक अभियोग्यता अध्ययन आदत एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सम्बन्धों का अध्ययन किया तथा उन्होंने यह निष्कर्ष

निकाला कि यह अध्ययन विश्लेषित करता है कि व्यक्तित्व के कारक अध्ययन आदत एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य उत्प्रेरकीय सहसम्बन्ध होता है। उच्च सामाजिक व्यक्तित्व शैली वाले छात्रों की अध्ययन आदत निम्न सामाजिक व्यक्तित्व शैली वाले छात्रों की अध्ययन आदत से अच्छी होती है। व्यक्तित्व एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य सम्बन्धों में अध्ययन आदत मध्यस्थता रखता है। छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि छात्रों की अपेक्षा अधिक पायी गयी। यह अन्तर इस तथ्य को प्रमाणित करता है कि छात्राएं अधिक सामाजिक व्यक्तित्व एवं उच्च अध्ययन आदत प्रदर्शित करती हैं।

शैली (2008) ने माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों और पारिवारिक वातावरण का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का अध्ययन किया। इस अध्ययन से यह निष्कर्ष प्राप्त किया कि माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर अधिक धनात्मक प्रभाव पाया गया। विद्यार्थियों के पारिवारिक वातावरण का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर धनात्मक प्रभाव न के बराबर पाया गया।

जादू एवं रैना (2008) ने अध्ययन किया कि उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि अभिवृत्ति एवं अध्ययन आदत के मध्य सहसम्बन्ध होता है तथा यह बताया कि छात्रों की शैक्षिक उपलब्धि के साथ अध्ययन आदत एवं अभिवृत्ति में धनात्मक सम्बन्ध होता है।

गोविन्द राय (2013) इन्होंने बुद्धि व शैक्षिक उपलब्धि पर अध्ययन किया न्यादर्श में चार स्कूलों के आठवीं कक्षा के तीन गृह परीक्षाओं के अंकों के औसत को लिया बुद्धि के मापन के लिए स्व-निर्मित बुद्धि परीक्षण का उपयोग किया और निष्कर्ष निकाला कि बुद्धि व एकादमिक उपलब्धि के मध्य सकारात्मक सह सम्बन्ध है तथा संवेगात्मक सन्तुलन, स्वास्थ्य, उद्योग, सुरक्षा नियमितता, स्थिति व गृह परिस्थितियों का एकादमिक उपलब्धि पर महत्वपूर्ण प्रभाव पड़ता है।

मेथ्यू डी. पी. (2014) ने माध्यमिक विद्यालय के विद्यालयी वातावरण व उपलब्धि पर अध्ययन किया। निष्कर्ष निकाला कि शैक्षिक उपलब्धि प्रेरणात्मक कार्यों व विद्यालयी वातावरण से धनात्मक सम्बन्ध दिखायी है।

अहलूवालिया व भटनागर (2014) ने शैक्षिक उपलब्धि वरण के प्रभाव का अध्ययन किया तथा पाया कि



ये बच्चे अधिक असफल होते हैं जो बड़े परिवारों के होते हैं तथा जिनके पास अध्ययन हेतु उचित स्थान का अभाव होता है। गरीबी, माता-पिता का अनुचित व्यवहार एवं रूढ़िवादिता पूर्ण क्रियाकलाप असफलता के मुख्य कारण हैं।

त्रिमूर्ति (2015) ने माध्यमिक स्तर के छात्रों की सृजनात्मक चिंतन क्षमता का मनोवैज्ञानिक कार्यों से सहसम्बन्ध होता है पर अध्ययन किया परिणाम स्वरूप पाया कि सृजनात्मकता विद्यार्थियों की सामाजिक आर्थिक स्तर से प्रभावित नहीं होती वरन् चिन्तन उसकी उपलब्धि को प्रभावित करती है।

(ख) समायोजन क्षमता से सम्बन्धित साहित्य—

दुबे (2011) ने विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि पर शैक्षिक अभिप्रेरणा तथा समायोजन के प्रभाव का अध्ययन किया और पाया कि विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर समायोजन के प्रभाव का पड़ता है। शैक्षिक अभिप्रेरणा एवं समायोजन के मध्य उच्च सह सम्बन्ध हैं। शैक्षिक अभिप्रेरणा एवं शैक्षिक उपलब्धि के मध्य उच्च सह सम्बन्ध हैं।

कुमारी, अरुणा (2012) ने “हिमाचल प्रदेश के विद्यालयों में अध्ययनरत खिलाड़ी तथा गैर खिलाड़ी छात्राओं के सृजनात्मक चिन्तन समायोजन तथा आत्मसम्प्रत्यय का तुलनात्मक अध्ययन किया।” अपने पी. एच.डी. स्तरीय अध्ययन में इन्होंने पाया कि ग्रामीण व शहरी क्षेत्रों की खिलाड़ी छात्राएँ शारीरिक, सामाजिक, व्यवहारिक, आत्मसम्प्रत्यय में गैर खिलाड़ी छात्राओं की अपेक्षाकृत अधिक अच्छी पाई गई। गैर खिलाड़ी छात्राएँ शिक्षा में नैतिकता तथा बौद्धिक आत्मसम्प्रत्यय में खिलाड़ी छात्राओं से अच्छी पाई गई। खिलाड़ी छात्राएँ जो शहरी तथा ग्रामीण क्षेत्रों से सम्बन्धित थीं, भावनात्मक रूप से, सामाजिक तथा शैक्षिक समायोजन में गैर खिलाड़ी छात्राओं से अधिक समायोजित पाई गई। गैर खिलाड़ी छात्राएँ, खिलाड़ी छात्राओं की अपेक्षा सभी प्रकार की सृजनात्मक चिन्तन के चरों में अधिक अच्छे अंक प्राप्त किए।

नरसिम्हन तथा पिल्लई (2012) ने विभिन्न माध्यमों के विद्यार्थियों के मध्य समायोजन एवं उपलब्धि स्तर जानने का प्रयास किया, जिससे उन्होंने पाया कि अंग्रेजी माध्यम के विद्यार्थियों का समायोजन स्तर व उपलब्धि स्तर तेलगू माध्यम की अपेक्षा अधिक था।

अमीनाभावी, विजयलक्ष्मी, (2014) ने “शारीरिक रूप से अयोग्य एवं योग्य छात्रों की समायोजन क्षमता का अध्ययन” करते हुए पाया कि शारीरिक रूप से अयोग्य छात्र योग्य छात्रों की तुलना में पारिवारिक, भावात्मक, नेतृत्व तथा मनःस्थिति के क्षेत्रों में कुसमायोजित पाए गए। शारीरिक रूप से अयोग्य छात्र, संवेग मनःस्थिति, अपराधिक प्रवृत्ति एवं नेतृत्व के क्षेत्रों में सामान्य छात्रों की तुलना में कम समायोजनशील थे। निष्कर्षतः यह पाया गया कि विकलांग छात्र सामान्य छात्रों की तुलना में कुसमायोजित पाए गए हैं लेकिन शारीरिक विकलांग छात्र संवेग, मनः स्थिति, अपराधिक प्रवृत्ति व नेतृत्व क्षेत्र में सामान्य छात्रों की तुलना में कम समायोजित पाए गए।

बाबू (2014)— “हॉयर सैकेण्डरी स्टूडेंट्स एटीट्यूड टूवर्ड्स द स्टडी ऑफ कॉमर्स एण्ड देयर एडजस्टमेंट” प्रस्तुत अध्ययन में हॉयर सैकेण्डरी स्टूडेंट्स की कॉमर्स अध्ययन के प्रति अभिवृत्ति तथा उसके हेतु किये जाने वाले समायोजन के मध्य सम्बन्ध जानने का प्रयास किया गया। अध्ययन के प्रमुख चर छात्र लिंग, आवास (शहरी/ग्रामीण), स्कूल का प्रकार (सरकारी/निजी) तथा अध्ययन का माध्यम (अंग्रेजी/तमिल) थे। अध्ययन हेतु तमिलनाडु राज्य के कुडालोर एवं विरुद्धाचालम जनपद के ग्यारहवीं कक्षा में अध्ययनरत 240 छात्रों को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया। अध्ययन हेतु बाबू आर0 (1988) द्वारा निर्मित एटीट्यूड स्केल टूवर्ड्स द स्टडी ऑफ कॉमर्स, सिंह व सिंह आर.पी. (1984) द्वारा निर्मित स्कूल स्टूडेंट्स एडजस्टमेंट इन्वेन्टरी का प्रयोग किया गया। विश्लेषण से ज्ञात हुआ कि हॉयर सैकेण्डरी स्टूडेंट्स की कॉमर्स अध्ययन के प्रति अभिवृत्ति तथा समायोजन के मध्य सार्थक सम्बन्ध पाया गया। छात्रों की मनोवृत्ति छात्राओं से बेहतर पायी गई। शहरी छात्रों की तुलना में ग्रामीण छात्रों का कॉमर्स अध्ययन के प्रति रुख बेहतर रहा। निजी विद्यालयों के छात्रों की मनोवृत्ति सहकारी विद्यालयों के छात्रों की तुलना में अधिक रही। तमिल माध्यम की तुलना में अंग्रेजी माध्यम के छात्रों में रुचि अधिक थी। समायोजन के सन्दर्भ में लड़के/लड़कियों, सरकारी विद्यालय/निजी विद्यालय छात्र, तमिल/अंग्रेजी माध्यम में कोई सार्थक अन्तर नहीं पाया गया। छात्रों का भावात्मक, सामाजिक तथा शैक्षिक समायोजन अत्यंत निम्न स्तर का पाया गया।

देवी (2015)— “इफेक्टिवनेस ऑफ ग्रुप



काउन्सलिंग : एडजस्टमेंट अमांग वूमैन कॉलेज स्टूडेंट्स” प्रस्तुत शोध अध्ययन का मुख्य उद्देश्य कॉलेज में समूह परामर्श कार्यक्रम से छात्राओं को परिचय कराना तथा उसका छात्राओं पर प्रभाव, उनके समायोजन, आत्मविश्वास व भावात्मक स्थायित्व का अध्ययन करना था। अध्ययन हेतु सेंट जोसेफ कालेज, विशाखापट्टनम की 304 छात्राओं को न्यादर्श के रूप में चयनित किया गया, जिनकी आयु 16 से 22 वर्ष के मध्य थी। प्रदत्तों के संग्रहण हेतु बेल (1952) द्वारा निर्मित बेल एडजस्टमेंट इन्वेन्टरी का प्रयोग कर भावात्मक पक्ष में प्राप्त कम मानों के आधार पर दो समूहों नियन्त्रित तथा प्रयोगशील, में विभक्त कर, सभी का रॉटर (1972) द्वारा निर्मित इन्टरनल-एक्सटर्नल लोकस ऑफ कंट्रोल स्केल और कुरेन व कैटल (1973) द्वारा निर्मित ऐट स्टेट क्वेसचेनियर पर परीक्षण किया गया। परीक्षण उपरांत प्रयोगशील समूह को परामर्श प्रदान किया गया। अध्ययन से यह ज्ञात हुआ कि परामर्श कार्यक्रम का छात्राओं के समायोजन, आत्मविश्वास, भावात्मक स्थायित्व पर सकारात्मक प्रभाव होता है।

द्विवेदी, अभिषेक (2019) ने ‘माध्यमिक स्तर के खिलाड़ी और गैर खिलाड़ी विद्यार्थियों की मनोदैहिक समस्याओं, निर्णय, क्षमता, अनुशासन एवं समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन” शीर्षक पर पी-एच. डी. स्तरीय शोधकार्य किया। इन्होंने अपने अध्ययन में पाया कि गैर खिलाड़ी विद्यार्थियों की तुलना में खिलाड़ी विद्यार्थी सार्थक रूप से उत्तम सामाजिक तथा संवेगात्मक समायोजन करते हैं।

गारिया (2019) “इफेक्ट ऑफ पेरेंट्स बिहेवियर आन द एडजस्टमेंट स्टेटस ऑफ स्टूडेंट्स” उपरोक्त शोध कार्य में छात्रों के समायोजन स्तर पर उनके माता पिता के व्यवहार के प्रभाव को जानने का प्रयास किया। शोध का मुख्य उद्देश्य माता-पिता तथा बालकों के मध्य सम्बन्ध, माता-पिता द्वारा छात्रों को प्रदान की जाने वाली समायोजन सम्बन्धी जानकारी को जानना तथा उसका प्रभाव छात्रों के समायोजन स्तर पर ज्ञात करना था। शोधकार्य हेतु न्यादर्श के रूप में राजकीय विद्यालय, टिहरी न्यादर्श के रूप में कांगड़ा के चार राजकीय विद्यालयों के प्रथम स्तर पर चयनित 300 छात्रों में से यादृच्छिकी विधि द्वारा चयनित 100 छात्रों तथा 100 छात्राओं का चयन किया गया। सभी चयनित छात्र व छात्रायें कक्षा नौ व दस के थे। अध्ययन हेतु सक्सेना द्वारा निर्मित एडजस्टमेंट प्रोब्लम

इन्वेन्टरी का प्रयोग किया गया। जिसमें छात्रों के गृह, सामाजिक, स्वास्थ्य, संवेग तथा विद्यालयी समायोजन से सम्बन्धित प्रश्न थे। अध्ययन के निष्कर्षों से यह ज्ञात हुआ कि छात्रों व छात्राओं के समायोजन में कोई सार्थक अंतर नहीं पाया गया। ग्रामीण तथा शहरी छात्र-छात्राओं के विभिन्न समायोजनों गृह, सामाजिक, स्वास्थ्य, संवेग तथा विद्यालयी समायोजन में स्तरानुसार अंतर पाया गया।

शोध विधि— इस सम्बन्ध में शोधार्थिनी ने प्रकरण के अनुरूप प्रविधि का चयन करते समय पाया कि चयनित अध्ययन हेतु **वर्णनात्मक अनुसंधान विधि** के अन्तर्गत **सर्वेक्षण विधि** सर्वाधिक उपयुक्त है।

अध्ययन के चर—

1. **स्वतंत्र चर** — उच्च माध्यमिक स्तर के विद्यार्थी।

2. **आश्रित चर** — शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन क्षमता।

3. **नियंत्रित चर** — शैक्षिक स्तर, आयु।

शोध जनसंख्या —

प्रस्तुत शोध अध्ययन में जनसंख्या से तात्पर्य झाँसी जनपद में स्थित यू. पी. बोर्ड से मान्यता प्राप्त माध्यमिक विद्यालयों की कुल संख्या से है।

अध्ययन के उपकरण—

समायोजन क्षमता (AISS)- ज्ञात करने के लिए डॉ. ए. के. पी. सिन्हा (नई दिल्ली) एवं आर. पी. सिंह (पटना) द्वारा प्रमाणीकृत उपकरण का प्रयोग किया गया है।

शैक्षिक उपलब्धि — शैक्षिक उपलब्धि के रूप में माध्यमिक विद्यालयों के कक्षा 10 के विद्यार्थियों के वार्षिक परीक्षा के प्राप्तांकों को प्रतिशत के रूप में लिया गया है।

प्रयुक्त सांख्यिकीय विधियाँ—

शोधार्थिनी के द्वारा समायोजन क्षमता परीक्षण करने के लिए आंकड़ों का संग्रह किया गया है तथा तत्पश्चात उसका मध्यमान, मानक विचलन, मानक त्रुटि, क्रान्तिक अनुपात या टी-अनुपात, सहसम्बन्ध परीक्षण तथा मध्यमान के अन्तर की सार्थकता द्वारा किया गया है।

आँकड़ों का संग्रह, विश्लेषण एवं व्याख्या—

समंकों का सारणीयन—समंकों को सारणीबद्ध करके शोध निष्कर्षों को जानने के लिए विश्लेषण प्रक्रिया शोध कार्य का एक आवश्यक अंग है। इसलिए सारणीबद्ध प्रदत्तों के आधार पर विश्लेषण कार्य निम्न प्रकार से किया



गया है—

परिकल्पना-1— माध्यमिक स्तर छात्र-छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन क्षमता पर पड़ने वाले प्रभाव का सहसम्बन्ध हेतु संकलित आँकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण से ज्ञात होता है कि माध्यमिक स्तर के छात्र-छात्राओं के मध्य सहसम्बन्ध 0.08 है जो कि प्राप्त मान दोनों चरों में अल्प कोटि का सहसम्बन्ध दर्शाता है जिसका मुक्तांश df 98 के .01 सार्थकता स्तर पर मान .15 व .31 है। जो आवश्यक मान .254 (.15-.31) के मध्य आता है जो सार्थक है।

अतः हमारी परिकल्पना-1 अस्वीकृत होती है अर्थात् उच्च माध्यमिक स्तर के छात्र एवं छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन क्षमता पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

परिकल्पना-2 —

माध्यमिक स्तर छात्र-छात्राओं की अध्ययन शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन क्षमता पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन हेतु संकलित आँकड़ों का सांख्यिकीय विश्लेषण के अवलोकन से ज्ञात होता है कि उच्च माध्यमिक स्तर के छात्रों का मध्यमान 128.42 व मानक विचलन 13.24 है एवं माध्यमिक स्तर के छात्राओं का मध्यमान 124.32 व मानक विचलन 13.30 है दोनों वर्गों के मध्यमानों की तुलना द्वारा प्राप्त टी-मान 1.54 है जो 0.05 सार्थकता स्तर पर सार्थकता के लिए आवश्यक सारणी मान 1.98 से कम है। अतः शोधार्थिनी द्वारा निर्मित शून्य परिकल्पना माध्यमिक स्तर के छात्र-छात्राओं की शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन क्षमता पर पड़ने वाले प्रभाव में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। 0.05 सार्थकता स्तर पर स्वीकृत होती है।

निष्कर्ष—

सांख्यिकीय विश्लेषण के उपरान्त लघु शोध “माध्यमिक स्तर पर छात्रों की अध्ययन सम्बन्धी आदतों का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन” के निम्न निष्कर्ष प्राप्त हुए—

1. उच्च माध्यमिक स्तर के छात्र-छात्राओं की उच्च एवं निम्न उपलब्धि एवं समायोजन क्षमता पर सार्थक प्रभाव पड़ता है।

2. उच्च माध्यमिक स्तर के छात्र-छात्राओं की उच्च एवं निम्न उपलब्धि पर समायोजन क्षमता में कोई सार्थक अन्तर नहीं है। 0.05 सार्थकता स्तर पर स्वीकृत

होती है।

समायोजन क्षमता एक महत्वपूर्ण चर है जो शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव डालता है। अतएव विद्यार्थियों में अच्छी अध्ययन की आदतें विकसित करके शैक्षिक उपलब्धि को उच्च स्तर तक पहुँचाया जा सकता है। अध्ययन की आदतों में शिक्षकों का विचार-व्यवहार महत्वपूर्ण स्थान रखता है। शिक्षक अपने व्यवहार से विद्यार्थियों के लिए उद्दीपक का विकास कर सकते हैं जिससे विद्यार्थी सीख सकें और उपलब्धि को प्राप्त कर सकें। विद्यार्थी अपना अधिकांश समय परिवार में बिताता है, अतः अभिभावक का भी यह कर्तव्य है कि वे अपने बच्चे को अच्छा पारिवारिक वातावरण दें ताकि विद्यालय में अच्छे शैक्षिक वातावरण का निर्माण हो सके जिससे अच्छी अध्ययन की आदतों का निर्माण हो सके। इसके अलावा अभिभावकों को चाहिए समय-समय पर शिक्षक के साथ अपने बच्चों के बारे में विचार-विमर्श करते रहें और बच्चों को प्रेरित करते रहें।

विद्यालय प्रशासन का यह कर्तव्य है कि समय-समय पर ऐसे कार्यक्रमों का आयोजन हो जिससे छात्र प्रेरणा ग्रहण कर सकें। प्रधानाचार्य द्वारा समय-समय पर अभिभावकों की मीटिंग करनी चाहिए जिससे विद्यार्थियों की प्रगति के बारे में विचार-विमर्श हो सके। प्रशासन द्वारा अनुशासन का कड़ाई से पालन करना चाहिए जिससे छात्र अनुशासित होकर अध्ययन करें। हमारे राष्ट्र की शिक्षा के स्तर को ऊँचा बनाने के लिए प्रत्येक विद्यालय, अध्यापक तथा अभिभावकों के सहयोग से ही हो सकता है।

विद्यार्थियों के लिए—

❖ अच्छी अध्ययन आदतों का विकास स्वयं विद्यार्थी के हाथ में होता है।

❖ उचित अध्ययन विधि अपनाकर आशातीत सफलता प्राप्त करने के लिए प्रत्येक क्षेत्र में ध्यान व ध्येय का निर्धारण करते रहना चाहिए।

❖ अच्छी पुस्तकें, दैनिक अखबार एवं शब्दकोश का प्रयोग अच्छी अध्ययन आदतों को विकसित करने में यथेष्ट प्रभावशाली कदम है।

शिक्षकों के लिए—

❖ शिक्षकों को अपने छात्रों में अच्छी अध्ययन आदतों को विकसित करने के लिए उसका समय-समय पर मूल्यांकन एवं मार्गदर्शन करना चाहिए।

❖ शिक्षकों द्वारा प्रेरित छात्र-छात्रा ही भविष्य में



उच्च आदतों के स्वामी बन जाते हैं जिससे वे समाज में उच्च पदों पर एवं जिम्मेदार नागरिक बनकर राष्ट्र प्रगति में योगदान दे सकते हैं।

विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों की विभिन्नतायें शिक्षक को शिक्षण विधि में रुचियाँ उत्पन्न करने की प्रेरणा देते हैं, व शिक्षक की उपलब्धि पर भी अध्ययन आदतों का परीक्षण प्रभाव पड़ता है।

अभिभावकों के लिए—

अभिभावकों को यदि उनके बच्चों की अध्ययन आदतों का पता होगा तभी वे उसे कम योग्यता वाले क्षेत्र में अधिक प्रोत्साहन दे सकते हैं।

अध्ययन आदत के विश्लेषण से बच्चे की रुचि का पता चलता है, जिससे अभिभावक उस पर अपने विचार न थोपकर बल्कि स्वयं के विचारों को महत्व देकर उसे उसके रुचिकर क्षेत्र में बढ़ने के लिए प्रेरित करेंगे।

बच्चों की शैक्षिक उपलब्धि बढ़ाने में अभिभावक छात्रों को श्रेष्ठ अध्ययन आदतें विकसित करके ही योगदान दे सकते हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. अग्रवाल सरस्वती, मिश्रा रुचि, (2002) “विद्यार्थियों की कक्षा में उपस्थिति तथा शैक्षिक उपलब्धि में सहसम्बन्ध का अध्ययन” शिक्षा चिन्तन Vol. 21 पृष्ठ संख्या 29 से उद्धृत।
2. आभा गुप्ता (2005) “सरकारी-गैर सरकारी उच्चतर माध्यमिक विद्यालयों के शैक्षिक वातावरण का विद्यार्थियों की सामाजिक परिपक्वता, समायोजन और शैक्षिक उपलब्धि पर प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन”। शिक्षा चिन्तन Vol. 21 पृष्ठ संख्या 4-6।
3. आबिद मकबूल (2006) “जौनपुर जनपद के माध्यमिक विद्यालयों के उच्च एवं निम्न वंचन स्तर के विद्यार्थियों की अध्ययन की आदत, अर्थशास्त्र के विषय के प्रति अभिरुचि का उनकी शैक्षिक उपलब्धि पर पड़ने वाले अन्तर्क्रियात्मक प्रभाव का अध्ययन”। मुख्य सम्पादक डॉ. समर बहादुर सिंह पृष्ठ-60।
4. गुप्ता, एस. पी. (1998) “आधुनिक शिक्षा मनोविज्ञान” इलाहाबाद, शारदा पुस्तक भवन।
5. लाल, रमन बिहारी : शिक्षा के दार्शनिक एवं समाजशास्त्रीय सिद्धान्त, अठारहवाँ संस्करण, 2016-17, मेरठ, रस्तोगी पब्लिकेशन, पृष्ठ संख्या- 2, 3।
6. सुखिया एस. पी. (2000) “विद्यालय प्रशासन एवं संगठन” विनोद पुस्तक मन्दिर, आगरा।
7. संत विजय (2007) “स्नातक स्तर पर छात्र और छात्राओं के अध्ययन की आदतों एवं समायोजन का तुलनात्मक अध्ययन”। भारतीय शिक्षा शोध पत्रिका वाल्यूम 26 नम्बर 2

जुलाई-दिसम्बर पेज नं. 60।

8. शर्मा, संजय (2005) ने “माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों एवं गणितीय निष्पत्ति में कोचिंग कक्षाओं के प्रभावों के अध्ययन”, एम. एड. लघु शोध, डॉ. राम मनोहर लोहिया अवध विश्वविद्यालय, फैजाबाद।
9. सिंह, डॉ. रामपाल शर्मा, डॉ. ओ. पी. : शैक्षिक अनुसंधान एवं सांख्यिकी, चतुर्थ संस्करण, 2012, आगरा, श्री विनोद पुस्तक मन्दिर।
10. शुक्ला, डॉ. श्रद्धा, पूनम भटनागर (2006) रीडर डब्ल्यू टी. सी. महाविद्यालय (कानपुर) “संस्थागत व स्ववित्तपोषित बी. एड. छात्राओं की अध्ययन की आदतों का तुलनात्मक अध्ययन”। शिक्षा चिन्तन त्रिमूर्ति संस्थान कानपुर अंक 16-17 शैक्षिक त्रैमासिक संयुक्तांक अक्टूबर 2005 मार्च 2006 पेज नं. 4-5।
11. वर्मा, प्रेम कुमार (2006) ने “राजकीय अनुदानित एवं निजी विद्यालयों के माध्यमिक स्तर के विद्यार्थियों की अध्ययन आदतों एवं उनका शैक्षिक निष्पत्ति पर प्रभाव का तुलनात्मक अध्ययन”, एम. एड. लघु शोध, डॉ. बी. आर. अम्बेडकर विश्वविद्यालय, आगरा।



Received: 12 Feb., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

माध्यमिक विद्यालयों में अध्ययनरत आवासीय एवं गैर आवासीय विद्यार्थियों की भावात्मक परिपक्वता एवं शैक्षिक दुश्चिन्ता



— शैलजा तिवारी
शोधार्थी—शिक्षक शिक्षा विभाग,
दयानन्द महिला प्रशिक्षण
महाविद्यालय, कानपुर—208001
(उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
pihu7822@gmail.com



रिसर्च सुपरवाइजर —
— डॉ. (श्रीमती) पूनम सरभाई
प्रोफेसर—एम.एड. विभाग,
दयानन्द महिला प्रशिक्षण
महाविद्यालय, कानपुर—208002
(उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
sarbhai.poonam@gmail.com

सारांश

पारिवारिक वातावरण, साथियों का प्रभाव और शैक्षिक वातावरण भावनात्मक परिपक्वता के विकास को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण कारक हैं। इनमें से प्रत्येक कारक दूसरों के साथ परस्पर क्रिया करता है, जिससे प्रभावों का एक जटिल जाल बनता है जो किसी व्यक्ति के भावनात्मक विकास को आकार देता है। इन कारकों को समझने से माता-पिता, शिक्षकों और नीति निर्माताओं को ऐसे सहायक वातावरण बनाने में मदद मिल सकती है जो बच्चों और किशोरों में भावनात्मक परिपक्वता के विकास को बढ़ावा देते हैं।

प्रस्तावना —

बालक समाज का सदस्य है, उसे समाज के अन्य सदस्यों के साथ सार्थक एवं सामंजस्यपूर्ण ढंग से सम्बन्ध स्थापित करने की प्रबल आवश्यकता होती है। इसके लिए वह दूसरों से समर्थन एवं स्वीकृति प्राप्त करने का प्रयास करता है और समूह में अपनी एक पहचान बनाने के लिए प्रयासरत रहता है। जन्म के समय से ही बालक लोगों के सम्पर्क में आता है तथा वह उन लोगों के साथ पारस्परिक क्रिया करता है, यही पारस्परिक क्रिया बालक के व्यक्तित्व विकास में महत्वपूर्ण भूमिका का निभाते करते हैं। जिससे बालक समाज का वास्तविक सदस्य बनता है, ऐसा उसके भावनात्मक परिपक्वता के परिणामस्वरूप होता है। जिसके कारण बालक स्वयं के व्यवहार को परिष्कृत करता है एवं दूसरों के व्यवहार को भी प्रभावित करता है, ताकि दोनों में पारस्परिक संतुष्टि एवं सहमति स्थापित हो सके। मनुष्य के समुचित शारीरिक एवं मनोवैज्ञानिक विकास हेतु भावनात्मक परिपक्वता पूरी उम्र चलती रहती है। बालक का जन्म परिवार में होता है और बालक परिवार का सदस्य बनकर उस समूह में अपने जीवन का प्रारम्भिक समय व्यतीत करता है, जहाँ से वह दूसरे समूह का सदस्य बनना भी प्रारम्भ करता है। इसके बाद बालक आवासीय या गैर-आवासीय विद्यालय (किण्डरगार्डन, प्राथमिक विद्यालय, माध्यमिक विद्यालय, महाविद्यालय, आवासीय या गैर-आवासीय), कार्य समूह एवं उनसे सम्बन्धित अन्य समूहों के साथ सम्बन्ध स्थापित करता है।

भावनात्मक परिपक्वता का विकास, शैक्षिक दुश्चिन्ता का अनुभव, और जोखिम लेने की प्रवृत्ति किशोरावस्था के विकास के सबसे महत्वपूर्ण पहलू हैं जो माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों की शैक्षिक यात्रा और समग्र जीवन को महत्वपूर्ण रूप से प्रभावित करते हैं। किशोरावस्था में संज्ञानात्मक,



शारीरिक, भावनात्मक, सामाजिक और मनोवैज्ञानिक परिवर्तन शीघ्रता से परिलक्षित होती है, किशोरावस्था चुनौतियों और अवसरों की महत्वपूर्ण अवधि है। जिस शैक्षिक वातावरण में इन किशोरों का पालन-पोषण एवं शिक्षा होती है, चाहे आवासीय या गैर-आवासीय विद्यार्थी हो, उनके भावनात्मक और संज्ञानात्मक विकास को आकार देने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। आवासीय विद्यार्थी से तात्पर्य ऐसे विद्यार्थियों से है जो विद्यालय प्रांगण के आवास(हास्टल) में रहते हैं और उसी विद्यालय में शिक्षा ग्रहण करते हैं। जहां पर विद्यार्थी अपने परिवार से दूर रहकर अध्ययन करते हैं। आवासीय विद्यालय, जो विद्यार्थियों के लिए चौबीसों घंटे निगरानी और साथियों के साथ बातचीत के साथ एक संरचित वातावरण की विशेषता रखते हैं, इन विद्यालय में विद्यार्थियों के बीच स्वतंत्रता, जिम्मेदारी एवं सामाजिक समरसता की भावना को बढ़ावा देने के लिए एक विशेष प्रबन्धन प्रणाली होती है।

गैर-आवासीय विद्यार्थी से तात्पर्य ऐसे विद्यार्थियों से है, जिन विद्यालयों में विद्यार्थियों के लिए आवास (हास्टल) की व्यवस्था होती है, किन्तु विद्यार्थी आवास (हास्टल) की सुविधा नहीं लेते हैं। इन विद्यालयों में विद्यार्थी अपने घर से विद्यालय रोजाना आते-जाते हैं। गैर-आवासीय विद्यार्थियों को अपने माता-पिता का मार्गदर्शन एवं पारिवारिक समर्थन आसानी से उपलब्ध होता है। गैर-आवासीय विद्यार्थियों को घर के माहौल का लाभ मिलता है, एक अलग तरह की गतिशीलता प्रदान करते हैं। जो विद्यार्थियों में भावनात्मक परिपक्वता, शैक्षिक दुश्चिन्ता एवं शैक्षिक प्रदर्शन को प्रभावित करते हैं।

प्रत्येक व्यक्ति के व्यक्तिगत जीवन में भावनाओं की भूमिका जीवन जितनी ही महत्वपूर्ण है। भावनाएं शब्द भावनाओं और उसके विशिष्ट विचारों, मनोवैज्ञानिक और जैविक स्थितियों और कार्य करने की प्रवृत्ति की सीमा को संदर्भित करता है (गोलेमैन, 1995)। किसी भी आयु स्तर पर परिपक्व भावनात्मक व्यवहार की अवधारणा वह है जो भावनात्मक विकास के परिणाम को दर्शाती है। सभी भावनाएं चाहें वे सुखकर हों अथवा दुखकर, सामाजिक अन्तःक्रिया को प्रभावित करते हैं। इससे व्यक्ति अपने व्यवहार को सामाजिक आकांक्षाओं तथा मानकों के अनुरूप सुधारने का प्रयास करते हैं। भावनाएं जो बाल्यावस्था में बहुत तीव्र होते हैं, बालक के बड़े होने पर उनकी तीव्रता कम होती है एवं जो संवेग पहले दुर्बल होते हैं, उनकी

तीव्रता बढ़ जाती है।

भावनाएं विद्यार्थी के व्यवहार प्रदर्शन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में यह जानना अत्यंत आवश्यक है कि ये किस प्रकार विकसित होते हैं तथा व्यक्तिगत एवं सामाजिक समायोजन, शैक्षिक दुश्चिन्ता तथा जोखिम लेने की क्षमता का विकास भी होता रहता है। सभी संवेग जन्मजात नहीं होते हैं। उनका सतत विकास एवं स्थिरीकरण मानव अभिवृद्धि एवं विकास के साथ-साथ होता रहता है। जन्म के समय से ही शिशु भावनात्मक व्यवहारों की अभिव्यक्ति करने लगता है, जो सामान्य उत्तेजना मात्र होती है।

बाल्यावस्था की भावनाएं अभिवृद्धि एवं विकास की दृष्टि से महत्वपूर्ण होती है। इस अवस्था में बालक के संवेगों की अभिव्यक्ति में सामाजिकता का भाव प्रस्फुटित होने लगता है, इससे संवेगों की उग्रता में कमी आती है। समाजीकरण के फलस्वरूप वह संवेगों का दमन करने का प्रयास करता है अथवा विशिष्ट रूप में अभिव्यक्त करता है। भावनात्मक परिपक्वता बाहरी वास्तविकता के साथ मन और बुद्धि को संतुलित करने का आंतरिक विकास है। यदि कोई व्यक्ति वास्तव में भावनात्मक रूप से परिपक्व है, तो वह यथार्थता के साथ कार्य करता है। यदि किसी व्यक्ति में यथार्थता है, तो उसका दृष्टिकोण और व्यवहार भावनात्मक रूप से परिपक्व होता है। भावनात्मक परिपक्वता वास्तविकता और तथ्यों को समझने की क्षमता से है, सुखद और अप्रिय भावनाओं में अपने को स्थिर बनाए के गुण से है।

भावनात्मक परिपक्वता से तात्पर्य संवेगों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने, भावनात्मक संतुलन बनाए रखने और विभिन्न जीवन परिस्थितियों के लिए उचित रूप से प्रतिक्रिया करने की क्षमता से है। यह एक महत्वपूर्ण गुण/कारक है कि, विद्यार्थी शैक्षिक चुनौतियों, शैक्षिक दुश्चिन्ता, सामाजिक दबावों और व्यक्तिगत असफलताओं का सामना कैसे करते हैं। दूसरी ओर, शैक्षिक दुश्चिन्ता माध्यमिक विद्यालय के छात्रों के बीच एक सामान्य घटना है, जो शैक्षिक प्रदर्शन एवं उपलब्धि से संबंधित तनाव, दुश्चिन्ता और आशंका की भावनाओं के फलस्वरूप होने की सामान्य विशेषता है। यह दुश्चिन्ता विद्यार्थियों के शैक्षिक उपलब्धि पर प्रेरक और नकारात्मक दोनों प्रभाव डाल सकती है। अंत में, जोखिम लेने की क्षमता, जिसमें अनिश्चित परिणामों वाले व्यवहारों में शामिल होने की



इच्छा शामिल है, एक ऐसा गुण है जो किशोरों में निर्णय लेने और समस्या समाधान कौशल को प्रभावित करता है। माध्यमिक विद्यालयों के आवासीय और गैर-आवासीय विद्यार्थियों के बीच भावनात्मक परिपक्वता, शैक्षिक दुश्चिन्ता और जोखिम लेने की क्षमता का तुलनात्मक विश्लेषण इस बारे में अत्यंत मूल्यवान् अंतर्दृष्टि प्रदान करता है कि विभिन्न शैक्षिक प्रक्रियाएँ किशोर विद्यार्थियों के विकास को कैसे प्रभावित करती हैं। शिक्षकों, अभिभावकों, विद्यालयों और नीति निर्माताओं के लिए इन अंतरों को समझना आवश्यक है ताकि विद्यार्थियों के समग्र विकास को बढ़ावा देने वाले सहायक वातावरण का निर्माण किया जा सके। इस शोध अध्ययन का उद्देश्य माध्यमिक विद्यालयों के आवासीय और गैर-आवासीय विद्यार्थियों के बीच इन मनोवैज्ञानिक और व्यवहारिक विशेषताओं में भिन्नताओं का पता लगाना है, यह जांचना है कि विद्यालय वातावरण का उनके भावनात्मक और शैक्षिक अनुभवों को कैसे प्रभावित करता है। यह शोध भावनात्मक परिपक्वता के विकास, शैक्षिक दुश्चिन्ता के प्रबन्धन और जोखिम लेने की प्रवृत्ति में योगदान देने वाले या बाधा डालने वाले कारकों की पहचान करके, विविध शैक्षिक व्यवस्थाओं में परिवर्तन करके विद्यार्थियों की शैक्षिक उपलब्धि एवं समायोजन क्षमता को बढ़ाते हैं।

भावनात्मक परिपक्वता का अवलोकन—

संवेग एक आत्मनिष्ठ भावना है, अतः संवेग का अनुभव एक व्यक्ति से दूसरे व्यक्ति में भिन्न होता है। आधुनिक मनोविज्ञान ने मूल संवेगों को पहचानने का प्रयास किया है। यह देखा गया है कि कम से कम छः संवेग सब जगह अनुभव किए जाते हैं तथा पहचाने जाते हैं; ये हैं — क्रोध, विरुचि, भय, प्रसन्नता, दुख, तथा आश्चर्य। इजार्ड (Izard) ने दस मूल संवेगों का एक समुच्चय प्रस्तुत किया है; ये हैं — हर्ष, आश्चर्य, क्रोध, विरुचि अवमान, भय, शर्म, अपराध, अभिरुचि तथा उत्तेजना। इनकी संयुक्तियाँ अन्य प्रकार के संवेग उत्पन्न करती हैं। प्लुचिक (Plutchik) के अनुसार, आठ मूल या प्राथमिक संवेग होते हैं। अन्य सभी संवेग इन्हीं मूल संवेगों के विभिन्न मिश्रणों के ही परिणाम होते हैं। उन्होंने इन संवेगों को चार विरोधी युग्मों के रूप में प्रस्तुत किया है, ये हैं— हर्ष—विषाद, स्वीकृति—विरुचि, भय—क्रोध तथा आश्चर्य—पूर्वाभास।

संवेगों में तीव्रता (उच्च, निम्न) तथा गुणों (प्रसन्नता, दुख, भय) के आधार पर अंतर होता है।

आत्मनिष्ठ कारक तथा स्थितिपरक संदर्भ संवेगों के अनुभव को प्रभावित करते हैं। ये कारक हैं — लिंग, व्यक्तित्व तथा कुछ प्रकार की मनोविकृतियाँ। साक्ष्य बताते हैं कि पुरुषों की अपेक्षा महिलाएँ क्रोध के अतिरिक्त अन्य संवेगों का अधिक तीव्रता से अनुभव करती हैं। पुरुषों में क्रोध को अधिक तीव्रता तथा अधिक आवृत्ति में अनुभव करने की प्रवृत्ति पाई जाती है।

भावनात्मक परिपक्वता एक बहुआयामी अवधारणा है जो किसी व्यक्ति के संवेगों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने और संवेगात्मक स्थिरता बनाए रखने और जीवन में आने वाले अवसरों और चुनौतियों का उचित तरीके से जवाब देने की क्षमता को शामिल करती है। यह मनोवैज्ञानिक का एक महत्वपूर्ण घटक है और यह इस बात में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है कि व्यक्ति अपने व्यक्तिगत, सामाजिक और शैक्षिक जीवन को कैसे आगे बढ़ाता है। भावनात्मक परिपक्वता में आत्म-जागरूकता, सहानुभूति, भावनात्मक विनियमन और संतुष्टि में देरी करने और निराशा को सहन करने की क्षमता शामिल है। यह तनाव, संघर्ष या परिवर्तन के सामने भावनात्मक संतुलन बनाए रखने और एक संतुलित दृष्टिकोण के साथ स्थितियों का सामना करने की व्यक्ति की क्षमता को दर्शाता है।

माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के लिए भावनात्मक परिपक्वता विशेष रूप से महत्वपूर्ण है क्योंकि यह सीधे तौर पर शैक्षिक दबाव, पारस्परिक संबंधों और किशोरावस्था से जुड़ी विभिन्न विकासात्मक चुनौतियों से निपटने की उनकी क्षमता को प्रभावित करती है। जिन विद्यार्थी की भावनात्मक परिपक्वता का स्तर उच्च होता है, वे आम तौर पर शैक्षिक जीवन के तनावों को संभालने, संवारने और अपने भविष्य के बारे में सोच-समझकर निर्णय लेने में बेहतर ढंग से सक्षम होते हैं। शिक्षा के संदर्भ में, भावनात्मक परिपक्वता एक विद्यार्थी की ध्यान केंद्रित करने, कठिनाइयों के बीच दृढ़ रहने और असफलताओं के बावजूद सकारात्मक दृष्टिकोण बनाए रखने की क्षमता को बढ़ा सकती है। यह लचीलापन भी बढ़ाता है, जिससे विद्यार्थी निराशाओं से उभर पाते हैं और अपने लक्ष्यों की ओर प्रयास करना जारी रखते हैं।

भावनात्मक परिपक्वता एक समग्र मनोवैज्ञानिक चर है और व्यक्तिगत, सामाजिक और व्यावसायिक क्षेत्रों में सफलता का एक प्रमुख निर्धारक कारक है। विद्यार्थियों के लिए, भावनात्मक परिपक्वता शैक्षणिक दबावों को



प्रबंधित/नियंत्रित करने, स्व सम्बन्ध विकसित करने और सही निर्णय लेने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। यह व्यवहार के लचीलेपन में योगदान देता है। जिससे विद्यार्थी असफलताओं से उभर पाता है और अपने लक्ष्यों की ओर प्रयास करना जारी रखता है। इसके अलावा, भावनात्मक रूप से परिपक्व व्यक्ति संघर्षों को संभालने चुनौतीपूर्ण परिस्थितियों में आत्म-नियंत्रण बनाए रखने और दूसरों के प्रति सहानुभूति प्रदर्शित करने के लिए बेहतर ढंग से सुसज्जित होते हैं, जिससे शैक्षिक प्रदर्शन और उससे परे दोनों में सकारात्मक और सहायक वातावरण के निर्माण में सहायता मिलती है।

भावनात्मक परिपक्वता को प्रभावित करने वाले कारक एवं प्रबन्धन—

भावनात्मक परिपक्वता कई कारकों से प्रभावित होती है, यह कारक प्रत्येक व्यक्ति द्वारा संवेगों को प्रभावी ढंग से नियंत्रित करने और विनियमित करने की क्षमता में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। ये कारक जटिल तरीकों से परस्पर क्रिया करते हैं और प्रभावित करते हैं कि व्यक्ति भावनात्मक चुनौतियों का सामना कैसे करता है और समय के साथ भावनात्मक परिपक्वता को कैसे विकसित करता है। भावनात्मक परिपक्वता को प्रभावित करने वाले कुछ प्रमुख कारक निम्नलिखित हैं—

पारिवारिक वातावरण— भावनात्मक परिपक्वता के विकास में पारिवारिक वातावरण आधारभूत कारक है। परिवार में आपसी रिश्तों की गुणवत्ता माता-पिता या देखभाल करने वाले वरिष्ठ जनों द्वारा प्रदान किया गया भावनात्मक समर्थन और घर का समग्र भावनात्मक माहौल सभी इस बात में योगदान करते हैं कि बच्चा अपनी भावनाओं को कैसे नियंत्रित करना सीखता है। एक पोषक और सहायक पारिवारिक वातावरण भावनात्मक स्थिरता, सहानुभूति और आत्म-नियमन के विकास को बढ़ावा देता है। जबकि इसके विपरीत, संघर्ष, असंगति या भावनात्मक उपेक्षा से परिपूर्ण पारिवारिक वातावरण भावनात्मक विकास में बाधा डाल सकता है, जिससे भावनाओं को नियंत्रित करने और स्वस्थ सम्बन्ध बनाने में कठिनाई होती है।

सहपाठी प्रभाव— किशोरावस्था के दौरान, भावनात्मक परिपक्वता को आकार देने में सहपाठियों का प्रभाव अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है। सहपाठियों से सकारात्मक सम्बन्ध सामाजिक शिक्षा, भावनात्मक समर्थन, सहानुभूति, सहयोग और संघर्ष समाधान जैसे कौशल के

विकास के अवसर प्रदान करते हैं। हलांकि सहपाठियों से नकारात्मक संबंध जैसे कि बदमाशी, साथियों का दबाव, या भावनात्मक रूप से अस्वस्थ समूह के साथ जुड़ाव आदि भावनात्मक विकास में बाधा डाल सकते हैं और भावनात्मक कठिनाइयों को जन्म दे सकते हैं।

विद्यालय की प्रकृति एवं वातावरण— भावनात्मक परिपक्वता के विकास में विद्यालय और अन्य शैक्षिक वातावरण अत्यन्त महत्वपूर्ण हैं। सामाजिक भावनात्मक शिक्षा पर जोर देने वाली शैक्षिक वातावरण विद्यार्थियों को आत्म-जागरूकता, आत्म-नियमन और पारस्परिक वार्तालाप जैसे महत्वपूर्ण भावनात्मक कौशल विकसित करने में मदद करती है। नेतृत्व और सहयोग के अवसरों के साथ-साथ शिक्षकों और साथियों के साथ सकारात्मक संबंध भावनात्मक विकास को बढ़ावा देते हैं। इसके विपरीत उच्च तनाव, समर्थन की कमी या नकारात्मक सामाजिक गतिशीलता वाले शैक्षिक वातावरण भावनात्मक परिपक्वता के विकास में बाधा डाल सकते हैं।

संक्षेप में, पारिवारिक वातावरण, साथियों का प्रभाव और शैक्षिक वातावरण भावनात्मक परिपक्वता के विकास को प्रभावित करने वाले महत्वपूर्ण कारक हैं। इनमें से प्रत्येक कारक दूसरों के साथ परस्पर क्रिया करता है, जिससे प्रभावों का एक जटिल जाल बनता है जो किसी व्यक्ति के भावनात्मक विकास को आकार देता है। इन कारकों को समझने से माता-पिता, शिक्षकों और नीति निर्माताओं को ऐसे सहायक वातावरण बनाने में मदद मिल सकती है जो बच्चों और किशोरों में भावनात्मक परिपक्वता के विकास को बढ़ावा देते हैं।

जोखिम लेने की क्षमता की अवधारणा—

जोखिम लेने की क्षमता किसी व्यक्ति की एक ऐसी प्रवृत्ति को संदर्भित करती है जिसमें वह ऐसे व्यवहार या निर्णय लेता है जिसमें अनिश्चित परिणाम शामिल होते हैं, जहाँ लाभ या सफलता की संभावना के साथ-साथ हानि या विफलता की संभावना भी मौजूद होती है। यह विशेषता मानव व्यवहार का एक अनिवार्य पहलू है, विशेष रूप से किशोरावस्था के दौरान एक विकासात्मक चरण जो अन्वेषण, पहचान निर्माण और सीमाओं के परीक्षण द्वारा चिह्नित होता है। माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के संदर्भ में, जोखिम लेने विभिन्न क्षेत्रों में दिखाई दे सकता है, जिसमें शैक्षिक विकल्प, सामाजिक संपर्क और पाठ्येतर गतिविधियाँ शामिल हैं।



जोखिम लेने की क्षमता स्वाभाविक रूप से नकारात्मक गुण नहीं है, यह नवाचार, सीखने और व्यक्तिगत विकास को बढ़ावा देने में भी महत्वपूर्ण भूमिका निभाती है। उदाहरण के लिए, जो विद्यार्थी शैक्षिक जोखिम लेने के लिए तैयार हैं, वे चुनौतीपूर्ण विषय चुन सकते हैं, प्रतियोगिताओं में भाग ले सकते हैं, या ऐसी परियोजनाओं में शामिल हो सकते हैं जो उनकी सीमाओं को निर्धारित करती हैं। ऐसे अनुभवों से आलोचनात्मक सोच, समस्या समाधान कौशल और लचीलापन आदि गुण विकसित होते हैं। हालाँकि, सभी जोखिम लेना फायदेमन्द नहीं होता है। अनियंत्रित या आवेगपूर्ण जोखिम लेने के परिणाम नकारात्मक परिणाम हो सकते हैं— जैसे खराब शैक्षिक प्रदर्शन, व्यवहार सम्बन्धी मुद्दे या सामाजिक संघर्ष।

आकलन करके जोखिम लेने की क्षमता अक्सर भावनात्मक परिपक्वता और निर्णय लेने के लिए संतुलित दृष्टिकोण से जुड़ी होती है। सकारात्मक जोखिम लेने भावना विद्यार्थियों को संभावित खतरों के खिलाफ संभावित पुरस्कार का मूल्यांकन करने में सक्षम होते हैं। सकारात्मक जोखिम लेने के विकल्प बनाते हैं कि उनके सीखने और व्यक्तिगत विकास को बढ़ाते हैं। किशोरों में जोखिम लेने के व्यवहार को प्रभावित करने वाले कारकों को समझना, जैसे व्यक्तित्व लक्षण, साथियों का प्रभाव और वातावरणीय संदर्भ, शिक्षकों और अभिभावकों के लिए विद्यार्थियों को स्वस्थ और रचनात्मक जोखिम लेने की दिशा में मार्गदर्शन करने के लिए महत्वपूर्ण हैं।

जोखिम लेने की क्षमता का प्रबन्धन—

भावनात्मक परिपक्वता का एक प्रमुख घटक, आत्म-नियमन जोखिम भरे व्यवहारों को प्रबंधित करने में महत्वपूर्ण भूमिका निभाता है। जो विद्यार्थी अपनी भावनाओं को नियंत्रित कर सकते हैं, वे किसी भी स्थिति के संभावित जोखिमों और पुरस्कारों का बेहतर आकलन करने में सक्षम होते हैं, और अधिक संतुलित निर्णय का सही निर्णय ले पाते हैं।

आवेग नियंत्रण— आत्म-नियमन विद्यार्थियों को आवेगपूर्ण व्यवहार को नियंत्रित करने में मदद करता है जो नकारात्मक परिणामों को जन्म दे सकता है। भावनात्मक रूप से परिपक्व विद्यार्थी के लापरवाह या विचारहीन जोखिम लेने की संभावना कम होती है, क्योंकि वे कार्य करने से पहले रुक सकते हैं, चिंतन कर सकते हैं और परिणामों पर विचार कर सकते हैं।

लक्ष्य-उन्मुख जोखिम उठाना— भावनात्मक रूप से परिपक्व विद्यार्थी अक्सर लक्ष्य-उन्मुख जोखिम उठाने में संलग्न होते हैं, जहाँ उनके कार्य उनके दीर्घकालिक उद्देश्यों के साथ संरेखित होते हैं। वे अपने शैक्षणिक और व्यक्तिगत लक्ष्यों को प्राप्त करने के लिए आवश्यक गणना किए गए जोखिम लेने के लिए तैयार रहते हैं, जबकि अनावश्यक जोखिमों से बचते हैं जो उनके विकास में योगदान नहीं करते हैं।

निर्णय लेने में आत्मविश्वास— भावनात्मक रूप से परिपक्व विद्यार्थियों को अपनी निर्णय लेने की क्षमता पर अधिक भरोसा होता है, जो उन्हें संभावित परिणामों की स्पष्ट समझ के साथ जोखिम लेने में सक्षम बनाता है। वे जोखिमों को खतरों के बजाय विकास के अवसरों के रूप में देखने की अधिक संभावना रखते हैं, जो उन्हें नई चुनौतियों और अनुभवों का पता लगाने के लिए प्रोत्साहित करता है।

असफलता का सामना करने में लचीलापन— भावनात्मक परिपक्वता लचीलापन भी बढ़ाती है, जो जोखिम उठाने के परिणामों को प्रबंधित करने के लिए महत्वपूर्ण है। भावनात्मक रूप से परिपक्व विद्यार्थी विफलता या असफलताओं से निपटने के लिए बेहतर तरीके से तैयार होते हैं, क्योंकि वे इन अनुभवों को अपनी योग्यता या क्षमताओं के प्रतिबिंब के बजाय मूल्यवान सीखने के अवसरों के रूप में देखते हैं।

संक्षेप में, भावनात्मक परिपक्वता, शैक्षणिक दुश्चिन्ता और जोखिम उठाना आपस में गहराई से जुड़े हुए हैं। भावनात्मक परिपक्वता शैक्षणिक दुश्चिन्ता को कम करने में मदद करती है और भावनात्मक विनियमन और लचीलेपन को बढ़ाकर सकारात्मक जोखिम उठाने को बढ़ावा देती है। इसके विपरीत, उच्च शैक्षणिक दुश्चिन्ता जोखिम उठाने में बाधा डाल सकती है और निर्णय लेने की प्रक्रियाओं को बाधित कर सकती है, जबकि भावनात्मक परिपक्वता संतुलित और रचनात्मक जोखिम उठाने की सुविधा प्रदान करती है, जिसे आत्म-नियमन और आत्मविश्वास द्वारा समर्थित किया जाता है। विद्यार्थियों के भावनात्मक और शैक्षिक विकास का समर्थन करने वाले वातावरण को बढ़ावा देने के लिए इन संबंधों को समझना महत्वपूर्ण है।

शैक्षिक दुश्चिन्ता को समझना—

मनोविज्ञान में दुश्चिन्ता मनोस्नायु विकृति की सामान्य परन्तु महत्वपूर्ण विकृति है। इसमें रोगी को अति



चिन्ता हो जाती है और वह किसी वस्तु पर ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाता है। दुश्चिन्ता से उसके निर्णय की प्रक्रिया भी स्वाभाविक रूप से कार्य करती है। वह अपनी चिन्ता का कारण नहीं खोज पाता है जिसके कारण चिन्ता की सीमा बढ़ जाती है। साधारण रूप से चिन्ता सभी व्यक्तियों को अनुभव होती है और प्रत्येक व्यक्ति किसी न किसी समय इससे अवश्य ही पीड़ित होता है लेकिन उसके कारण को दूर कर वह अपनी चिन्ता दूर कर लेता है। दुश्चिन्ता विकृति की अवस्था में रोगी बिना कारण जाने अतिशय चिन्ता से पीड़ित होता है उसको अपनी चिन्ता के स्रोत का पता नहीं होता है।

शैक्षिक दुश्चिन्ता माध्यमिक विद्यालय के विद्यार्थियों के बीच एक प्रचलित और महत्वपूर्ण मुद्दा या कारक है, जो शैक्षिक प्रदर्शन से संबंधित घबराहट, दुश्चिन्ता और आशंका की भावनाएं जैसी विशेषता प्रकट होती है। इस प्रकार की दुश्चिन्ता अक्सर सफल होने के दबाव, असफलता के डर और विद्यार्थियों पर खुद उनके परिवारों और उनके शैक्षिक संस्थानों द्वारा रखी गई उच्च अपेक्षाओं से उत्पन्न होती है। जबकि दुश्चिन्ता का एक निश्चित स्तर एक प्रेरक के रूप में काम कर सकता है, जिससे विद्यार्थियों को केंद्रित और अनुशासित रहने में मदद मिलती है, अत्यधिक दुश्चिन्ता एक विद्यार्थियों के मानसिक स्वास्थ्य, कल्याण और शैक्षिक परिणामों पर हानिकारक प्रभाव डाल सकती है।

शैक्षिक दुश्चिन्ता कई तरह से प्रकट हो सकती है, जिसमें सिरदर्द, पेट दर्द और नींद की गड़बड़ी जैसे शारीरिक लक्षण शामिल हैं। साथ ही अपर्याप्तता, आत्म-संदेह और घबराहट की भावना जैसे मनोवैज्ञानिक लक्षण भी शामिल हैं। यह एकाग्रता, स्मृति और समस्या समाधान क्षमताओं जैसे संज्ञानात्मक कार्यों को खराब कर सकता है, जिससे शैक्षिक प्रदर्शन में कमी आ सकती है। इसके अतिरिक्त, शैक्षिक दुश्चिन्ता एक विद्यार्थी के व्यवहार को प्रभावित कर सकती है, जिससे शैक्षिक कार्यों से बचना, टालमटोल करना या पूर्ण जानकारी पर अत्यधिक जोर देना शामिल है।

शैक्षिक दुश्चिन्ता के कारणों और प्रभावों को समझना शिक्षकों, अभिभावकों और स्वयं विद्यार्थियों के लिए महत्वपूर्ण है। यह जानना अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि शैक्षिक दुश्चिन्ता केवल एक अस्थायी समस्या नहीं है, बल्कि एक महत्वपूर्ण मुद्दा या कारक है जो एक विद्यार्थी के समग्र

विकास और भविष्य की संभावनाओं को प्रभावित कर सकता है। शैक्षिक दुश्चिन्ता को समझने करने के लिए एक समग्र दृष्टिकोण की आवश्यकता होती है जिसमें भावनात्मक समर्थन प्रदान करना, दुश्चिन्ता से मुकाबला करने के तरीके सिखाना और एक सहायक शैक्षिक वातावरण का निर्माण करना शामिल है, जो उच्च अपेक्षाओं को करुणा और समझ के साथ संतुलित करता है। ऐसा करके विद्यार्थियों को उनकी दुश्चिन्ता को नियंत्रित करने और शैक्षिक रूप से आगे बढ़ने में मदद करना संभव है।

उक्त शोध में शोधार्थी द्वारा विद्यार्थियों में कक्षा में अपनी योग्यता सिद्ध करने की चिन्ता, परीक्षा में अच्छे अंक लाने की चिन्ता, भविष्य में अपने कैरियर (वृत्ति) चुनने की चिन्ता, विद्यालय में अपनी प्रतिष्ठा को लेकर चिंतित रहना आदि को दुश्चिन्ता के परिप्रेक्ष्य में लिया है। माता-पिता के व्यक्तित्व का प्रभाव बालक के विकास एवं मनोवैज्ञानिक लक्षणों को निर्धारित करता है। यदि उनका व्यक्तित्व असामान्य होता है तो वे लक्षण बालक में भी उत्पन्न हो जाते हैं। किशोरावस्था में दुश्चिन्ता का अनुभव उसके व्यवहार को जीवन भर प्रभावित करता है तथा उसमें भावात्मक अस्थिरता की भावना विकसित हो जाती है जिसके कारण थोड़ी सी असफलता होने पर वह व्याकुल हो जाता है तथा बेचैनी का अनुभव करता है। जितनी अधिक भावात्मक अस्थिरता होगी उसमें उतनी ही अधिक दुश्चिन्ता पाई जाएगी व उस व्यक्ति का व्यवहार भी प्रभावित होगा। विभिन्न अध्ययनों से ज्ञात होता है कि जिस व्यक्ति की भावनाओं का विकास सामान्य नहीं होता है उसमें दुश्चिन्ता के लक्षण प्रकट हो जाते हैं। वह आंतरिक तथा बाह्य दबाव एवं तनाव का सामना ठीक से नहीं कर पाता है जिसके कारण वह दबाव को धमकी समझता है। उसमें दुश्चिन्ता के लक्षण के अतिरिक्त सभी लक्षण सामान्य होते हैं। दबाव एवं तनाव की मात्रा इतनी अधिक होती है कि वह स्थिति का मूल्यांकन सामान्य रूप से नहीं कर पाता है। वह भावी दुर्भाग्य की संभावनाओं से त्रस्त रहता है।

जब व्यक्ति चिंताग्रस्त होता है तो उसके मन नकारात्मक विचारों की अधिकता होने लगती है। जिस कारण से व्यक्ति अपने कार्य पर ध्यान केन्द्रित नहीं कर पाता है। चिन्ता का एक रूप शैक्षिक दुश्चिन्ता है। शैक्षिक दुश्चिन्ता एक स्थितिजन्य चिन्ता है। विद्यालय परिसर, विशिष्ट शिक्षक व विद्यालय गतिविधियाँ कई बार कतिपय विद्यार्थियों में डर/भय उत्पन्न करती है। जिनसे विद्यार्थी



दूर भागना चाहता है या विद्यालय में अध्ययन नहीं करना चाहता है। यह स्थिति ही शैक्षिक दुश्चिन्ता है। कई लोगों का मत है कि शैक्षिक दुश्चिन्ता केवल परीक्षा सम्बन्धी होती है जिसमें बालक अनेक प्रकार के भय से घिरा होता है। किन्तु मनोवैज्ञानिकों का मानना है कि शैक्षिक दुश्चिन्ता परीक्षा, विद्यालय वातावरण, विषय के प्रति अरुचि, पाठ्यक्रम, कक्षा के साथी, खेल के मैदान व शिक्षकों से सम्बन्धित हो सकती है।

विद्यार्थियों में दुश्चिन्ता का प्रभाव सकारात्मक तथा नकारात्मक दोनों प्रकार से हो सकता है। दुश्चिन्ता के सकारात्मक प्रभाव स्वरूप विद्यार्थियों में सामाजिक स्थितियों में सामंजस्य स्थापित करने की भावना का विकास होता है अन्यथा विद्यार्थियों में सामाजिक स्थितियों में लापरवाही पूर्ण व्यवहार प्रदर्शित होता है। दुश्चिन्ता के सकारात्मक प्रभाव स्वरूप विद्यार्थियों में अपने लक्ष्य की प्राप्ति व अधिगम प्रक्रिया में तीव्रता आती है वहीं दूसरी ओर दुश्चिन्ता के नकारात्मक प्रभाव के कारण विद्यार्थियों में अन्यो की भावनाओं को ना समझने व गलत दिशा में भटकने की संभावना बढ़ जाती है। वहीं अधिगम व उपलब्धि प्रक्रिया पर भी नकारात्मक प्रभाव पड़ता है।

शैक्षिक दुश्चिन्ता के कारक एवं प्रबन्धन—

परीक्षा के निकट आने पर विद्यार्थियों के पेट में दुश्चिन्ता तथा मंथन का अनुभव होने लगता है। वस्तुतः अधिकांश विद्यार्थियों के लिए कोई भी वह परिस्थिति जहाँ उन्हें प्रदर्शन करना है तथा उन्हें ज्ञात होता है कि उनके प्रदर्शन का मूल्यांकन किया जाना है, यह मूल्यांकन एक दुश्चिन्ता उत्पन्न करने वाली परिस्थिति होती है। एक स्तर तक तो दुश्चिन्ता का होना आवश्यक है क्योंकि वह हमें अभिप्रेरित करती है कि हम अपना सर्वोत्तम प्रदर्शन करें किन्तु दुश्चिन्ता का उच्च स्तर अधिकतम प्रदर्शन तथा उपलब्धि में बाधक होता है। दुश्चिन्तित विद्यार्थी, शारीरिक एवं भावनात्मक रूप से प्रबल रूप से उद्वेलित होता है और इसीलिए विद्यार्थी अपनी योग्यता के उच्चतम स्तर पर प्रदर्शन नहीं कर पाता।

परीक्षा एक दबाव उत्पन्न करने की संभावित परिस्थिति है तथा इस दबावमय परिस्थिति का सामना दो प्रकार की युक्तियों द्वारा किया जा सकता है, पर्यवेक्षण अथवा प्रभावोत्पादक क्रिया में कमी हो जाना या परिस्थिति से पलायन।

पर्यवेक्षण या मॉनीटरिंग के अंतर्गत दबावमय

स्थिति से निपटने के लिए सीधे तथा प्रभावी क्रिया की आवश्यकता होती है। निम्नलिखित युक्तियों के द्वारा पर्यवेक्षण किया जा सकता है—

परीक्षा की तैयारी— परीक्षा की समय से पूर्व अच्छी तैयारी कीजिए। अपने पाठ्यक्रम को पर्याप्त समय दीजिए। अक्सर पूछे जाने वाले प्रश्नों तथा प्रश्न-पत्रों के स्वरूप से परिचित हो जाना चाहिए। इससे आपको परीक्षा में समय प्रबन्धन एवं पूर्वानुमान का बोध होगा तथा परीक्षा के कारण दबाव की संभावना में कमी आएगी।

परीक्षा का पूर्वाभ्यास— परीक्षा से पूर्व विद्यार्थी स्वयं एक अभ्यास परीक्षा दे। विद्यार्थी के द्वारा भी अपने मित्रों की सहायता से भी ज्ञान की परीक्षा ली जा सकती है। विद्यार्थी मानसिक रूप से कल्पना में भी परीक्षा का पूर्वाभ्यास कर सकते हैं। कल्पना में अपने आपको पूरी तरह संयमित होकर एवं विश्वास से परिपूर्ण परीक्षा देते हुए देखिए तथा फिर कल्पना कीजिए कि आप उत्तम श्रेणी से सफल हुए हैं। पूर्वाभ्यास तथा भूमिका निर्वाहन के द्वारा विद्यार्थी परीक्षा की परिस्थिति का सामना करने के लिए शारीरिक तथा मानसिक रूप से अधिक तैयार हो सकते हैं तथा परीक्षा का सामना अधिक आत्मविश्वास के साथ कर सकते हैं।

सकारात्मक चिंतन— अपने आप पर भरोसा कीजिए। अपने विचारों को व्यवस्थित कीजिए। उन विचारों को, जो आपको चिंतित करते हैं क्रमवार व्यवस्थित कीजिए और फिर एक-एक करके उनका समाधान कीजिए। अपनी प्रबलताओं और क्षमताओं पर अधिक जोर दीजिए। अपने आपको उत्साही बनाए रखने के लिए प्रेरित कीजिए।

आलम्ब (सहारा) ढूँढ़िए— अपने मित्रों, माता-पिता, शिक्षकों या अपने से वरिष्ठ जनों से सहायता माँगने में मत हिचकिचाइए। अपने किसी निकट व्यक्ति के साथ दुश्चिन्ता अथवा दबावमय परिस्थिति के बारे में बातचीत करने से तनाव या बोझ हलका लगने लगता है तथा अन्तर्दृष्टि विकसित करने में सहायता मिलती है। हो सकता है परिस्थिति उतनी खराब न हो जितनी प्रतीत हो रही थी।

विश्राम करिए— शिथिल होकर विश्राम (आराम) करना सीखिए। विश्राम (आराम) की तकनीकी आपको शांत करती है तथा अपने विचारों को पुनः गठित करने का अवसर प्रदान करती है। विश्राम (आराम) की कई तकनीकों हैं। सामान्यतः, इसके अन्तर्गत किसी शान्त जगह में



आराम से बैठना या लेटना होता है, मांसपेशियों को ढीला छोड़ कर, बाध्य उत्तेजना को कम करते हुए तथा विचार शृंखला को भी कम करते हुए फोकस करना होता है।

योग एवं व्यायाम— दुश्चिन्ता अथवा दबावमय परिस्थिति अनुकंपी तंत्रिका तंत्र को अति उत्तेजित कर देती है। अति दुश्चिन्ता द्वारा उत्पन्न ऊर्जा को योग एवं व्यायाम द्वारा दूसरे सकारात्मक दिशा की ओर मोड़ा जा सकता है। कुछ समय का हलका योग, व्यायाम या खेल विद्यार्थी को अपना ध्यान अपनी पढ़ाई पर केन्द्रित करने में सहायता देगा।

सामुदायिक सेवा में भागीदारी कीजिए—

सामुदायिक भागीदारी द्वारा दूसरों की सहायता करके स्वयं की भी मदद हो जाती है, मस्तिष्क भी शान्त रहता है। सामुदायिक सेवा (उदाहरण के लिए किसी बौद्धिक रूप से चुनौतीपूर्ण बालक को उसके सामर्थ्य के अनुसार कोई कौशल सीखने में सहायता कीजिए) करने से आपको अपनी कठिनाइयों के समाधान के विषय में महत्वपूर्ण समझ प्राप्त होगी।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. गुप्ता, एस. और सहगल आर. (2019), हाईस्कूल के छात्रों के शैक्षणिक प्रदर्शन के सम्बन्ध में भावनात्मक परिपक्वता और शैक्षणिक चिन्ता, जर्नल ऑफ एजुकेशनल साइकोलॉजी, 38 (2), पृष्ठ संख्या – 142–152।
2. गणेशन, पी. और अय्यर, एस., (2016), किशोरियों में भावनात्मक परिपक्वता और शैक्षणिक चिन्ता के साथ इसका सम्बन्ध, जर्नल ऑफ स्कूल काउंसलिंग, 8 (4), पृष्ठ संख्या – 112 – 125।
3. डंगवाल, किरणलता एवं श्रीवास्तव, शिप्रा, (2016), इमोशनल मेच्योरिटी ऑफ इंटरनेट यूजर्स, यूनिवर्सल जर्नल ऑफ एजुकेशनल रिसर्च 4 (1), पृष्ठ संख्या – 6 – 11।
4. किपमैन यू., वेई एम., बार्थोल्डी एस., शिपेक जी और एचहार्न डब्ल्यू., (2021), पर्सनैलिटी एण्ड रिस्क टेकिंग, ऑस्टिन जे. क्लिन केस रिपोर्ट, 8 (9), पृष्ठ संख्या – 1233।
5. तिवारी, मनोज कुमार एवं ओझा, संध्या, (2014), किशोरों की सामान्य भलाई और भावनात्मक परिपक्वता का अध्ययन, इंडियन जर्नल ऑफ हेल्थ एण्ड वेलबीइंग, 5 (5), पृष्ठ संख्या—565 –569।
6. रावत, चन्दा (2022) किशोरों की सामान्य स्थिति और संवेगात्मक परिपक्वता के बीच सम्बन्ध, इंडियन जर्नल ऑफ हेल्थ एण्ड वेलबीइंग (13) 1, पृष्ठ संख्या—15–18।
7. सुभाष एम. (2015), हॉलिस्टिक डेवलपमेन्ट ऑफ एडोलिसेंस फॉर सोशल इंटेलिजेंट, इमोशनल मेचोरिटी एण्ड स्त्रीवुअलटी फॉर नेशन बुल्डिंग, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ बेसिक अप्लाइड

इनोवेटिव रिसर्च 4 (1), पृष्ठ संख्या – 20–29।

8. शर्मा, एस. (2021), स्टडी ऑफ इमोशनल मेच्योरिटी एमंग सीनियर सेकेण्डरी स्कूल स्टूडेंट्स, आर. ई. आई. जर्नल ऑफ एजुकेशन 5 (1), पृष्ठ संख्या—189–198।
9. श्रीनिवास आर. और पुंगलेथि एन. (2019), भावी शिक्षकों की संवेगात्मक परिपक्वता और शिक्षण क्षमता के बीच सम्बन्ध पर एक अध्ययन, शैनलैक्स इंटरनेशनल जर्नल ऑफ एजुकेशन 7 (4), पृष्ठ संख्या—42–45।
10. उजैना एवं श्रीवास्तव ए., (216), ए स्टडी ऑन रिस्क टेकिंग बिहैवियर अमंग एडोलसेन्ट एण्ड देयर अटैचमेन्ट विद पेरेन्ट्स एण्ड पियर्स, इंटरनेशनल जर्नल ऑफ इंडियन साइकालॉजी, 3 (4), पृष्ठ संख्या—61–77।



Received: 16 Feb., 2025, Accepted: 28 Mar.-2025, Published: April-June, 2025, Issue

भारत में महिला सशक्तिकरण : सरकारी योजनाओं का सामाजिक-आर्थिक एवं मनोवैज्ञानिक प्रभाव, फ्री बीज की सीमाएँ और सतत् विकास की आवश्यकता

सारांश



— डॉ. पूनम अस्थाना
असिस्टेंट प्रोफेसर —
समाजशास्त्र विभाग,
कालीचरन (पी.जी.) कालेज,
लखनऊ-226003 (उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
poonamasthana065@gmail.com

भारत में महिला सशक्तिकरण केवल सामाजिक समानता का विषय नहीं बल्कि आर्थिक, सांस्कृतिक और राष्ट्रीय विकास का आधार भी है। बीते दशकों में भारत सरकार तथा विभिन्न राज्य सरकारों ने महिलाओं के लिए अनेक योजनाएँ प्रारम्भ की हैं, जैसे— 'बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ', 'प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना', 'महिला शक्ति3केन्द्र', 'स्वयं सहायता समूह कार्यक्रम (SHGs)', 'मुख्यमंत्री कन्या सुमंगला योजना' आदि। इन योजनाओं ने ग्रामीण और शहरी दोनों क्षेत्रों में महिलाओं की स्थिति में परिवर्तन लाने में मदद की है। किन्तु यह शोध यह भी दर्शाता है कि केवल आर्थिक सहायता या फ्री बीज देना पर्याप्त नहीं है। महिलाओं के सशक्तिकरण के लिए दीर्घकालिक सामाजिक समर्थन तंत्र, शिक्षा, स्वास्थ्य, रोजगार प्रशिक्षण और आत्म निर्भरता को बढ़ावा देने वाले ढांचे की आवश्यकता है।

राजनीतिक स्तर पर योजनाओं का चुनावी लाभ से जुड़ जाना उनके मूल उद्देश्य को प्रभावित करता है। इस शोध में योजनाओं के प्रभाव, सामाजिक-आर्थिक परिणाम, मनोवैज्ञानिक परिवर्तन और सुधार की आवश्यकता पर प्रकाश डाला गया है।

1. प्रस्तावना (Introduction)—

भारतीय समाज में महिलाओं की भूमिका अत्यन्त महत्वपूर्ण रही है। प्राचीन काल से लेकर आधुनिक युग तक, महिलाएँ समाज, संस्कृति और परिवार के केन्द्र में रही हैं। परन्तु लम्बे समय तक सामाजिक संरचना ने उन्हें सीमित भूमिकाओं में बाँधा रखा। स्वतंत्रता के बाद भारत में संवैधानिक रूप से महिलाओं को समान अधिकार दिए गए, किन्तु व्यवहारिक स्तर पर उनकी स्थिति में सुधार धीरे-धीरे हुआ।

महिला सशक्तिकरण का अर्थ केवल अधिकार देना नहीं बल्कि अवसर, सम्मान और आत्मनिर्भरता प्रदान करना है। यह तभी संभव है जब महिलाएँ आर्थिक रूप से स्वतंत्र हों, सामाजिक दृष्टि से सम्मानित हों और मानसिक रूप से आत्मविश्वास से परिपूर्ण हों।

2. महिला सशक्तिकरण की अवधारणा

(Concept of Women Empowerment)—

'सशक्तिकरण' का अर्थ है व्यक्ति को निर्णय लेने, अवसर प्राप्त करने और जीवन की दिशा स्वयं निर्धारित करने की क्षमता देना।



महिला सशक्तिकरण के मुख्य तत्व –

शैक्षिक सशक्तिकरण – शिक्षा महिलाओं को ज्ञान, जागरुकता और अवसर देती है।

आर्थिक सशक्तिकरण – आर्थिक रूप से स्वतंत्र महिलाएँ अपने निर्णय स्वयं ले सकती हैं।

सामाजिक सशक्तिकरण – समाज में समान दर्जा और सुरक्षा प्राप्त होना।

राजनीतिक सशक्तिकरण – नीति-निर्माण और प्रशासन में सहभागिता।

मानसिक/मनोवैज्ञानिक सशक्तिकरण – आत्मविश्वास, स्वाभिमान और स्वतंत्र सोच का विकास।

3. भारत सरकार की प्रमुख योजनाएँ और उनका प्रभाव–

3.1 बेटी बचाओ बेटी पढ़ाओ (2015)– यह योजना बालिकाओं के जन्म और शिक्षा को बढ़ावा देने के उद्देश्य से शुरू की गई थी। 2023 तक इस योजना से 400 से अधिक जिलों में लिंगानुपात में सुधार देखा गया। हरियाणा जैसे राज्यों में जहाँ 2014 में 830 बेटियाँ प्रति 1000 लड़के थीं, वहाँ 2023 में यह बढ़कर 923 हो गया।

3.2 प्रधानमंत्री उज्ज्वला योजना (2016)–

गरीब महिलाओं को धुआँ-रहित रसोई के लिए स्वच्छ कनेक्शन प्रदान करने से न केवल स्वास्थ्य में सुधार हुआ बल्कि महिलाओं के समय और श्रम की भी बचत हुई।

NITI Aayog (2022) की रिपोर्ट के अनुसार, इस योजना से ग्रामीण महिलाओं के स्वास्थ्य-सम्बन्धी बीमारियों में लगभग 20 प्रतिशत की कमी आई है।

3.3 महिला शक्ति केन्द्र योजना (2017)–

इस योजना के माध्यम से ग्राम स्तर पर महिला स्वयं सहायता समूहों के द्वारा कौशल विकास, उद्यमिता और सामाजिक जागरुकता बढ़ाई गई। 2023 तक लगभग 3 लाख ग्राम पंचायतों में यह कार्यक्रम सक्रिय था।

3.4 स्वयं सहायता समूह (SHG) और DAY & NRLM–

स्वयं सहायता समूह ग्रामीण महिलाओं को सूक्ष्म वित्त और सामूहिक शक्ति के माध्यम से आत्मनिर्भर बनाते हैं।

विश्वबैंक (2021) के अनुसार– भारत में लगभग 7 करोड़ महिलाएँ 66 लाख SHGs से जुड़ी हैं। इन समूहों ने महिलाओं की आय, बचत और सामाजिक स्थिति में महत्वपूर्ण सुधार किया है।

3.5 राज्य सरकारों की पहलें–

उत्तर प्रदेश – कन्या सुमंगला योजना ने बालिका शिक्षा और विवाह में देरी को बढ़ावा दिया।

मध्य प्रदेश – लाड़ली लक्ष्मी योजना से बालिका जन्म दर में वृद्धि हुई।

तमिलनाडु – 'अम्मा कैंटीन' और 'स्वयं सहायता समूहों' ने महिलाओं की आजीविका सुनिश्चित की।

4. सामाजिक-आर्थिक प्रभाव (Socio & Economic Impact)–

सरकारी योजनाओं ने ग्रामीण महिलाओं के जीवन स्तर को कई स्तरों पर प्रभावित किया है–

आर्थिक स्वतंत्रता–

SHG और उज्ज्वला जैसी योजनाओं से महिलाओं की आर्थिक स्थिति मजबूत हुई। 2015–2023 के बीच ग्रामीण महिला श्रम सहभागिता दर 18 प्रतिशत से बढ़कर 27 प्रतिशत हुई (PLFS] 2023)।

शिक्षा और जागरुकता–

कन्याशिक्षा योजनाओं से ग्रामीण क्षेत्रों में महिला साक्षरता दर 2011 के 58.7 प्रतिशत से बढ़कर 2023 में 70.1 प्रतिशत हुई (NSSO)।

स्वास्थ्य सुधार–

उज्ज्वला योजना और जननी सुरक्षा योजना जैसी पहलों से मातृ मृत्युदर में उल्लेखनीय कमी आई।

सामाजिक स्थिति में सुधार–

महिलाएँ अब पंचायतों, स्वयं सहायता समूहों और स्थानीय उद्यमों में नेतृत्व की भूमिका निभा रही हैं।

5. मनोवैज्ञानिक प्रभाव (Psychological Impact)–

महिलाओं के भीतर आत्मविश्वास, पहचान और निर्णय लेने की क्षमता में वृद्धि हुई है।

SHG की महिलाओं में आत्म-सम्मान स्कोर औसतन 35 प्रतिशत अधिक पाया गया (NIRDPR, 2022)।

बालिकाओं में शिक्षा और करियर के प्रति झुकाव बढ़ा है।

घरेलू हिंसा और सामाजिक भेदभाव के खिलाफ प्रतिरोध की भावना बढ़ी है।

6. फ्री बीज बनाम सतत् विकास (Freebies vs Sustainable Development)–

फ्री बीज (मुफ्त वस्तुएँ या नकद सहायता) तत्काल राहत तो देती हैं, परन्तु दीर्घकालिक विकास नहीं



लातीं।

महिलास शक्तिकरण के लिए स्थायी ढांचा चाहिए—

गुणवत्तापूर्ण शिक्षा।
रोजगार आधारित प्रशिक्षण।
सामाजिक सुरक्षा नेटवर्क।
बाल देखभाल और स्वास्थ्य सुविधाएँ।
केवल नकद प्रोत्साहन से महिलाएँ स्थायी रूप से

आत्मनिर्भर नहीं बन सकतीं।

7. योजनाओं की राजनीतिक व्याख्या (Electoral Politics and Schemes)—

अक्सर महिला-केन्द्रित योजनाएँ चुनावी घोषणाओं से जुड़ जाती हैं।

इससे दो समस्याएँ उत्पन्न होती हैं—

योजनाएँ केवल मतदाताओं को आकर्षित करने के लिए बनती हैं।

योजना का दीर्घकालिक उद्देश्य कमजोर पड़ जाता है।

इसलिए नीतियाँ केवल राजनीतिक लाभ के बजाय वास्तविक सशक्तिकरण पर केन्द्रित होनी चाहिए।

8. कार्यान्वयन प्रणाली में सुधार की आवश्यकता (Implementation Reforms Needed)—

डेटा-आधारित निगरानी — योजनाओं की प्रगति को वास्तविक समय में ट्रैक करना।

स्थानीय निकायों की भागीदारी— ग्राम पंचायतों को योजना का स्वामित्व देना।

पारदर्शिता और जवाबदेही— योजना निधि का सही उपयोग सुनिश्चित करना।

महिलाओं के लिए डिजिटल प्रशिक्षण— ताकि वे सरकारी योजनाओं और बैंकिंग सुविधाओं का उपयोग स्वयं कर सकें।

9. ग्रामीण महिला सशक्तिकरण की चुनौतियाँ (Challenges Ahead)—

समाज में अब भी पितृसत्तात्मक सोच प्रबल है।

शिक्षा और स्वास्थ्य सेवाओं की पहुँच सीमित है।

SHG समूहों के लिए बाजार और पूंजी की कमी।

डिजिटल साक्षरता का अभाव।

10. निष्कर्ष (Conclusion)—

भारत में महिला सशक्तिकरण के लिए उठाए गए कदम प्रभावी रहे हैं, लेकिन यह प्रक्रिया अधूरी है।

केवल फ्री बीज आधारित योजनाएँ स्थायी

परिवर्तन नहीं ला सकतीं।

महिलाओं को शिक्षा, रोजगार, स्वास्थ्य, और आत्मनिर्भरता का सतत ढांचा प्रदान करना होगा।

राजनीतिक दृष्टि से योजनाओं का उपयोग चुनावी हथियार के रूप में करना बंद कर नीति के दीर्घकालिक उद्देश्यों पर ध्यान देना आवश्यक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची (References)

1. नीति आयोग, वार्षिक रिपोर्ट 2022–23।
2. राष्ट्रीय सांख्यिकी कार्यालय (NSO) – महिला श्रम सहभागिता रिपोर्ट – 2023।
3. विश्व बैंक रिपोर्ट – Women SHG Impact, 2021।
4. महिला एवं बालविकास मंत्रालय, भारत सरकार।
5. NIRDPR महिला अध्ययन रिपोर्ट, 2022।
6. UNDP Gender Equality Index 2023।



भारतीय संस्कृति में कला का समावेश

सारांश



— प्रो. दीपाली श्रीवास्तव
विभागाध्यक्षा — संगीत विभाग,
महिला महाविद्यालय (पी. जी.)
कॉलेज, किदवई नगर, कानपुर —
208011 (उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—

deepalisrivastav130@gmail.com

कला और संस्कृति किसी समाज की जीवन शैली, पहचान और मूल्यों को दर्शाती है। कला रचनात्मक अभिव्यक्ति है जिसमें सौंदर्य और भावनाओं की सराहना की जाती है, जैसे की संगीत, नृत्य, चित्रकला और साहित्य। संस्कृति वह व्यापक ढाँचा है जो व्यवहार, रीति रिवाजों, भाषा और विश्वासों के माध्यम से लोगों के जीवन को आकार देता है। ऊर्जा का महासागर है। जब अन्तरचेतना जागृत होती है तो ऊर्जा जीवन की कला के रूप में उभारती है। कला जीवन को सत्यम शिवम सुन्दरम से समन्वित करती है। इसके द्वारा ही बुद्धि आत्मा का सत्य स्वरूप झलकता है। कला उस क्षितिज की भाँति है जिसका कोई छोर नहीं, इतनी विशाल इतनी विस्तृत अनेक विधाओं को अपने में समेटे हुए।

प्रस्तावना—

साहित्य संगीत कला विहीनः, साक्षात् पशुः पुच्छ विषाणहीनः।¹

रविन्द्रनाथ ठाकुर के मुख से निकला “कला में मनुष्य अपने भावों की अभिव्यक्ति करता है।”²

तो प्लेटो ने कहा— “कला सत्य की अनुकृति के अनुकृति है।”³

टालस्टाय के शब्दों में “अपने भावों में किया रेखा, रंग ध्वनि या शब्द द्वारा इस प्रकार अभिव्यक्त करना कि उसे देखने या सुनने में भी वही भाव उत्पन्न हो जाए, कला है।” अर्थात् किसी भी देश अथवा जाति की संस्कृति उसकी शताब्दियों की अर्जित आध्यात्मिक, वैज्ञानिक, कलात्मक, दार्शनिक इत्यादि की परम्परागत उपलब्धियों का भण्डार है। संस्कृति प्रत्येक जाति या देश का भण्डार है। संस्कृति प्रत्येक जाति या देश का वादी स्वर है। मनुष्य शैशवावस्था से लेकर वृद्धावस्था तक अपने देश की संस्कृति से ही शिक्षित, पोषित और प्रभावित होता है। संस्कृति ज्ञान, भाव और कर्म का सामंजस्य है।

संस्कृति एक व्यक्ति की देन नहीं होती। उसके निर्माण में देश के महापुरुषों का योगदान होता है। संस्कृति विलास के लिये नहीं होती, उसका मुख्य परिदान है जीवन का विकास। संस्कृति ही एक ऐसी उपलब्धि है जो भूय, भवत् और भविष्य को एक सूत्र में ग्रथित करती है। संस्कृति मानव की चाभी है। संस्कृति के कुछ तत्व सार्वभौमिक हैं, किन्तु प्रत्येक देश की संस्कृति में कुछ तत्वों का प्राधान्य होता है।

भारतीय संस्कृति में वैदिक, तान्त्रिक, भ्रमण और मुसलमानों का अंशदान रहा है। भारतीय संस्कृति का मुख्य स्वर आध्यात्मिक है। इस संस्कृति में कला का क्या स्थान है, क्या महत्व है? इसी पर हमें विचार करना है। इन इन दृष्टियों से इस पर विचार करेंगे।

प्रत्येक कला मानव के सौन्दर्यबोध की अभिव्यक्ति है। सौन्दर्यबोध पर पाश्चात्य देशों में बहुत ही विचार हुआ है और वहाँ एक नये दर्शन का प्रादुर्भाव है जिसे (ऐसथेटिक्स) कहते हैं। भारत में सौन्दर्यबोध पर व्यापक विचार नहीं



हुआ है। यहाँ मुख्य विचार काव्य, नाटक और संगीत के परिप्रेक्ष्य में हुआ है।

कला का तात्पर्य—

पहले हम कला के तात्पर्य को समझने की चेष्टा करेंगे। कला के विषय में एक मत यह है कि कला महत्वपूर्ण रूप है। इसके मुख्य प्रतिपादक क्लवाइव बेल है। महत्वपूर्ण रूप का सर्जन एक विशेष अवलोकन शक्ति, एक विशेष दृष्टि का कार्य है।

हम सभी एक भूदृश्य को देखते हैं, किन्तु हम लोग प्रायः उसे पहाड़ी गाय, पशु, खलिहान, वृक्ष इत्यादि के मिले-जुले समूह के रूप में ही देखेंगे। परन्तु एक चित्रकार उस भूदृश्य को रेखाओं और वर्णों (रंगों) के समन्वित रूप में ही देखेगा। उसके लिये यह दृश्य एक महत्वपूर्ण रूप है, जिसको वह रेखाओं और वर्णों के पारस्परिक सम्पर्क के द्वारा अभिव्यक्त करता है। वह वस्तुस्थिति को एक महत्वपूर्ण आकृति के रूप में देखता है और यही उसकी कला है। इस मतावलम्बियों का यह कहना है कि किसी भी वस्तु को देखने की दो विधायें हैं— व्यावहारिक और कलात्मक और कलात्मक दृष्टि व्यावहारिक दृष्टि से अधिक सत्य है।

कला के सभी दार्शनिक इस तथ्य से सहमत हैं कि कलात्मक सृजन एक तात्त्विक उपक्रम है, सत्ता की चरम विशेषताओं की अभिव्यक्ति है। कला के रूपवादी मत में साहित्य का समावेश कठिन है। इसलिये इस मत के समर्थक साहित्य को शुद्ध कला मानते ही नहीं। साहित्य की विषयवस्तु सूचनात्मक और अनुबोधात्मक है, उसमें मानव के प्रत्ययों की अभिव्यक्ति होती है। जिस कारण साहित्य, संगीत और चित्र दोनों से भिन्न है और उसका स्पष्टीकरण केवल शुद्ध रूप से नहीं हो सकता।

साहित्य में बहुत सी सामग्री ऐसी होती है, जो केवल रूपात्मक सौन्दर्य नहीं होती, जो सर्वथा वर्णात्मक, सूचनात्मक और अनुबोधात्मक होती है। साहित्य तो घटनाओं और अवधारणाओं से सम्बद्ध है। यह मुख्यतः बौद्धिक है, इसलिये हम उसे शुद्ध कला नहीं कह सकते।

डकेस का कहना है कि वही वास्तविक कला है, जो हमारे भावों को अभिव्यक्त करती हो।

वीरों का मत है कि भाव और रूप का समन्वय ही वास्तविक कला है। रीड कहते हैं कि केवल भाव नहीं, विषयवस्तु की अभिव्यक्ति का भी सुन्दर संघटन कला है। केवल रूप के सन्निवेश को हम कला नहीं कह सकते। रूप का अर्थ है “एक विन्यास” और विषय का अर्थ है “वह भाव अथवा विचार, जो एक विन्यास विशेष में अभिव्यक्त किया

जाये।” जब इन दोनों का एक सुन्दर संघटन हो सके, तभी कला का प्रादुर्भाव होता है।

अतः एन. मारिस वाइल्स का यह निष्कर्ष है कि ‘कला विषय और शैली का वह सुसंघटित समवाय है, जो कि ऐन्द्रिय माध्यम के द्वारा उन तत्वों से व्यक्त होता है, जिनमें अभिव्यंजन शक्ति होती है और जो पारस्परिक सम्बन्धों से जुड़े हुये होते हैं।’

इस परिभाषा में तीन मुख्य तथ्य हैं—

(1) प्रत्येक कला विषय और शैली का सुसंघटित समवाय है। इस कथन का यह तात्पर्य है कि यह वह समवाय है, जिसका मानसिक विश्लेषण तो हो सकता है, किन्तु जिनके तत्वों का वास्तविक विच्छेद नहीं हो सकता।

(2) दूसरा तथ्य यह है कि कला का माध्यम ऐन्द्रिय होता है। कला या तो दृश्य होती है अथवा श्रव्य या दोनों। ललित कलाओं में से चित्र दृश्य हैं, काव्य और संगीत श्रव्य है, नाटक दृश्य और श्रव्य, दोनों हैं।

(3) तीसरा तथ्य यह है कि इसके तत्व वे होते हैं, जिनमें अभिव्यंजन शक्ति होती है और जो परस्पर संवादी गुणों से संश्लिष्ट होते हैं।

कला का उत्सव—

अभिनवगुप्त ने “ध्वन्यालोक” के प्रारम्भिक श्लोक में कला के मुख्य श्लोक का वर्णन इस प्रकार है—

‘अपूर्व यद्वस्तु प्रथयति बिना कारणकलां,

जगद् ग्रावप्रख्यं निजरसभिरात्सारयति च।

क्रमात्प्रख्योपाख्याप्रसरसुभगं भासयति तत्,

सरस्वत्यास्तत्त्वं कविसहृदयायाख्यं विजयते।।”⁴

कला के तत्व—

प्रख्या और उपाख्या कला के दो मुख्य तत्व हैं। प्रख्या प्रतिभा है और उपाख्या अभिव्यक्ति या वर्णनाशक्ति।

इस पर कोमुदी व्याख्या यह कहती हैं—

‘द्वेवर्त्मनी गिरां देव्याः शास्त्रं च कविकर्म च।

प्रज्ञोपज्ञं तपोराद्यं प्रतिभोद्भवमन्तिमम्।।”⁵

वाणी देवी के दो पंथ हैं— ‘शास्त्र और काव्य।

आद्य अर्थात् शास्त्र प्रज्ञा के द्वारा अन्तःकरण में आप से आप उपजे हुये ज्ञान से प्रतिपादित होता है और अन्तिम अर्थात् काव्य प्रतिभा द्वारा सृष्ट होता है। स्पष्ट है कि कौमुदीकार प्रतिभा को प्रज्ञा की उपज्ञा से अधिक उत्कृष्ट मानता है।

प्रज्ञा द्वारा उद्वेलित आन्तरिक सूझ-बूझ से मिलती-जुलती है। शास्त्र भी केवल तार्किक बुद्धि से नहीं निर्मित हो सकता है। उसे प्रज्ञा की उपज्ञा चाहिये। परन्तु कला की सर्जना प्रज्ञा की उपेक्षा से जो बढ़कर शक्ति है,



उसी से सिद्ध हो सकती है। ये शक्ति है प्रतिभा।¹ “प्रतिभा” शब्द जीनियस या इन्सपाइरेशन से मिलता जुलता है। “ध्वन्यालोक” में एक जगह आया है—

**‘अलोकसामान्यमभिव्यनक्ति,
परिस्फुरन्तं प्रतिभाविशेषम्।’²**

जिसके द्वारा लोक सामान्य से अतीत अनुभव का प्रस्फुरण होता है, वह प्रतिभा है। प्रतिभा की प्रतिपक्षी शब्द “व्युत्पत्ति” है। व्युत्पत्ति वह प्रवीणता है जो अर्जित की जाती है। प्रतिभा नैसर्गिक, अन्तर्जात होती है।

कलात्मक अभिवृत्ति—

कलात्मक अभिवृत्ति वह है जिसमें केवल आनन्द की अनुभूति होती है, कोई व्यावहारिक लाभ या स्वार्थ नहीं होता तथा जो जीवन के व्यावहारिक पक्ष से हमें पृथक् कर देती है। इसी को बुली ने दूरीकरण की मानसिक प्रक्रिया कहा है। इसका तात्पर्य यह है कि कला अपने मनोरंजक गुणों के द्वारा विषय को हमारे व्यावहारिक लाभों और स्वार्थों से दूर कर देती है, पृथक् कर देती है। यदि शाकुन्तल नाटक के देखने में हम अपनी प्रेयसी के व्यवहारों को सोचने लग जाते हैं तो हम नाटक का आनन्द नहीं ले रहे हैं, अपने व्यक्तित्व जीवन के तथ्यों को उलट रहे हैं।

दूरीकरण के दो पक्ष हैं— एक विलोमात्मक या निषेधात्मक पक्ष है जो विषयों के व्यावहारिक गुणों से और हमारी उनके प्रति व्यावहारिक अभिवृत्ति को विच्छेद कर देता है। दूसरा अनुलोमात्मक या विध्यात्मक पक्ष है जो दूरीकरण की निषेधात्मक प्रक्रिया द्वारा प्रसूत नवीन आधार पर प्रतिष्ठित सुसम्पन्नता को विकसित करता है।

इसके द्वारा चेतना का वह उभार उत्पन्न होता है जो दैनिक जीवन के कार्यकलापों के एक अल्पकालिक विरोध से प्रकट होता है।

कलात्मक अभिवृत्ति में एक विचित्र निरपेक्षता होती है जिसको पाश्चात्य और पौराणिक दार्शनिकों ने समान रूप से रेखांकित किया है। इसका यह अर्थ नहीं है कि इस अभिवृत्ति में अवधान की कमी आ जाती है, प्रत्युत इसमें प्रगाढ़ अवधान होता है। निरपेक्षता का भाव केवल यही है कि कलात्मक अभिवृत्ति में किसी व्यक्तिगत व्यावहारिक आवश्यकता से सम्बन्ध नहीं रहता।

कला की विशेषतायें—

कलाकृति केवल देखने या सुनने की वस्तु नहीं है। इसमें प्रेक्षक की तल्लीनता, ध्यानमग्नता होती है, भाव का माधुर्य की चर्वणा होती है।

चित्र कोई रेखांकित फलक नहीं है। वास्तविक देश वह है जिसमें वस्तुयें रखी होती हैं, जिसमें गति होती

है। इसके विपरीत चित्रित देश वह है जिसमें रेखाओं और वर्णों का अंगागिसखिल भाव विद्यमान हो। कला भौतिक द्रव्यों के माध्यम द्वारा ऐसी सर्जना है जो भौतिक द्रव्यों से अतीत होती है। आकृति मात्र कला नहीं होती। जब वह संवेदनशीलता से आप्लावित होती है, तभी वह कला का रूप धारण करती है। कला में एक व्यवस्थात्मकता, एक निश्चयात्मकता होती है। उसके भिन्न-भिन्न अंगों में एक विचित्र संश्लेषण होता है।

कला की अनुभूति अपरोक्ष होती है। उसका माध्यम दृश्य हो या श्रव्य, उसके तत्व रेखा, वर्ण, स्वर, लय, शब्द, छन्द कुछ भी हों, किन्तु उसकी अनुभूति अपरोक्ष होती है और वह अनुभूति आह्लादकारी व आनन्ददायक होती है। कला नानात्व में विविधता में एकत्व की अनुभूति है। रेखाओं और वर्णों में सामंजस्य, समानुपात, स्वरों में संवाद की अनुभूति ही कला है।

निष्कर्ष—

हमारी संस्कृति के इन तत्वों को प्राचीनकाल से लेकर आज तक की कलाओं में देखा जा सकता है। इन्हीं ललित कलाओं ने हमारी संस्कृति को सत्यम, शिवम, सुन्दरम सौन्दर्य जैसे अनेक सकारात्मक पक्षों को चिंतित किया है। इन कलाओं के माध्यम से ही हमारा लोकजीवन, लोकमानस तथा जीवन का अंगीकृत और अध्यात्मिक पक्ष अभिव्यक्त होता रहा है। भारतीय संस्कृति गरिमा और आध्यात्मिक विष्टिता पौराणिक कथाओं के द्वारा पोषित है। जिसके भूमि पर भगवान राम और कृष्ण जैसे देवताओं ने जन्म लिया है। इस देश के कुछ विशिष्ट सन्त और ऋषि-मुनियों ने जन्म लिया है। भारतीय संस्कृति और मूल्यों के सभी पक्षों पर कला का प्रभाव पड़ता रहा है। हम सभी बहुत धनी हैं। जो हमने ऐसी महान भूमि पर जन्म लिया है। जो उस पुरानी कला और संस्कृति को संजोते हुए पालन कर रहा है।

सभ्यता मौलिक प्रगति की सूचक है जब कि संस्कृति बौद्धिक या आत्मिक उन्नति की। सभ्यता मूर्त है तो संस्कृति अमूर्त। परन्तु दोनों परस्पर सम्बन्धित हैं।⁷

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. संगीत और साहित्य कला, पृष्ठ संख्या—303।
2. रवीन्द्र नाथ ठाकुर।
3. प्लेटो।
4. टालस्टाय।
5. ध्वन्यालोक, पृष्ठ संख्या — 448।
6. भारतीय संस्कृति और कलायें, पृष्ठ संख्या—106।
7. हिन्दी साहित्य और ललित कला, पृष्ठ संख्या — 58।



आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में कौटिल्य की युद्ध नीति की उपयोगिता



— डॉ. अंशु पाण्डेय
एसोसिएट प्रोफेसर —
राजनीति विज्ञान विभाग,
दयानन्द गर्ल्स (पी. जी.) कालेज,
कानपुर-208001 (उत्तर प्रदेश)

ई-मेल:
mail4anshu01@gmail.com

शोध-सार

आचार्य कौटिल्य प्राचीन भारत के अद्वितीय राजनयिक, अर्थशास्त्री और राजनीतिक चिन्तक थे। वे अनेकों नामों से जाने जाते हैं। उनका एक नाम चाणक्य भी है जो उन्हें चाणक का पुत्र होने के कारण मिला। उनका वास्तविक नाम विष्णु गुप्त था। उनकी रचना "अर्थशास्त्र" आज भी राजनीति, कूटनीति और प्रशासन का एक महत्वपूर्ण स्रोत मानी जाती है। यद्यपि यह ग्रन्थ लगभग 2300 वर्ष पूर्व लिखा गया था, परन्तु उनके अनेक सिद्धान्त आज के वैश्विक और भारतीय राजनीतिक परिदृश्य में प्रासंगिक दिखाई देते हैं।

भारतीय राजनीति और दर्शन के इतिहास में कौटिल्य (चाणक्य/विष्णुगुप्त) का नाम प्रमुखता से लिया जाता है। उन्होंने न केवल मौर्य साम्राज्य की स्थापना में प्रमुख भूमिका निभाई, बल्कि अपनी अद्वितीय कृति "अर्थशास्त्र" के माध्यम से राजनीति, अर्थशास्त्र, प्रशासन, कूटनीति और युद्धनीति के मूलभूत सिद्धान्तों की स्थापना भी की। कौटिल्य का चिन्तन व्यवहारवादी (Realistic) और व्यावहारिक राजनीति का दर्शन है। आज के युग में जब राजनीति बहुआयामी हो चुकी है, तब भी उनके विचार राष्ट्रहित, सुरक्षा, सुशासन और विदेश नीति के सन्दर्भ में उतने ही उपयोगी और प्रासंगिक हैं जितने 2300 वर्ष पूर्व थे।

आचार्य चाणक्य का जन्म गन्ध जनपद के तक्षशिला नामक नगर में हुआ था। वे अत्यन्त विद्वान्, तर्कशक्ति से परिपूर्ण और राजनीति के गहरे ज्ञाता थे। किन्तु उनका रूप-रंग साधारण और व्यक्तित्व परम्परागत राजदरबारी आकर्षण से अलग था।

कहा जाता है कि नन्द वंश के राजा ने एक बार ब्रह्म भोज का आयोजन किया, जिसमें उनके मंत्री शकटाल ने कौटिल्य को भी ब्रह्म भोज में आमंत्रित किया और आदरपूर्वक सर्वप्रथम आसन पर बिठाया। जब भोज प्रारम्भ हो रहा था, उसी समय ब्राह्मणों के आदर सत्कार के लिए महाराज नन्द पधारे, जब उन्होंने प्रथम पंक्ति में एक कुरूप और कृष्णकाय व्यक्ति को देखा तो क्रोधित होकर अपने मंत्री शकटाल से कहा इस चाण्डाल को इस ब्रह्मभोज में क्यों लाया गया। कौटिल्य के कुरूप स्वरूप और तीखे स्वभाव का मजाक उड़ाते हुए राजा नन्द ने उन्हें दरबार से बाहर निकाल दिया। कौटिल्य जैसे आत्मसम्मानी और विद्वान् व्यक्ति के लिए यह अपमान असहनीय था। उन्होंने दरबार से बाहर निकलते ही शपथ ली कि "जब तक मैं नन्द वंश का समूल नाश न कर लूँ तथा अपने इस अपमान का प्रतिशोध न ले लूँ, तब तक मैं शिखा बंधन नहीं करूंगा"। इस प्रकार आचार्य कौटिल्य ने नन्द राजाओं का



नाश किया तथा चन्द्रगुप्त मौर्य को भारत वर्ष के प्रथम सम्राट के रूप में प्रतिष्ठित किया।

कौटिल्य ने जिस युद्ध नीति का प्रतिपादन किया था, वह केवल तत्कालीन समय तक ही सीमित नहीं रही, बल्कि आज अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति और कूटनीति के क्षेत्र में यह अत्यन्त प्रासंगिक है। कौटिल्य ने युद्ध को केवल शस्त्र बल का प्रयोग नहीं माना, बल्कि उसे एक व्यापक राजनीतिक साधन के रूप में देखा। उनके अनुसार युद्ध का उद्देश्य केवल शत्रु का विनाश करना नहीं, बल्कि राज्य के हितों और स्थायित्व की रक्षा करना भी है। यही कारण है कि उनकी युद्ध नीति आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय परिप्रेक्ष्य में भी मार्गदर्शक सिद्ध होती है। कौटिल्य की युद्ध नीति का हम निम्न विश्लेषण कर सकते हैं—

कौटिल्य ने युद्ध को विभिन्न रूपों में विभाजित किया, जैसे—

1. युद्ध के प्रकार— प्रकाश युद्ध (सामने से किया जाने वाला युद्ध) कूटयुद्ध (धोखे और चालाकी से किया जाने वाला युद्ध) गुप्त युद्ध (षड्यंत्र, हत्या, गुप्तचरी और प्रचार युद्ध) धर्म युद्ध (न्याय और नैतिकता पर आधारित युद्ध)।

2. गुप्तचर तंत्र पर बल — कौटिल्य का मानना था कि युद्ध जीतने के लिए केवल सेना ही नहीं, बल्कि गुप्त सूचनाएँ भी राज्य की सुरक्षा के लिए आवश्यक हैं। आधुनिक युग में CIA, RAW, Mossad, FSB जैसी संस्थाएँ राष्ट्रीय सुरक्षा और रणनीतिक नीतियों में केन्द्रीय भूमिका निभाती हैं। कौटिल्य शत्रु को प्रत्यक्ष युद्ध में उलझाने के बजाय उसकी आर्थिक, मानसिक और राजनीतिक शक्ति को कमजोर करने में यकीन रखते हैं, उन्होंने गुप्तचरों और अफवाह फैलाने वालों को युद्ध का अंग माना है।

3. राष्ट्रीय हित सर्वोपरि— उनका विचार था कि राज्य को अपनी सीमाओं की रक्षा और विस्तार के लिए हर संभव उपाय करना चाहिए।

4. लागत और परिणाम का मूल्यांकन— वे कहते हैं कि युद्ध तभी किया जाना चाहिए, जब उसके लाभ उसकी हानियों से अधिक हों।

आधुनिक विश्व राजनीति की जटिलताओं के बीच कौटिल्य का संदेश है कि किसी भी राष्ट्र की सर्वोच्च प्राथमिकता उसका राष्ट्रीय हित होना चाहिए और उसके लिए आवश्यक हर साधन—चाहे वह कूटनीति हो, गुप्तचरी हो या सीमित युद्ध इनका विवेकपूर्ण प्रयोग करना ही

वास्तविक राजनीतिक परिपक्वता है।

आधुनिक अन्तरराष्ट्रीय राजनीति और कौटिल्य की युद्धनीति में समानतायें—

वर्तमान समय में अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति का स्वरूप बहुआयामी और जटिल हो गया है, 21वीं सदी में युद्ध पारम्परिक सीमाओं तक ही सीमित नहीं रहा है। आधुनिक युग का युद्ध सैनिकों के माध्यम से ही नहीं, बल्कि आर्थिक प्रतिबन्धों, साइबर हमलों, सूचना युद्ध, तकनीकी श्रेष्ठता, कूटनीतिक दबाव और प्रॉक्सी युद्धों के रूप में भी लड़ा जा रहा है। साथ ही परमाणु हथियारों ने युद्ध को और भी अधिक विनाशकारी बना दिया है, ऐसे समय में कौटिल्य की युद्ध नीति को अपनाना वर्तमान समय की आवश्यकता बन गई है। राष्ट्र अब प्रत्यक्ष संघर्ष से बचते हुए अप्रत्यक्ष तरीकों को प्राथमिकता देते हैं। वे कूटनीतिक युद्ध, सूचना युद्ध और आर्थिक युद्ध की रणनीतियों का सहारा लेते हैं, यही वह मार्ग है, जिसे कौटिल्य ने 2300 वर्ष पहले ही बताया था।

कौटिल्य ने अपने दर्शन में राज्य को राजा, मंत्री, जनता, सेना, किला, कोष और मित्र से मिलकर बने सप्तांग सिद्धान्त के रूप में वर्णित किया है। आधुनिक लोकतांत्रिक शासन में भी यही अवधारणा है सरकार (राजा), प्रशासनिक तंत्र (मंत्री), नागरिक (जनता), सुरक्षा बल (सेना), आधारभूत संरचना (किला), वित्तीय व्यवस्था (कोष) और अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध (मित्र)। कौटिल्य के मण्डल सिद्धान्त के अनुसार पड़ोसी राज्य शत्रु और पड़ोसी का पड़ोसी मित्र होता है। आज भी राष्ट्र अपने भू-राजनीतिक हितों के अनुसार गठबंधनों का निर्माण करते हैं। उदाहरण के लिए, अमेरिका, भारत, जापान और ऑस्ट्रेलिया का “क्वाड (QUAD)” गठबंधन चीन के प्रभाव को संतुलित करने की रणनीति के रूप में देखा जाता है।

अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में शक्ति-संतुलन की अवधारणा ‘Balance of Power’ कौटिल्य के मण्डल सिद्धान्त सिद्धान्त से मेल खाती है। आज अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में अमेरिका और सोवियत संघ के बीच प्रत्यक्ष युद्ध नहीं हुआ, किन्तु गुप्त युद्ध, वैचारिक टकराव, कूटनीति और छोटे राष्ट्रों को अपनी ओर साधने की नीति अपनायी जा रही है,। यह कौटिल्य की गुप्त और अप्रत्यक्ष युद्धनीति से काफी मेल खाती है। आज के समय में भी राष्ट्र अप्रत्यक्ष माध्यमों से जैसे आर्थिक नाकेबन्दी, साइबर अटैक, दुष्प्रचार अभियान और गुप्तचरी जैसे उपायों से अपने शत्रु को कमजोर करने का प्रयास करते हैं, साथ ही



साथ आज अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति में प्रतिबन्ध (Sanctions) एक हथियार के रूप में इस्तेमाल किया जाता है। अमेरिका की "टैरिफ नीति" भी अन्य राष्ट्रों पर अपना वर्चस्व स्थापित करने की एक नीति ही है। यह कौटिल्य के उसे विचार से जुड़ा है, जिसमें उन्होंने कहा था कि यदि शत्रु पर प्रत्यक्ष आक्रमण सम्भव न हो, तो उसके व्यापार और संसाधनों को बाधित कर देना चाहिए।

कौटिल्य ने कहा था कि राज्य को हमेशा अपनी शक्ति और संसाधनों का मूल्यांकन करते हुए युद्ध की दिशा तय करनी चाहिए। उन्होंने युद्ध को केवल शक्ति प्रदर्शन का साधन नहीं माना, बल्कि उसे राज्य की सुरक्षा और विस्तार का एक अनिवार्य अंग माना। उनके अनुसार— युद्ध राज्य की नीति का हिस्सा है और यह तभी किया जाना चाहिए जब अन्य साधन जैसे संधि, तुष्टीकरण, दण्डनीति और गुप्तचर उपायों द्वारा लक्ष्य की प्राप्ति न हो सके। उनकी युद्ध नीति यथार्थवादी दृष्टिकोण पर आधारित थी, जिसमें भावनाओं से अधिक राज्यहित को सर्वोपरि रखा गया। कौटिल्य का यह विचार आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्धों में 'यथार्थवाद' (Realism) की थ्योरी से मेल खाता है, जिसमें 'राष्ट्रीय हित' को सर्वोपरि माना गया है। वर्तमान वैश्विक व्यवस्था में अमेरिका, चीन, रूस जैसे महाशक्ति राष्ट्र अपने हितों के अनुसार ही सैन्य या कूटनीतिक कदम उठाते हैं। भारत भी अपनी सीमाओं की सुरक्षा, आतंकवाद विरोधी नीतियों और सामरिक साझेदारियों में इसी सिद्धान्त का पालन करता दिखाई देता है। हमने कई अवसरों पर कौटिल्य की युद्ध नीति को अप्रत्यक्ष रूप से अपनाया है। जैसे— 1971 का बांग्लादेश युद्ध, जिसमें भारत ने प्रत्यक्ष युद्ध के साथ बांग्लादेश को गुप्त समर्थन भी दिया, कारगिल युद्ध में गुप्तचर तंत्र ने निर्णायक भूमिका निभाई। वर्तमान में चीन के साथ सीमा विवाद और पाकिस्तान के साथ आतंकवादरोधी नीति, दोनों में भारत कभी कूटनीति तो कभी सैन्य शक्ति का संतुलित प्रयोग करता है।

कौटिल्य ने शासन को मजबूत बनाने के लिए आर्थिक स्वावलम्बन और समृद्धि को आवश्यक बताया क्योंकि यह राज्य की शक्ति और प्रजा के कल्याण का आधार है। आर्थिक समृद्धि से ही राज्य अपनी सेना और आन्तरिक सुरक्षा मजबूती प्रदान कर जनकल्याणकारी योजनाओं को लागू कर सकता है, जिससे प्रजा सुखी और संतुष्ट रहती है, आज के दौर में आर्थिक सुधार, स्वदेशी उत्पादन, मेक इन इण्डिया जैसी नीतियों में उनकी सोच की झलक मिलती है। कौटिल्य ने कहा था कि "राजा

प्रजा के सुख को ही अपना सुख माने।" आधुनिक लोकतंत्र में लोककल्याणकारी राज्य की अवधारणा इसी विचार से प्रेरित है।

निष्कर्ष—

कौटिल्य का राजनीतिक चिन्तन समय से परे है। उन्होंने जिस यथार्थवादी दृष्टिकोण से राज्य, सत्ता, अर्थव्यवस्था, सुरक्षा और कूटनीति को देखा, वह आज भी उतना ही प्रासंगिक है जितना मौर्यकाल में था। हालाँकि लोकतंत्र, मानवाधिकार और समानता जैसे आधुनिक मूल्यों को वे प्रत्यक्ष रूप से नहीं स्वीकारते थे, फिर भी उनका व्यवहारवादी दृष्टिकोण राजनीति को व्यावहारिक, तर्कसंगत और राष्ट्रहित में ढालता है। उन्होंने यह सिद्धान्त दिया कि युद्ध केवल रणभूमि में लड़ी जाने वाली लड़ाई नहीं है, बल्कि यह राजनीतिक, आर्थिक, कूटनीतिक और गुप्त साधनों का संयोजन है। यही कारण है कि आज जब राष्ट्र प्रत्यक्ष युद्ध से बचकर आर्थिक प्रतिबन्ध, साइबर युद्ध, दुष्प्रचार और कूटनीतिक गठबंधनों का सहारा लेते हैं, तब यह स्पष्ट हो जाता है कि कौटिल्य की सोच कितनी दूरदर्शी थी।

अन्ततः कहा जा सकता है कि कौटिल्य की युद्ध नीति केवल ऐतिहासिक धरोहर नहीं है, बल्कि आधुनिक अन्तर्राष्ट्रीय राजनीति के लिए भी अत्यन्त प्रासंगिक है। उनके सिद्धान्त यह बताते हैं कि युद्ध केवल रणभूमि तक सीमित नहीं होता, बल्कि यह राजनीति, अर्थव्यवस्था, कूटनीति और गुप्तचर तंत्र से जुड़ा हुआ एक व्यापक आयाम है। आज के वैश्विक परिदृश्य में जब अन्तर्राष्ट्रीय सम्बन्ध अधिक जटिल और बहुआयामी हो चुके हैं, कौटिल्य की युद्ध नीति राष्ट्रों को यह सिखाती है कि शत्रुता से निपटने के लिए विवेक, रणनीति, गुप्त नीति और शक्ति संतुलन का समुचित उपयोग आवश्यक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. वी. एन. लूनिया — प्राचीन भारतीय संस्कृति, प्रश्न संख्या 392)।
2. कौटिल्य अर्थशास्त्र — लेखक प्रोफेसर इन्द्र चंहम — 4।
3. डॉ. शुकदेव प्रसाद दुबे — आधुनिक विश्व का कूटनीतिक इतिहास, उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान।
4. हेमचन्द्र चौधरी — प्राचीन भारत का राजनीतिक इतिहास, किताब महल, इलाहाबाद।
5. नीतिसार — 11/40।
6. अर्थशास्त्र — 7-1, 3-1।
7. अर्थशास्त्र, 7,1, 3-4।



भारतीय ज्ञान परम्परा में श्रीमद्भागवद् महापुराण का योगदान



— कपिल दुबे
शोध छात्र — संस्कृत विभाग,
तिलक महाविद्यालय, औरैया—
(उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
kapilkd25199@gmail.com

सारांश

भारतीय ज्ञान परम्परा में श्रीमद्भागवत महापुराण का विशिष्ट योगदान है। श्रीमद्भागवत महापुराण में भारतीय ज्ञान परम्परा से सम्बन्धित अनेक विषयों पर प्रकाश डाला गया है। श्रीमद्भागवत महापुराण की लोकप्रियता सर्वाधिक है। भारतीय विद्वान श्रीमद्भागवत महापुराण का विशेष रूप से अध्ययन करते हैं। जिसमें सृष्टि प्रक्रिया का वर्णन ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति भारतीय संस्कृति और सभ्यता का वर्णन किया गया है। श्रीमद्भागवत महापुराण के अध्ययन से समस्त भारतीय संस्कृति का दर्शन किया जा सकता है। भारतीय विद्वानों के अनुसार श्रीमद्भागवत महापुराण में सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय के तत्त्व निहित हैं।

मुख्य शब्द — श्रीमद्भागवत वेदरूपकल्पवृक्ष आकाशादि पंचभूत शब्दादि तन्मात्राएँ इन्द्रियाँ अहंकार और महत् तत्त्व चित्तवृत्तियाँ इत्यादि।

भारतीय ज्ञान परम्परा में श्रीमद्भागवत महापुराण का विशिष्ट योगदान है। श्रीमद्भागवत महापुराण के प्रसंग भारतीय जनमानस में समाहित हैं। श्रीमद्भागवत महापुराण के महत्व पर प्रकाश डालते हुए श्रीसूत जी कहते हैं कि—

‘निगमकल्पतरुर्गलितं फलं शुक्लमुखादमृतद्रवसंयुतम् ।
पिबत भागवतं रसमालयं मुहुरहो रसिका भुवि भावुका ।।’

श्रीमद्भागवत वेदरूप कल्पवृक्ष का पका हुआ फल है। श्रीशुकदेवरूप तोते के मुख का सम्बन्ध हो जाने से यह परमानन्दमयी सुधा से परिपूर्ण हो गया है। इस फल में छिलका गुठली आदि त्याज्य अंश थोड़ा भी नहीं है। यह मूर्तिमान रस है। जब तक शरीर में चेतना रहे तब तक इस दिव्य भगवद् रस का निरन्तर बार-बार पान करते रहो। यह पृथ्वी पर सुलभ है।

पुराण-साहित्य में सर्वाधिक प्रचलित कृति भागवतमहापुराण ही है। इसका पारायण विष्णुभक्तों के द्वारा किया जाता है। इस पर अनेक संस्कृत व्याख्याएँ हुई हैं तथा अनेक भाषाओं में इसके रूपान्तर हैं। रामायण के समान इसका व्यापक प्रचार है। भक्तिरस का आधारग्रन्थ और धर्म का रसमय स्वरूप होने के कारण इसे अनुपम प्रसिद्धि प्राप्त है। अन्य पुराणों की अपेक्षा इसकी भाषा-शैली अत्यधिक परिष्कृत लालित्यपूर्ण कवित्वमय एवं प्रौढ़ है। शिक्षित ब्राह्मणों के घर में वेद या अन्य पुराण भले ही न मिलें भागवतपुराण अवश्य मिलेगा। विभिन्न अवसरों पर किसी फल के उद्देश्य से इस पुराण का सप्ताह-वाचन पारायण होता है। इसे सभी दर्शनों का सार (निगमकल्पतरुर्गलितं फलम्) तथा विद्वानों का परीक्षास्थल कहा गया है (विद्यावतां भागवते परीक्षा)। यहाँ श्रीकृष्ण को ही ब्रह्मपरमात्मा और भगवान् बताया गया है।



रिसर्च सुपरवाइजर —
— डॉ. अंशुल दुबे
असिस्टेन्ट प्रोफेसर—संस्कृत विभाग,
तिलक महाविद्यालय, औरैया —
206122 (उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
bhuanshul@gmail.com



इस पुराण का विभाजन 12 स्कन्धों में हुआ है। पूरे ग्रन्थ में 335 अध्याय तथा अठारह सहस्र श्लोक हैं। श्रीमद्भागवत महापुराण अत्यन्त गोपनीय रहस्यात्मक पुराण है। यह भागवत्स्वरूप का अनुभव कराने वाला और समस्त वेदों का सार है। संसार में फँसे हुए जो लोग इस घोर अज्ञानान्धकार से पार जाना चाहते हैं, उनके लिए आध्यात्मिक तत्वों को प्रकाशित कराने वाला यह एक अद्वितीय दीपक है। वास्तव में उन्हीं पर करुणा करके बड़े-बड़े मुनियों के आचार्य श्रीशुकदेव जी ने इसका वर्णन किया है—

‘यः स्वानुभावमखिलश्रुतिसारमेक—

मध्यात्मदीपमतितीर्षतां तमोऽन्धम् ।

संसारिणां करुणयाऽऽह पुराणगुह्यं तं व्याससूनुमुपयामि
गुरुं मुनीनाम् ।।’

श्रीमद्भागवत महापुराण के श्रवण से प्राप्त ज्ञान—वैराग्ययुक्त भक्ति से अपने हृदय में उस परमतत्वरूप परमात्मा का अनुभव करते हैं। श्रीमद्भागवत महापुराण के निरन्तर श्रवण से समस्त अशुभ वासनायें नष्ट हो जाती हैं। भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति प्रबल भक्ति जाग्रत हो जायेगी—

नष्टप्रायेष्वभद्रेषु नित्यं भागवतसेवया ।

भगवत्युत्तमश्लोके भक्तिर्भवति नैष्ठिकी ।।

श्रीमद्भागवत महापुराण के सेवन से रजोगुण और तमोगुण के भाव आदि शान्त हो जाते हैं। मनुष्यों का चित्त सत्त्वगुण में स्थित हो जाता है। श्रीमद्भागवत महापुराण के श्रवण से सभी आसक्तियों का विनाश हो जाता है। हृदय आनन्द से ओत—प्रोत हो जाता है। लोगों के समस्त संशय दूर हो जाते हैं। भगवद् प्राप्ति भी हो जाती है। श्रीमद्भागवत महापुराण की रचना भगवान् कृष्णद्वैपायन वेदव्यास ने की। जो वेद के समान पुनीत है। महर्षि वेदव्यास ने मनुष्यों के कल्याण के लिए इस दिव्य अमृतरूपी ग्रन्थ की रचना की। जिसके अध्ययन से मनुष्य सहज ही जन्म—जन्मान्तर के पापों से मोक्ष प्राप्त कर लेता है।

इदं भागवतं नाम पुराणं ब्रह्मसम्मितम् ।

उत्तमश्लोकचरितं चकार भगवानृषिः ।।

श्रीमद्भागवत महापुराण में समस्त वेदों का सार संग्रहीत है। भगवान् वेदव्यास ने सर्वप्रथम अपने ज्ञानशिरोमणि पुत्र श्री शुकदेव जी महाराज को श्रवण कराया तत्पश्चात् श्रीशुकदेव जी ने राजा परीक्षित को दिव्य ज्ञान प्रदान दिया।

निःश्रेयसाय लोकस्य धन्यं स्वस्त्ययन महत्त्व ।

तदिदं ग्राहयामास सुतमात्मवती तरम ।।

सर्व वेदेतिहासानां सारं समुद्धृतम् ।

सतु संश्रावयामास महाराज परीक्षितम् ।।

पं. बलदेव उपाध्याय जी कहते हैं कि जब कलियुग में मनुष्य अज्ञानरूपी अंधकार से अंधे हो रहे थे उनके कल्याण के लिए भगवान् वेदव्यास ने दिव्य पुराणरूपी सूर्य प्रकट किया। श्रीमद्भागवत महापुराण के अध्ययन से मनुष्यों के जीवन में अज्ञानरूपी तम को विनष्ट करके प्रकाशरूपी ज्ञान की अनुभूति कराता है।

परिचय —

व्यास जी का जन्म वर्तमान चतुर्युगी के तीसरे युग द्वापर में महर्षि पराशर के द्वारा वसुकन्या सत्यवती के गर्भ से भगवान् के कलावतार योगिराज व्यास जी का जन्म हुआ। एक दिन वे सूर्योदयके समय सरस्वती के पवित्र जल में स्नानादि करके एकान्त पवित्र सीमन पर बैठे हुए थे। महर्षि भूत और भविष्यको जानते थे। उनकी दृष्टि अचूक थी। उन्होंने देखा कि जिसको लोग जान नहीं पाते ऐसे समय के फेर से प्रत्येक युग में धर्मसंकरता और उसके प्रभाव से भौतिक वस्तुओं की भी शक्ति का ह्रास होता रहता है। संसार के लोग श्रद्धाहीन और शक्तिरहित हो जाते हैं। उनकी बुद्धि कर्तव्य का ठीक—ठीक निर्णय नहीं कर पाती और आयु भी कम हो जाती है। लोगों की इस भाग्यहीनता को देखकर उन मुनीश्वर ने अपनी दिव्यदृष्टि से समस्त वर्णों और आश्रमों का हित कैसे हो इस पर विचार किया। उन्होंने सोचा कि वेदोक्त चातुर्होत्र कर्म लोगों का हृदय शुद्ध करने वाला है। इस दृष्टि से यज्ञों का विस्तार करने के लिये उन्होंने एक ही वेद के चार विभाग कर दिये। व्यास जी के द्वारा ऋग्वेदजुः साम और अथर्व — इन चार वेदों का उद्धार (पृथक्करण) हुआ। इतिहास और पुराणों को पाँचवाँ वेद कहा जाता है।

प्रसिद्ध विद्वान् डॉ. शिवबालक द्विवेदी की श्रीमद्भागवत महापुराण के महत्त्व पर प्रकाश डालते हुए कहते हैं कि यह संसार के त्रिविध कालों की एकमात्र औषधि है। श्रीमद्भागवत की भाषा शैली सरल एवं मधुर होने के कारण विद्वान् सहसा ही समाकृष्ट हो जाते हैं। जिन लोगों का चित्त निरन्तर विषयभोगों की कामना से आतुर हो रहे हैं। उनके लिए श्रीभगवान् की लीलाओं का कीर्तन संसारसागर से पार जाने का जहाज है।

श्रीमद्भागवत महापुराण के श्रवणमात्र से पुरुषोत्तम भगवान् श्रीकृष्ण के प्रति परम प्रेममयी भक्ति हो



जाती है जिससे जीव के शोक—मोह और भय विनष्ट हो जाते हैं। उन्होंने इस भागवत संहिता का निर्माण और पुनरावृत्ति करके इसे अपने निवृत्तिपरायण पुत्र श्रीशुकदेव जी को पढ़ाया।

यस्यां वै श्रूयमाणायां कृष्णे परमपुरुषे ।

भक्तिरुत्पद्यते पुंसः शोकमोहभयापहा ।।

स संहिता भागवतीं कृत्वानुक्रम्य चात्मजम् ।

शुकमध्यापयामास निवृत्तिनिरतं मुनिः ।।

डॉ. हरिदत्त शास्त्री कहते हैं कि भगवत्परायण पुरुष भक्तिभाव से श्रीमद्भागवत महापुराण का श्रवण करता है उसके कर्म बन्धन छूट जाते हैं। तथा मृत्यु का भय नहीं रहता है। भारतीय ज्ञान परम्परा में श्रीमद्भागवत महापुराण का विशिष्ट योगदान है। भगवान् शुकदेव जी महाराज कहते हैं कि जो गृहस्थ घर के कार्यों में उलझे हुए हैं अपने स्वरूप को नहीं जानते। उनकी सम्पूर्ण आयु बीत जाती है। उनकी रात स्त्री—प्रसंग से कटती है और दिन धन की हाय—हाय या कुटुम्बियों के भरण—पोषण में समाप्त हो जाता है। संसार में जिन्हें लोग अपना घनिष्ठ सम्बन्धी कहते हैं; वे सब असत्य हैं परन्तु जीव उनके मोह में चिन्ताग्रस्त हैं। जो लोग अभय पद को प्राप्त करना चाहते हैं “उसे तो सर्वात्मा सर्वशक्तिमान् भगवान् श्रीकृष्ण की ही लीलाओं का श्रवणकीर्तन करना चाहिए।

मनुष्य जन्म का प्रयोजन बतलाते हुए श्रीशुकदेव जी राजा परीक्षित से कहते हैं कि चाहे जिस प्रकार ज्ञान से भक्ति से अथवा अपने धर्म की निष्ठा से जीवन को ऐसा बना लिया जाय कि मृत्यु के समय भगवान् की स्मृति अवश्य बनी रहे।

श्रीमद्भागवत महापुराण के द्वितीय स्कन्ध में कहा गया है कि श्रीभगवान् ने ब्रह्माजी को स्वयं चतुःश्लोक भागवत का उपदेश दिया था। उसी उपदेश को ब्रह्मा जीने अपने पुत्र नारद जी को तथानारद जी ने वही उपदेश श्रीव्यास जी को तथा व्यास जी ने अपने पुत्र श्रीशुकदेव जी को दिया।

तस्मा इदं भागवत पुराणं दशलक्षणम् ।

प्रोक्तं भगवता प्राह प्रीतः पुत्राय भूतकृत् ।

नारदः प्राह मुनये सरस्वत्यास्तटे नृप ।

ध्यायते ब्रह्म परम व्यासायामिततेजसे ।।

भागवत के दस लक्षण—

श्रीमद्भागवत महापुराण में दस लक्षण — सर्ग विसर्ग स्थान पोषण ऊति मन्वन्तर ईशानुकथा निरोध मुक्ति

और आश्रय का वर्णन है इनमें जो दसवाँ आश्रय—तत्त्व है। उसी का ठीक—ठीक निश्चय करने के लिये कहीं श्रुति से कहीं तात्पर्य से और कहीं दोनों के अनुकूल अनुभव से महात्माओं ने अन्य नौ विषयों का बड़ी सुगम रीति से वर्णन किया है। ईश्वर की प्रेरणा से गुणों में क्षोभ होकर रूपान्तर होने से जो आकाशादि पंचभूत शब्दादि तन्मात्राएँ इन्द्रियाँ अहंकार और महत्तत्त्व की उत्पत्ति होती हैं, उसको सर्ग कहते हैं। उस विराट् पुरुष से उत्पन्न ब्रह्माजी के द्वारा जो विभिन्न चराचर सृष्टियों का निर्माण होता है, उसका नाम है विसर्ग। प्रतिपद नाश की ओर बढ़ने वाली सृष्टि को एक मर्यादा में स्थिर रखने से भगवान् विष्णु की जो श्रेष्ठता सिद्ध होती है, उसका नाम सीन है। अपने द्वारा सुरक्षित सृष्टि में भक्तों के ऊपर उनकी जो कृपा होती है उसका नाम है पोषण। मन्वन्तरों के अधिपति जो भगवद्भक्ति और प्रजापालन रूप शुद्ध धर्म का अनुष्ठान करते हैं उसे मन्वन्तर कहते हैं। जीवों की वे वासनाएँ जो कर्मके द्वारा उन्हें बन्धन में डाल देती हैं, ऊतिनाम से कही जाती हैं। भगवान् के विभिन्न अवतारों के और उनके प्रेमी भक्तों की विविध आख्यानों से युक्त गाथाएँ ईशकथा हैं। जब भगवान् योगनिद्रा स्वीकार करके शयन करते हैं, तब इस जीव का अपनी उपाधियों के साथ उनमें लीन हो जाना निरोध है। अज्ञानकल्पित कर्तृत्वभोक्तृत्व आदि अनात्मभाव का परित्याग करके अपने वास्तविक स्वरूप परमात्मा में स्थित होना ही मुक्ति है। इस चराचर जगत् की उत्पत्ति और प्रलय जिस तत्त्व से प्रकाशित होते हैं, वह परम ब्रह्म ही आश्रय है। शास्त्रों में उसी को परमात्मा कहा गया है। जो नेत्र आदि इन्द्रियों का अभिमानी द्रष्टा जीव है, वही इन्द्रियों के अधिष्ठातृदेवता सूर्य आदि के रूप में भी है और जो नेत्रगोलक आदि से युक्त दृश्य देह है, वही उन दोनों को अलग—अलग करता है। इन तीनों में यदि एक का भी अभाव हो जाय तो दूसरे दो की उपलब्धि नहीं हो सकती। अतः जो इन तीनों को जानता है, वह परमात्मा ही सबका अधिष्ठान आश्रयतत्त्व है। उसका आश्रय वह स्वयं ही है दूसरा कोई नहीं।

श्री शुकदेवजीने कलियुग में जीवों के कालरूपी सर्प के मुख का ग्रास होने के त्रास का आत्यन्तिक नाश करनेके लिये श्रीमद्भागवतशास्त्र का प्रवचन किया है। मनकी शुद्धि के लिये इससे बढ़कर कोई साधन नहीं है। जब मनुष्य के जन्म—जन्मान्तर का पुण्य उदय होता है तभी उसे इस भागवतशास्त्र की प्राप्ति होती है।



श्रीमद्भागवत महापुराण की तुलना अमृत से की गयी है। जब श्री शुकदेवजी राजा परीक्षित से कहते हैं कि यह कथा सुनाने के लिये सभा में विराजमान हुए तब देवता लोग उनके पास अमृत का कलश लेकर आये। देवता अपना काम बनाने में बड़े कुशल होते हैं। अतः यहाँ भी सबने श्री शुकदेवमुनि को नमस्कार करके कहा— आप यह अमृत लेकर बदले में हमें कथामृत का दान दीजिये। इस प्रकार परस्पर विनिमय (अदला-बदली) हो जाने पर राजा परीक्षित अमृत का पान करें और हम सब श्रीमद्भागवतरूप अमृत का पान करेंगे। इस संसार में कहाँ काँच और कहाँ महामूल्य मणि तथा कहाँ सुधा।

पूर्वकाल में श्रीमद्भागवत के श्रवण से ही राजा परीक्षित की मुक्ति देखकर ब्रह्माजी को भी बड़ा आश्चर्य हुआ था। उन्होंने सत्यलोक में तराजू बाँधकर सब साधनों को तौला। अन्य सभी साधन तौल में हलके पड़ गये अपने महत्त्व के कारण भागवत ही सबसे भारी रहा। यह देखकर सभी ऋषियों को बड़ा विस्मय हुआ। उन्होंने कलियुग में इस भगवद् रूप भागवतशास्त्र को ही पढ़ने-सुनने से तत्काल मोक्ष देने वाला निश्चय किया। भारतीय ज्ञान परम्परा में श्रीमद्भागवत महापुराण मोक्ष प्रदान करने वाला पुराण है। सप्ताह-विधि से श्रवण करने पर यह निश्चय भक्ति प्रदान करता है। पूर्वकाल में इसे दया परायण सनकादि ने देवर्षि नारद को सुनाया था। यद्यपि देवर्षि ने पहले ब्रह्माजी के मुख से इसे श्रवण कर लिया था तथापि सप्ताह श्रवण की विधि तो उन्हें सनकादि ने ही बतायी थी। द्रव्ययज्ञ तपोयज्ञ योगयज्ञ और स्वाध्याय रूप ज्ञानयज्ञ — ये सब तो स्वर्गादि की प्राप्ति कराने वाले कर्म की ही ओर संकेत करते हैं। पण्डितों ने ज्ञानयज्ञ को ही सत्कर्म (मुक्तिदायक कर्म) का सूचक माना है। वह श्रीमद्भागवत का पारायण है जिसका गान शुकादि महानुभावों ने किया है। उसके शब्द सुनने से ही भक्तिज्ञान और वैराग्य को बड़ा बल मिलेगा। इससे ज्ञान-वैराग्य का कष्ट मिट जायगा और भक्ति को आनन्द मिलेगा। सिंह की गर्जना सुनकर जैसे भेड़िये भाग जाते हैं उसी प्रकार श्रीमद्भागवत की ध्वनि से कलियुगके सारे दोष नष्ट हो जायेंगे।

श्रीमद्भागवत की कथा वेद और उपनिषदों के सार से बनी है। इसलिये उनसे अलग उनकी फलरूपा होने के कारण वह बड़ी उत्तम जान पड़ती है। जिस प्रकार रस वृक्ष की जड़ से लेकर शाखाग्र पर्यन्त रहता है किन्तु इस स्थिति में उसका आस्वादन नहीं किया जा सकता; वही जब

अलग होकर फल के रूप में आ जाता है, तब संसार में सभी को प्रिय लगने लगता है। दूध में घी रहता ही है किन्तु उस समय उसका अलग स्वाद नहीं मिलता; वही जब उससे अलग हो जाता है तब देवताओं के लिये भी स्वादवर्धक हो जाता है। ख़ाँड ईख के ओर-छोर और बीच में भी व्याप्त रहती है तथापि अलग होने पर उसकी कुछ और ही मिठास होती है ऐसी ही यह भागवत की कथा है। यह भागवत पुराण वेदों के समान है। श्री व्यास जी ने इसे भक्तिज्ञान और वैराग्य की सीपना के लिये प्रकाशित किया है। पूर्वकाल में जिस समय वेद-वेदान्त के पारगामी और गीता की भी रचना करने वाले भगवान् व्यास जी खिन्न होकर अज्ञान समुद्र में गोते खा रहे थे उस समय आपने ही उन्हें चार श्लोकों में इसका उपदेश किया था। उसे सुनते ही उनकी सारी चिन्ता दूर हो गयी थी।

श्रीमद्भागवतकीमहिमा —

श्रीमद्भागवत महापुराण के श्रवण मात्र से मुक्ति हाथ लग जाती है। श्रीमद्भागवत की कथा का सदा — सर्वदा सेवन आस्वादन करना चाहिये। इसके श्रवणमात्र से श्रीहरि हृदय में आ विराजते हैं। इस ग्रन्थ में अठारह हजार श्लोक और बारह स्कन्ध हैं तथा श्री शुकदेव और राजा परीक्षित जी का संवाद है। यह जीव तभी तक अज्ञानवश इस संसारचक्र में भटकता है जब तक क्षण भर के लिये भी कानों में इस शुकशास्त्र की कथा नहीं पड़ती। बहुत-से शास्त्र और पुराण सुनने से क्या लाभ है, इससे तो व्यर्थ का भ्रम बढ़ता है। मुक्ति देनेके लिये तो एकमात्र भागवतशास्त्र ही गरज रहा है। जिस घरमें नित्यप्रति श्रीमद्भागवत की कथा होती है वह तीर्थरूप हो जाता है और जो लोग उसमें रहते हैं उनके सारे पाप नष्ट हो जाते हैं। हजारों अश्वमेध और सैकड़ों वाजपेय यज्ञ इस शुकशास्त्र की कथा का सोलहवाँ अंश भी नहीं हो सकते। जब तक लोग अच्छी तरह श्रीमद्भागवत का श्रवण नहीं करते तभी तक उनके शरीर में पाप निवास करते हैं। फल की दृष्टि से इस शुकशास्त्र कथा की समता गंगा गया काशी पुष्कर या प्रयाग आदि कोई तीर्थ भी नहीं कर सकता।

श्रीमद्भागवत महापुराण का प्रयोजन—

यदि आपको परम गतिकी इच्छा है तो अपने मुखसे ही श्रीमद्भागवत के आधे अथवा चौथाई श्लोक का भी नित्य नियमपूर्वक पाठ कीजिये। ऊँकार गायत्री पुरुष सूक्त तीनों वेद श्रीमद्भागवत ऊँ नमो भगवते वासुदेवाय यह द्वादशाक्षर मन्त्र बारह मूर्तियों वाले सूर्य भगवान् प्रयाग



संवत्सर रूप काल ब्राह्मण अग्निहोत्र गौ द्वादशी तिथि तुलसी वसन्त ऋतु और भगवान् पुरुषोत्तम — इन सब में बुद्धिमान् लोग वस्तुतः कोई अन्तर नहीं मानते। जो पुरुष अहर्निश अर्थसहित श्रीमद्भागवत शास्त्र का पाठ करता है उसके करोड़ों जन्मों का पाप नष्ट हो जाता है— इसमें तनिक भी संदेह नहीं है। जो पुरुष नित्यप्रति भागवत का आधा या चौथाई श्लोक भी पढ़ता है उसे राजसूय और अश्वमेध यज्ञों का फल मिलता है। नित्य भागवत का पाठ करना भगवान् का चिन्तन करना तुलसी को सींचना और गौ की सेवा करना — ये चारों समान हैं। जो पुरुष अन्त समय में श्रीमद्भागवत का वाक्य सुन लेता है उस पर प्रसन्न होकर भगवान् उसे वैकुण्ठधाम देते हैं। जो पुरुष इसे सोने के सिंहासन पर रखकर विष्णुभक्त को दान करता है वह अवश्य ही भगवान् का सायुज्य प्राप्त करता है। जिसने अपनी सारी आयु में चित्त को एकाग्र करके श्रीमद्भागवतामृत का थोड़ा—सा भी रसास्वादन नहीं किया उसने तो अपना सारा जन्म चाण्डाल और गधे के समान व्यर्थ ही गँवा दिया; वह तो अपनी माता को प्रसव पीड़ा पहुँचाने के लिये ही उत्पन्न संसार में श्रीमद्भागवत की कथा का मिलना अवश्य ही कठिन है; जब करोड़ों जन्मों का पुण्य होता है तभी इसकी प्राप्ति होती है। जो बुद्धिमान् और योगनिधि हैं उनको प्रयत्नपूर्वक कथा का श्रवण करना चाहिए। इसे सुनने के लिये दिनों का कोई नियम नहीं है, इसे तो सर्वदा ही सुनना अच्छा है।

इसे सत्य भाषण और ब्रह्मचर्य पालनपूर्वक सर्वदा ही सुनना श्रेष्ठ माना गया है। किन्तु कलियुग में ऐसा होना कठिन है; इसलिये इसकी शुकदेव जी ने जो विशेष विधि बतायी है वह जान लेनी चाहिये। कलियुग में बहुत दिनों तक चित्त की वृत्तियाँ को वश में रखना नियमों में बँधे रहना और किसी पुण्यकार्य के लिये दीक्षित रहना कठिन है; इसलिये सप्ताह श्रवण की विधि है। श्रद्धापूर्वक कभी भी श्रवण करने से अथवा माघमास में श्रवण करने से जो फल होता है, वही फल श्रीशुकदेवजी ने सप्ताह श्रवण में निर्धारित किया है। मनके असंयम रोगों की बहुलता और आयु की अल्पता के कारण तथा कलियुग में अनेकों दोषों की सम्भावना से ही सप्ताह श्रवण का विधान किया गया है। जो फल तपयोग और समाधि से भी प्राप्त नहीं हो सकता वह सर्वांग रूप में सप्ताह श्रवण से सहज में ही मिल जाता है। सप्ताह श्रवण यज्ञ से बढ़कर है, व्रत से बढ़कर है, तप से कहीं बढ़कर है। तीर्थसेवन से तो सदा ही बड़ा है व योग से

बढ़कर है। यहाँ तक कि ध्यान और ज्ञान से भी बढ़कर है इसकी विशेषता का कहाँ तक वर्णन करें यह तो सभी से बढ़-चढ़कर है।

श्रीमद्भागवत महापुराण में भारतीय ज्ञान परम्परा से सम्बन्धित अनेक विषयों पर प्रकाश डाला गया है। भगवान् कपिल माता देवहूति को सांख्य दर्शन के सिद्धान्तों का उपदेश दिया। जिसमें प्रकृतिपुरुष का स्वरूप 25 तत्त्वों का वर्णन पंचमहाभूत एकादश इन्द्रियाँ चार अन्तःकरण पंचतन्मात्राओं का वर्णन विस्तार से किया है।

इसके पश्चात् विराट् पुरुष की उत्पत्ति का वर्णन उस विराट् पुरुष से विभिन्न देवताओं की उत्पत्ति का भी वर्णन प्रस्तुत किया है। भक्तियोग एवं वैराग्य के द्वारा चित्त को वश में करना यमादि साधनों के द्वारा चित्त को एकाग्र करना इत्यादि विषयों पर सम्यक् प्रकाश डाला गया है।

अत एवं शनैश्चित्तं प्रसक्तमसतां पथि।

भक्तियोगेन तीव्रेण विरक्त्या च नये द्वशम्॥

भगवान् कपिल ने श्रीमद्भागवत महापुराण में अष्टांगयोग की विधि का भी वर्णन किया है। भारतीय ज्ञान परम्परा में अष्टांगयोग का महत्वपूर्ण योगदान है जिसके माध्यम से कैवल्य की प्राप्ति की जा सकती है।

श्रीध्रुव जी महाराज ने भगवद्भक्ति के द्वारा ज्ञान प्राप्त दिया और पृथ्वी पर 27 हजार वर्ष पर्यन्त कुशल शासन किया। अन्त में भगवद् धाम को चले गये। श्रीभागवत में महाराज पृथु के चरित्र का वर्णन है जो श्रीभगवान् के अवतार थे। उन्होंने पृथ्वी का दोहन किया और प्रजा का पुत्रवत् पालन दिया।

श्रीमद्भागवत महापुराण में शरीर की तुलना रथ से करते हुए कहा गया है कि शरीर ही रथ है। उसमें ज्ञानेन्द्रियरूप पाँच घोड़े जुते हुए हैं। देखने में संवत्सर रूप काल के समान ही उसका अप्रतिहत वेग है, वास्तव में वह गतिहीन है। पुण्य और पाप— ये दो प्रकार के कर्म ही उसके पहिये हैं, तीन गुण ध्वजा हैं, पाँच प्राण डोरियाँ हैं। मन बागडोर है बुद्धि सारथि है। हृदय बैठने का स्थान है सुख—दुःखादि द्वन्द्व जुए हैं इन्द्रियों के पाँच विषय उसमें रखे हुए आयुध हैं और त्वचा आदि सात धातुएँ उसके आवरण हैं। पाँच कर्मेन्द्रियाँ उसकी पाँच प्रकार की गति हैं। इस रथ पर चढ़कर रथीरूप यह जीव मृगतृष्णा के समान मिथ्या विषयों की ओर दौड़ता है। ग्यारह इन्द्रियाँ उसकी सेना हैं तथा पाँच ज्ञानेन्द्रियों के द्वारा उन—उन इन्द्रियों के विषयों को अन्यायपूर्वक ग्रहण करना ही उसका शिकार



खेलना है।

देहो रथस्त्विन्द्रियाश्वः संवत्सररयोऽगतिः ।

द्विकर्मचक्रस्त्रिगुणध्वजः पंचासुबन्धुरः ।।

मनोरश्मिर्बुद्धिसूतो हन्नीडो द्वन्द्वकूबरः ।

पंचेन्द्रियार्थप्रक्षेपः सप्तधातुवरूथकः ।।

आकृतिर्विक्रमो बाह्यो मृगतृष्णां प्रधावति ।

एकादशेन्द्रियचमूः पंचसूनाविनोदकृत् ।।

श्रीमद्भागवत महापुराण में कहा गया है कि श्रीभगवान का मनुष्यावतार केवल राक्षसों के वध के लिए नहीं है अपितु मुख्य उद्देश्य तो मनुष्यों को शिक्षा देना भी है।

श्रीमद्भागवत महापुराण में भारतवर्ष का महत्व —

श्रीमद्भागवत महापुराण में भारतवर्ष के महत्व पर भी प्रकाश डाला गया है। भारतवर्ष में भी भगवान् दयावश नर—नारायण रूप धारण करके संयमशील पुरुषों पर अनुग्रह करने के लिये अव्यक्त रूप से कल्प के अन्त तक तप करते रहते हैं। उनकी यह तपस्या ऐसी है कि जिससे धर्म ज्ञान वैराग्य ऐश्वर्य शान्ति और उपरति की उत्तरोत्तर वृद्धि होकर अन्त में आत्मस्वरूप की उपलब्धि हो सकती है। इस भारतवर्ष में भी बहुत—से पर्वत और मैनाकस्त्रिकूट नदियाँ हैं— जैसे मलय मंगलप्रस्थ मैनाक त्रिकूट, ऋषभकूट, ककोल्लक सह्य, देवगिरि ऋष्यमूक, श्रीशैल वेंकट, महेन्द्र वारिधार, विन्ध्य शुक्तिमान्, ऋक्षगिरि, पारियात्र द्रोण, चित्रकूट, गोवर्धन, रैवतक, ककुभ नील, गोकामुख इन्द्रकील और कामगिरि आदि। इसी प्रकार और भी सैकड़ों—हजारों पर्वत हैं। कामगिरि रिति उनके तट प्रान्तों से निकलने वाले नद और नदियाँ भी अगणित हैं।

ये नदियाँ अपने नामों से ही जीव को पवित्र कर देती हैं और भारतीय प्रजा इन्हीं के जल में स्नानादि करती हैं। उनमें से मुख्य—मुख्य नदियाँ ये हैं— चन्द्रवसा, चन्द्रवसा, ताम्रपर्णी, अवटोदा, कृतमाला, वैहायसी, वैहायसी कावेरी, कावेरी वेणी, पयस्विनी, शर्करावर्ता, तुंगभद्रा, कृष्णा, वेण्या भीमरथी, गोदावरी, निर्विन्ध्या पयोष्णी, तापी विन्ध्या, रेवा सुरसा, नर्मदा चर्मण्वती, सिन्धु, अन्ध और शोण नाम के नद, महानदी वेदस्मृति ऋषिकुल्या, त्रिसामावती, सिन्धुरन्धः, कौशिकी, मन्दाकिनी, यमुना, सरस्वती, दृषद्वती, गोमती स्मृति, ऋषिकुल्या, सरयू, रोधस्वती, सप्तवती, सुषोमा, शतद्रु चन्द्रभागा, मरुवृधा, वितस्ता, असिक्नी और विश्वा। इस स्वती सप्तवती वर्ष में जन्म लेने वाले पुरुषों को ही अपने किये हुए सात्त्विक, राजस और तामस कर्मों के अनुसार क्रमशः नाना प्रकार की दिव्य मानुष और नारकी

योनियाँ प्राप्त होती हैं; क्योंकि कर्मानुसार सब जीवों को सभी योनियाँ प्राप्त हो सकती हैं। इसी वर्ष में अपने—अपने वर्ण के लिये नियत किये हुए धर्मों का विधिवत् अनुष्ठान करने से मोक्ष तक की प्राप्ति हो सकती है। सम्पूर्ण भूतों के आत्मागादि दोषों से रहित अनिर्वचनीय निराधार परमात्मा भगवान् वासुदेव में अनन्य एवं अहैतुक भक्तिभाव ही यह मोक्षपद है। यह भक्तिभाव तभी प्राप्त होता है जब अनेक प्रकार की गतियों को प्रकट करने वाली अविद्या रूप हृदय की ग्रन्थि कट जाने पर प्रेमी भक्तों का संग मिलता है।

डॉ. शिवबालक द्विवेदी कहते हैं कि देवता भी भारतवर्ष में उत्पन्न हुए मनुष्य की इस प्रकार महिमा गाते हैं— अहा ! भारतवर्ष में भगवान् की सेवा के योग्य मनुष्य जन्म प्राप्त किया है उन्होंने ऐसा क्या पुण्य किया है? अथवा इन पर स्वयं श्रीहरि ही प्रसन्न हो गये हैं? इस परम सौभाग्य के लिये तो निरन्तर हम भी तरसते रहते हैं। जहाँ भगवत्कथा की अमृतमयी सरिता नहीं बहती जहाँ उसके उद्गम स्थान भगवद्भक्त साधु जन निवास नहीं करते और जहाँ नृत्य—गीतादि के साथ बड़े समारोह से भगवान् यज्ञपुरुष की पूजा—अर्चन नहीं की जाती— वह चाहे ब्रह्मलोक ही क्यों न हो उसका सेवन नहीं करना चाहिये। जिन जीवों ने इस भारतवर्ष में ज्ञान (विवेकबुद्धि) तदनुकूल कर्म तथा उस कर्मके उपयोगी द्रव्यादि सामग्री से सम्पन्न मनुष्य जन्म पाया है वे यदि आवागमन के चक्र से निकलने का प्रयत्न नहीं करते तो व्याध की फाँसी से छूटकर भी फलादि के लोभ से उसी वृक्ष पर विहार करने वाले वनवासी पक्षियों के समान फिर इन भारतवासियों का कैसा सौभाग्य है! जब ये यज्ञ में भिन्न—भिन्न देवताओं के उद्देश्य से अलग—अलग भाग रखकर विधिमन्त्र और द्रव्यादि के योग से श्रद्धापूर्वक उन्हें हवि प्रदान करते हैं, तब इस प्रकार इन्द्रादि भिन्न—भिन्न नामों से पुकारे जाने पर सम्पूर्ण कामनाओं के पूर्ण करने वाले स्वयं पूर्णकाम श्रीहरि ही प्रसन्न होकर उस हवि को ग्रहण करते हैं। यह ठीक है कि भगवान् सकाम पुरुषों के माँगने पर उन्हें अभीष्ट पदार्थ देते हैं किन्तु यह भगवान् का वास्तविक दान नहीं है; क्योंकि उन वस्तुओं को पा लेने पर भी मनुष्य के मनमें पुनः कामनाएँ होती ही रहती हैं। इसके विपरीत जो उनका निष्कामभाव से भजन करते हैं, उन्हें तो वे साक्षात् अपने चरणकमल ही दे देते हैं— जो अन्य समस्त इच्छाओं को समाप्त कर देने वाले हैं। अतः अब तक स्वर्गसुख भोग लेने



के बाद हमारे पूर्वकृत यज्ञ, प्रवचन और शुभ कर्मों से यदि कुछ पुण्य बचा हो तो उसके प्रभाव से हमें इस भारतवर्ष में भगवान् की स्मृति से युक्त मनुष्य जन्म मिले; क्योंकि श्री हरि अपना भजन करने वाले का सब प्रकार से कल्याण करते हैं।

निष्कर्ष —

भारतीय ज्ञान परम्परा में श्रीमद्भागवत महापुराण का विशिष्ट योगदान है। श्रीमद्भागवत महापुराण में भारतीय ज्ञान परम्परा से सम्बन्धित अनेक विषयों पर प्रकाश डाला गया है। श्रीमद्भागवत महापुराण की लोकप्रियता सर्वाधिक है। भारतीय विद्वान श्रीमद्भागवत महापुराण का विशेष रूप से अध्ययन करते हैं। जिसमें सृष्टि प्रक्रिया का वर्णन ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति भारतीय संस्कृति और सभ्यता का वर्णन किया गया है। श्रीमद्भागवत महापुराण के अध्ययन से समस्त भारतीय संस्कृति का दर्शन किया जा सकता है। भारतीय विद्वानों के अनुसार श्रीमद्भागवत महापुराण में सम्पूर्ण वैदिक वाङ्मय के तत्व निहित हैं।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

- 1 — भारतीय दर्शन — डॉ. शिवबालक द्विवेदी, ग्रन्थम, कानपुर नगर।
- 2 — भारतीय दर्शन का इतिहास — डॉ. हरिदत्त शास्त्री।
- 3 — भारतीय दर्शन — आचार्य बलदेव उपाध्याय, शारदा मन्दिर, वाराणसी।
- 4 — भारतीयदर्शन — डॉ. राधाकृष्ण राजपाल एण्ड सन्स, दिल्ली।
- 5 — भारतीय दर्शन — डॉ. वाचस्पति गैरोला।
- 6 — भारतीय दर्शन — डॉ. उमेश मिश्र, हिन्दी संस्थान, लखनऊ।
- 7 — सांख्यकारिका — डॉ. रमाशंकर त्रिपाठी, हिन्दी टीका, वाराणसी 1970।
- 8 — सांख्यकारिका — डॉ. सन्त नारायण श्रीवास्तव, चौखम्बा, सुर भारती प्रकाशन।
- 9 — सर्वदर्शन संग्रह — प्रो. उमाशंकर ऋषि, चौखम्बा, विद्या भवन वाराणसी, 1878।
- 10 — महाभारत — सम्पूर्ण, गीताप्रेस, गोरखपुर।
- 11 — कठोपनिषद् — शांकरभाष्य, गीताप्रेस, गोरखपुर।
- 12 — पुराण विमर्श — आचार्य बलदेव उपाध्याय।
- 13 — सांख्य सिस्टम — ए.बी. कीथ।
- 14 — सांख्यसूत्र — रामशंकर भट्टाचार्य भारतीय, विद्या प्रकाशन, वाराणसी।
- 15 — दर्शन संग्रह — प्रो. दीवानचन्द, सूचना विभाग, उत्तर प्रदेश 1958।
- 16 — युक्ति दीपिका — डॉ. केदारनाथ त्रिपाठी, सं. संस्कृत विश्वविद्यालय, वाराणसी 1996।
- 17 — धर्मशास्त्र का इतिहास — डॉ. पी. वी. काणे, उत्तर प्रदेश हिन्दी

संस्थान, लखनऊ — 1992।

- 18 — ऋग्वेद — सायण भाष्य सहित, वैदिक संशोधन मण्डल, पूना 1972।
- 19 — कठोपनिषद् — शांकरभाष्य, गीताप्रेस, गोरखपुर।
- 20 — फिलोसफी ऑफ दौ उपनिषदाज्ञ — डॉ. कीथ।
- 21 — ब्रह्मसूत्र शांकरभाष्य — गीताप्रेस, गोरखपुर।
- 22 — पुराण विमर्श — आचार्य बलदेव उपाध्याय।
- 23 — जर्नल ऑफ रायल एसियाटिक सोसायटी।
- 24 — हिस्ट्री ऑफ इण्डियन फिलोसफी — डॉ. दासगुप्त।
- 25 — भाण्डार कॉमेमोरेशन वोल्यूम।
- 26 — श्रीमद्भागवत महापुराण, गीता प्रेस, गोरखपुर।



श्रीमद्भगवद् गीता का मोक्ष योग



— प्रो. (डॉ.) बिन्दु सिंह
विभागाध्यक्ष — संस्कृत विभाग,
के. के. महाविद्यालय,
इटावा-206001 (उत्तर प्रदेश)

ई. मेल—
profbindusingh@gmail.com

सारांश

श्रीमद्भगवद्गीता में मोक्षयोग का सम्यक् वर्णन होता है। मोक्ष का तात्पर्य है कि मनुष्य आवागमन अर्थात् जन्म-मृत्यु से छुटकारा पा जाय। शीत-उष्ण, सुख-दुःख देने वाले इन्द्रिय और विषयों के संयोग तो उत्पत्ति, विनाशशील और अनित्य हैं, इसलिये मनुष्य को उन्हें सहन करना चाहिए। सुख-दुःख को समान समझने वाले जिस धीर पुरुष को ये इन्द्रिय और विषयों के संयोग व्याकुल नहीं करते, वह मनुष्य मोक्ष के योग्य होता है। समबुद्धि पुरुष पाप और पुण्य दोनों को इसी लोक में त्याग देता है, अर्थात् वह उनसे मुक्त हो जाता है। गीता में भगवान् कहते हैं, जो मुझको भजेगा वह मुझको ही प्राप्त होगा अर्थात् उसको मोक्ष की प्राप्ति होगी। वस्तुतः मोक्ष एक अनुभूति है जिस अवस्था में आत्मा अपने स्वरूप को पहचान लेती है तथा उसे अपने सत्चित्त आनन्दमय स्वरूप का ज्ञान हो जाता है, वही अवस्था मोक्ष कहलाती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि गीता में मोक्षयोग का सम्यक् निरूपण हुआ है।

भारतीय दर्शन में मोक्ष का विशेष महत्त्व दिया गया है। वस्तुतः दर्शन जगत् का अन्तिम लक्ष्य है क्लेशों से निवृत्ति। इस निवृत्ति का दार्शनिक सम्बोधन मोक्ष है। सांख्यदर्शन का अभिमत है कि अज्ञान या अविद्या के द्वारा बन्धन की प्राप्ति होती है और जब तत्त्व ज्ञान हो जाता है तो अज्ञान अविद्या नष्ट हो जाती है और मोक्ष की प्राप्ति हो जाती है। श्रीमद्भगवद्गीता में इस प्रकार कहा गया है —

“देहिनोऽस्मिन्यथा देहे कौमारं यौवनं जरा।

तथा देहान्तरप्राप्तिर्धीरस्तत्र न मुह्यति।।”

किन्तु जैसे जीवात्मा की इस देह में कुमार, युवा और वृद्धावस्था होती है वैसे ही अन्य शरीर की प्राप्ति होती है, इस विषय में धीर मोहित नहीं होता है। विद्वानों ने बन्धन को तीन प्रकार का बताया है —

- (1) प्राकृतिक बन्ध,
- (2) विकासात्मक बन्ध और
- (3) व्यक्तिगत बन्ध।

प्रकृति को परमतत्त्व समझकर जो इसकी उपासना में लगे रहते हैं उन्हें प्राकृतिक बन्धन प्राप्त होता है। इसके विपरीत जो इन्द्रियों, मन आदि प्रकृति के विकारों में लीन रहते हैं, उन्हें विकासात्मक बन्धन प्राप्त होता है। अन्त में जो आत्म चिन्तन को छोड़कर ईश्वर की सत्ता में विश्वास करते हैं उन्हें व्यक्तिगत बन्धन प्राप्त होता है —

“एकया च दशभिश्च सुहुते द्वाभ्यामिष्ये विंशत्या च।



तिसृमिश्च वहसे त्रिंशता च वियुग्यिनर्वाय इस ता विमुच्ये ।।”

अतः यह स्पष्ट है कि सभी बन्ध अज्ञान और अविद्या से उत्पन्न होते हैं, और मोक्ष प्राप्त करने हेतु इसी अविद्या का विनाश करना पड़ता है। मोक्ष प्राप्ति हेतु ब्रह्मज्ञान नितान्त आवश्यक है। अतः यह स्पष्ट ही है कि जब सम्पूर्ण कामनाएँ जो कि हृदय में आश्रय करके रहती हैं, छूट जाती हैं, उस समय वह मर्त्य अमर हो जाता है और इस शरीर से ही ब्रह्म भाव को प्राप्त हो जाता है अर्थात् मोक्षगामी हो जाती है। जीव और ब्रह्म का एकीकरण ही मुक्ति है। ऐसी स्थिति में मिथ्या संसार का विनाश हो जाता है और प्राणी सभी बन्धनों से मुक्त हो जाता है, यही मोक्ष है।

पातंजल योगदर्शन के अनुसार मोक्ष की शास्त्रीय संज्ञा कैवल्य है। वस्तु के स्वरूप को केवल कहते हैं, केवल का भाव कैवल्य है। मोक्षावस्था में जीवात्मा अपने स्वयं के स्वरूप में स्थित हो जाती है और इसी स्वरूप को कैवल्य की संज्ञा दी गई है —

“तदा द्रष्टुः स्वरूपेऽवस्थानम् ।।”

आचार्य शंकर के अनुसार मोक्ष की प्राप्ति नहीं होती, केवल बन्धन के भ्रम का विनाश मात्र हो जाता है। जीव ब्रह्म स्वरूप है परन्तु जीव को माया के प्रभाव के कारण यह भ्रम हो गया है कि वह बद्ध है। इस भ्रम का निवारण तत्त्व ज्ञान से होता है। यह ज्ञान गुरु के द्वारा तत्त्वमसि इत्यादि वाक्यों द्वारा होता है। यह ज्ञान गुरु के द्वारा तत्त्वमसि इत्यादि वाक्यों द्वारा होता है। श्रवण, मनन एवं निदिध्यासन उस ज्ञान के सहकारी कारण हैं —

“आत्मा वा अरे द्रष्टव्यः श्रोतव्यो मन्तव्यो निदिध्यासितव्यः ।।”

भारतीय दर्शन किंवा गीतादर्शन के सभी सम्प्रदायों के मत उपनिषदों में निहित हैं। अतः यह स्वाभाविक ही है कि सभी दार्शनिक सम्प्रदायों के मोक्ष सम्प्रत्ययन अपने बीज रूप में उपनिषदों में विधान हो। उपनिषदों में हमें वैष्णव वेदान्तियों का विदेह मुक्ति का सिद्धान्त तथा शङ्कर वेदान्त का जीवन मुक्ति सिद्धान्त दोनों ही प्राप्त होते हैं। पहले सिद्धान्त के अनुसार मोक्ष केवल मृत्यु के पश्चात् ही प्राप्त हो सकता है। दूसरे सिद्धान्त के अनुसार मोक्ष यहाँ और इसी जीवन में प्राप्त हो सकता है। मोक्ष ब्रह्म के ज्ञान में निहित है और ऐसा ज्ञान इस शरीर के रहते हुए भी प्राप्त हो सकता है। ब्रह्मज्ञान में और शरीर में कोई

विरोध नहीं है। मुण्डकोपनिषद् में भी कहा है कि जिसने ब्रह्म का साक्षात्कार कर लिया है उसकी हृदय ग्रन्थि टूट जाती है, सारे संशय नष्ट हो जाते हैं और उसके कर्मों का क्षय हो जाता है। इसी उपनिषद् में आगे चलकर कहा गया है कि जो ब्रह्म को जान लेता है, वह स्वयं ब्रह्म हो जाता है। वह शोक से तर जाता है, पाप को पार कर लेता है और हृदय ग्रन्थि से विमुक्त होकर अमरत्व प्राप्त कर लेता है —

“ब्रह्मविद् ब्रह्मैव भवति ।।”

उपनिषदों में मोक्ष दुःखाभाव रूप ही नहीं अपितु आनन्द रूप भी है। “अत्र ब्रह्म समश्नुते ।।” “आनन्दो ब्रह्मणो विद्वान् न बिभेति कुतश्चन ।।” “रस ह्येवायं लब्ध्वा आनन्दोभवति ।।” इत्यादि उपनिषदों का यही तात्पर्य है केवल ब्रह्मलोक में वास मोक्ष नहीं है। आचार्य वल्लभ माया से रहित शुद्ध ब्रह्म के सिद्धान्त का प्रतिपादन करते हैं। धार्मिक दृष्टिकोण से इसको पृष्टिमार्ग कहते हैं। पृष्टि का अर्थ दिव्य कृपा या ईश्वर कृपा होता है। इस अर्थ में पृष्टिमार्ग का अर्थ वह माग है, जिसकी यह धारणा है कि सर्वश्रेष्ठ मोक्ष ईश्वरीय कृपा से ही प्राप्त हो सकता है। पृष्टिमार्गी कहते हैं कि मोक्ष प्राप्त करने के लिए दिव्य कृपा का मार्ग ही सर्वथा सुरक्षित है। जो ईश्वरीय कृपा से प्रसाद के रूप में मोक्ष प्रदान किया जाता है, वह जीवों के लिए वेदों द्वारा बताये गये मार्ग पर चलकर स्वयं के प्रयत्नों से प्राप्त मोक्ष से कहीं अधिक श्रेष्ठ है।

वल्लभाचार्य मोक्ष प्राप्ति के साधनों के रूप में निष्काम कर्म ज्ञान और पातञ्जल योग का मूल्य स्वीकार करते हैं। उनका यह निश्चित मत है कि ईश्वर की भक्ति और उसके प्रति आत्म समर्पण ही मोक्ष प्राप्त करने के सर्वाधिक सुरक्षित साधन हैं। अपने निबन्ध में वल्लभाचार्य ब्रह्म ज्ञान और मोक्ष प्राप्त करने के लिए वैराग्य, सांख्य, योग, तप और भक्ति आदि साधनों का विवरण देते हैं।

“माहात्म्यज्ञानपूर्वस्तु सुदृढः सर्वतोधिकः ।

स्नेहो भक्तिरिति ख्याता तथा मुक्तिर्न चान्यथा ।।”

स्वामी दयानन्द ने मुक्ति की परिभाषा अपने ढंग से ही की है। वे दुःखों से मुक्त होने को ही मुक्ति मानते हैं। मुक्ति को एक सीमित काल तक ही मानते हैं। मुक्ति को एक सीमित काल तक ही मानते हैं, अनन्तकाल तक नहीं। उनका कथन है कि अल्पज्ञ और अल्पशक्तियुक्त जीवात्मा की इतनी सामर्थ्य नहीं हो सकती कि वह त्रिविध दुःखों से शाश्वत मुक्ति प्राप्त कर सके।

इस प्रकार हम देखते हैं कि भारतीय दर्शन में मोक्ष



योग को अत्यधिक महत्वपूर्ण स्थान दिया गया है।

श्रीमद्भगवद्गीता में मोक्षयोग का सम्यक् वर्णन होता है। मोक्ष का तात्पर्य है कि मनुष्य आवागमन अर्थात् जन्म-मृत्यु से छुटकारा पा जाय। शीत-उष्ण, सुख-दुःख देने वाले इन्द्रिय और विषयों के संयोग तो उत्पत्ति, विनाशशील और अनित्य हैं, इसलिये मनुष्य को उन्हें सहन करना चाहिए। सुख-दुःख को समान समझने वाले जिस धीर पुरुष को ये इन्द्रिय और विषयों के संयोग व्याकुल नहीं करते, वह मनुष्य मोक्ष के योग्य होता है। समबुद्धि पुरुष पाप और पुण्य दोनों को इसी लोक में त्याग देता है, अर्थात् वह उनसे मुक्त हो जाता है। गीता में कहा गया है –

“कर्मजं बुद्धियुक्ता हि फलं त्यक्त्वा मनीषिणः।

जन्मबन्धविनिर्मुक्ताः पदं गच्छन्त्यनामयम्।।”

अर्थात् समबुद्धि से युक्त ज्ञानीजन कर्मों से उत्पन्न होने वाले फल को त्यागकर जन्मरूप बन्धन से मुक्त होकर निर्विकार परमपद को प्राप्त हो जाते हैं। इसके बाद भगवान् श्रीकृष्ण कर्मसंन्यास और कर्मयोग के विषय में बताते हैं – कर्म संन्यास और कर्मयोग ये दोनों ही परम कल्याण करने वाले हैं परन्तु उन दोनों में भी कर्म संन्यास से कर्मयोग साधन में सुगम होने से श्रेष्ठ है। जो पुरुष न किसी से द्वेष करता है और न किसी से आकाँक्षा करता है वह कर्म योगी सदा संन्यासी ही समझने योग्य है, क्योंकि राग-द्वेषादि द्वन्द्वों से रहित पुरुष सुखपूर्वक संसार के बन्धन से मुक्त हो जाता है।

गीता में कहा गया है –

“तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः।

गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिधूर्तकल्मशाः।।”

जिनका मन तद्रूप हो रहा है, जिनकी बुद्धि तद्रूप हो रही है और सच्चिदानन्द घन परमात्मा में ही जिनकी निरन्तर एकीभाव से स्थिति है ऐसे तत्परायण पुरुष के द्वारा पापरहित होकर अपुनरावृत्ति को अर्थात् परमगति को प्राप्त होते हैं। जो काम, क्रोध से रहित है जीते हुए चित्त वाले परमब्रह्म परमात्मा का साक्षात्कार किये हुए ज्ञानी पुरुषों के लिये सब ओर से शान्त परब्रह्म परमात्मा ही परिपूर्ण है। बाहर के विशय भोगों का न चिन्तन करता हुआ उनको बाहर ही निकालकर और नेत्रों की दृष्टि को भृकुटि के बीच में स्थित करके तथा नासिका में विचरने वाले प्राण और अपानवायु को सम करके जिसकी इन्द्रियाँ मन, बुद्धि जीती हुई हैं। ऐसा जो मोक्ष परायण मुनि इच्छा, भय, क्रोध से रहित हो गया है वह सदा ही मुक्त है अर्थात् वह जन्म-मृत्यु

से परे है वश में किये हुये मन वाला योगी इस प्रकार आत्मा को निरन्तर मुझ परमेश्वर के स्वरूप में लगाता हुआ मुझमें रहने वाली परमानन्द पराकाष्ठा रूप शान्ति को प्राप्त होता है। प्रयत्नपूर्वक अभ्यास करने वाला योगी तो पिछले अनेक जन्मों के संस्कार बल से इसी जन्म में संसिद्ध होकर सम्पूर्ण पापों से रहित होकर फिर तत्काल ही परम गति को प्राप्त हो जाता है। गीता में भगवान् माया के विषय में बताते हैं –

“दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।

ममेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते।।”

यह अलौकिक अर्थात् अति अद्भुत त्रिगुणमयी मेरी माया बड़ी ही दुस्तर है, परन्तु जो पुरुष केवल मुझको ही निरन्तर भजते हैं वे इस माया का अतिक्रमण कर जाते हैं, अर्थात्, संसार से तर जाते हैं। जो मेरी शरण में होकर जरा-मरण से छूटने के लिये यत्न करते हैं वे पुरुष उस ब्रह्म को, सम्पूर्ण अध्यात्म को और सम्पूर्ण कर्म को जानते हैं जो पुरुष अधिभूत और अधिदेव के सहित तथा अधियज्ञ के सहित (सबका आत्मरूप) मुझे अन्तकाल में भी जानते हैं, वे युक्तचित्त वाले पुरुष मुझे जानते हैं अर्थात् मुझे ही प्राप्त होते हैं। जो पुरुष अन्तकाल में भी मुझको स्मरण करता हुआ शरीर त्याग कर जाता है, वह पुरुष साक्षात् मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है, इसमें कुछ भी संशय नहीं है। वेद के जानने वाले विद्वान् जिस सच्चिदानन्द घनस्वरूप परमपद को अविनाशी कहते हैं, आसक्ति रहित यत्नशील संन्यासी महात्मा जन जिसमें प्रवेश करते हैं और जिस परमपद को चाहने वाले ब्रह्मचारी लोग ब्रह्मचर्य का आचरण करते हैं, उस परमपद को संक्षेप में कहता हूँ –

“सर्वद्वाराणि संयम्य मनो हृदि निरुध्य च।

मूर्धन्याध्यात्मानः प्राणमास्थितो योगधारणाम्।।

ओमित्येकाक्षरं ब्रह्म व्याहरन्मामनुस्मरन्।

यः प्रयाति त्यजन्देहं स याति परमां गतिम्।।”

अर्थात् इस इन्द्रियों के द्वारों को रोककर तथा मन को हृदयदेश में स्थिर करके, फिर उस जीते हुये मन मे द्वारा प्राण को मस्तक में स्थापित करके, परमात्म सम्बन्धी योग धारणा में स्थित होकर जो पुरुष (जुँ) इस एक अक्षर रूप ब्रह्म का उच्चारण करता हुआ और उसके अर्थस्वरूप मुझ निर्गुण ब्रह्म का चिन्तन करता हुआ शरीर को त्याग कर जाता है, वह पुरुष परमगति को प्राप्त होता है। जो पुरुष मुझमें अनन्यचित्त होकर सदा ही निरन्तर मुझ पुरुषोत्तम को स्मरण करता है, उस नित्य निरन्तर मुझमें



युक्त हुये योगी के लिये मैं सुलभ हूँ, अर्थात् मुझे सहज ही प्राप्त होकर दुःखों के घर एवं क्षणभङ्गुर पुनर्जन्म को नहीं प्राप्त होते।

भगवान् कहते हैं — ब्रह्मलोकपर्यन्त सब लोक पुनरावर्ती हैं। परन्तु मुझको प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता, क्योंकि मैं कालातीत हूँ, और ये सब ब्रह्मादि के लोक काल के द्वारा सीमित होने से अनित्य हैं। जो अव्यक्त “अक्षर” इस नाम से कहा गया है, उसी अक्षर नामक अव्यक्त भाव को परमगति कहते हैं, तथा जिस सनातन अव्यक्त भाव को प्राप्त होकर मनुष्य वापस नहीं आते, वह मेरा परम धाम है। जगत् में ये दो प्रकार के मार्ग हैं — शुक्ल और कृष्ण अर्थात् देवयान और पितृयान। ये मार्ग सनातन माने गये हैं, इनमें से एक के द्वारा गया हुआ, जिसमें वापस नहीं लौटना पड़ता, उस परम गति को प्राप्त होता है, और दूसरे के द्वारा हुआ फिर वापस आता है अर्थात् जन्म-मृत्यु को प्राप्त होता है। योगी पुरुष इस रहस्य को तत्त्व से जानकर वेदों के पढ़ने में तथा, यज्ञ, तप, दान आदि के करने में जो पुण्य फल कहा है, उन सबका अतिक्रमण कर जाता है और सनातन परमपद को प्राप्त होता है। भगवान् कहते हैं जो जिसको पूजता है वह उसी को प्राप्त होता है —

“यान्ति देवव्रता देवान्पितृन्यान्ति पितृव्रताः।

भूतानि यान्ति भूतेज्या यान्ति मद्याजिनोऽपि माम्।।”

अर्थात् जो देवताओं को पूजते हैं वे देवताओं को प्राप्त होते हैं, पितरों को पूजने वाले पितरों को प्राप्त होते हैं। भूतों को पूजने वाले भूतों को प्राप्त होते हैं और मेरा पूजन करने वाले भक्त मुझको ही प्राप्त होते हैं। इसलिये मेरे भक्तों का पुनर्जन्म नहीं होता। भगवान् कहते ही हैं — स्त्री, पुरुष, शूद्र तथा पापयोनि चाण्डालादि कोई भी हों, वे भी मेरे शरण होकर परमगति को ही प्राप्त होते हैं, फिर इसमें तो कहना ही क्या है, जो पुण्यशील ब्राह्मण तथा राजर्षि भक्तजन मेरी शरण होकर परमगति को प्राप्त होते हैं। इसलिये तू सुखरहित और क्षणभङ्गुर इस मनुष्य शरीर को प्राप्त होकर निरन्तर मेरा ही भजन कर। तू मुझमें मन वाला हो, मेरा भक्त बन, मेरा पूजन करने वाला हो, मुझको प्रणाम कर, इस प्रकार आत्मा को मुझमें नियुक्त करके मेरे परायण होकर तू मुझको ही प्राप्त होगा। निरन्तर मेरे ध्यान आदि में लगे हुए और प्रेमपूर्वक भजने वाले भक्तों को मैं वह तत्त्व ज्ञान रूप योग देता हूँ, जिससे वे मुझको ही प्राप्त होंगे। जो पुरुष केवल मेरे ही सम्पूर्ण कर्तव्य कर्मों को करने वाला है, वह मेरे परायण है, मेरा भक्त है, आसक्ति रहित है

और सम्पूर्ण भूत प्राणियों में वैरभाव से रहित है, वह अनन्य भक्ति युक्त पुरुष मुझको ही प्राप्त होता है। मुझमें चित्त लगाने वाले प्रेमी भक्तों को मैं शीघ्र ही मृत्युरूप संसार समुद्र से उद्धार करने वाला होता हूँ। जो पुरुष सबमें समभाव से स्थित परमेश्वर को समान देखता हुआ अपने द्वारा अपने को नष्ट नहीं करता, इससे वह परम गति को प्राप्त होता है।

भगवान् कहते हैं— जिस क्षण पुरुष भूतों के पृथक्-पृथक् भाव को एक परमात्मा में ही स्थित तथा उस परमात्मा से ही सम्पूर्ण भूतों का विस्तार देखता है उसी क्षण वह सच्चिदानन्दघन ब्रह्म को प्राप्त हो जाता है। जिस समय द्रष्टा तीनों गुणों के अतिरिक्त अन्य किसी को कर्त्ता नहीं देखता और तीनों गुणों से अत्यन्त परे सच्चिदानन्द घन स्वरूप मुझ परमात्मा को तत्त्व से जानता है, वह उस समय मेरे स्वरूप को प्राप्त होता है। यह पुरुष शरीर की (बुद्धि, अहंकार और मन, तथा पाँच ज्ञानेन्द्रियाँ, पाँच कर्मेन्द्रियाँ, पाँच भूत, पाँच इन्द्रियों के विषय—इस प्रकार इन तेईस तत्त्वों का पिण्ड रूप यह स्थूल शरीर प्रकृति से उत्पन्न होने वाले गुणों का ही कार्य है, इसलिये इन तीनों को उसकी उत्पत्ति का कारण कहा है) उत्पत्ति के कारण रूप इन तीनों गुणों का अतिक्रमण करके जन्म, मृत्यु, वृद्धावस्था और सब प्रकार के दुःखों से मुक्त हुआ परमानन्द को प्राप्त होता है।

गीता में भगवान् कहते हैं कि जिनका मान और मोह नष्ट हो गया है, जिन्होंने आसक्तिरूप दोष जीत लिया है। जिनकी परमात्मा के स्वरूप में नित्य स्थिति है और जिनकी कामनाएँ पूर्णरूप से नष्ट हो गई हैं, वे सुख दुःख नामक द्वन्द्वों से विमुक्त ज्ञानीजन उस अविनाशी परमपद को प्राप्त होते हैं, जिस परमपद को प्राप्त होकर मनुष्य लौट कर संसार में नहीं आते। उस स्वयं प्रकाशरूप परमपद को न सूर्य प्रकाशित कर सकता है न चन्द्रमा और न अग्नि ही, वही मेरा परमधाम है। श्रीमद्भगवद्गीता में भगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन! मैं द्वेष करने वाले पापाचारी और क्रूरकर्मी नराधमों को संसार में बार-बार आसुरी योनियों में ही डालता हूँ। वे मूढ़ मुझको न प्राप्त होकर जन्म-जन्म में आसुरी योनियों को प्राप्त होते हैं और फिर उनसे भी नीच गति को प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरक में पड़ते हैं।

काम, क्रोध तथा लोभ ये तीन प्रकार के नरक के द्वारा आत्मा का नाश करने वाले अर्थात् उसको अधोगति में ले जाने वाले हैं। अतएव इन तीनों को त्याग देना चाहिये।



भगवान् श्रीकृष्ण कहते हैं —

“एतैर्विमुक्तः कौन्तेय तमोद्वारैस्त्रिभिर्नरः ।

आचरत्यात्मनः श्रेयस्ततो याति परां गतिम् ।।”

हे अर्जुन! इन तीनों नरक के द्वारों से मुक्त पुरुष अपने कल्याण का आचरण करता है (अपने उद्धार के लिये भगवदज्ञानुसार बरतना ही अपने कल्याण का आचरण करना है।) इससे वह परमगति को प्राप्त जाता है अर्थात् मुझको प्राप्त हो जाता है।

गीता में भगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन! तू सब प्रकार से उस परमेश्वर की ही शरण में जा, उस परमात्मा की ही कृपा से तू परम शान्ति को तथा सनातन परमधाम को प्राप्त होगा। भगवान् कहते हैं — जो पुरुष मुझमें परम प्रेम करके इस परम रहस्ययुक्त गीताशास्त्र को मेरे भक्तों से कहेगा, वह मुझको ही प्राप्त होगा इसमें कोई सन्देह नहीं है।

गीता में भगवान् कहते हैं, जो मुझको भजेगा वह मुझको ही प्राप्त होगा अर्थात् उसको मोक्ष की प्राप्ति होगी। वस्तुतः मोक्ष एक अनुभूति है जिस अवस्था में आत्मा अपने स्वरूप को पहचान लेती है तथा उसे अपने सत्चित्त आनन्दमय स्वरूप का ज्ञान हो जाता है, वही अवस्था मोक्ष कहलाती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि गीता में मोक्षयोग का सम्यक् निरूपण हुआ है।

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. श्रीमद्भगवद्गीता — 2/13
2. अथर्ववेद — 7/4/1

3. कठोपनिषद् — 2/3/14, 25
4. योगसूत्र — 1/3
5. बृहदारण्यकोपनिषद् — 4/5/6
6. मुण्डकोपनिषद् — 3/2/9
7. कठोपनिषद् — 2/3/14
8. कठोपनिषद् — 2/3/15
9. कठोपनिषद् — 2/3/16
10. भारतीय दर्शन में मोक्ष चिन्तन एक तुलनात्मक अध्ययन — डॉ. अशोक कुमार लाड, पृष्ठ संख्या—90।
11. निबन्ध — (आचार्य वल्लभाचार्य) औपनिषदिक अध्यात्म विज्ञान — डॉ. ईश्वर भारद्वाज, पृष्ठ संख्या—115।
12. श्रीमद्भगवद्गीता — 2/51
13. श्रीमद्भगवद्गीता — 5/17
14. श्रीमद्भगवद्गीता — 7/14
15. श्रीमद्भगवद्गीता — 8/12—13
16. श्रीमद्भगवद्गीता — 9/25
17. श्रीमद्भगवद्गीता — 16/22



शोध लेख प्रकीर्णन एवं निवेदन

विज्ञापन के संदर्भ में जानकारी प्राप्त करने हेतु प्रबन्ध सम्पादक के पते पर सम्पर्क करें। ? ‘अभिनव गवेषणा’ एक स्ववित्त पोषित पत्रिका है, अतः किसी भी प्रकार का आर्थिक सहयोग सराहनीय होगा। कृपया अपनी सहयोग राशि चेक अथवा ड्राफ्ट के माध्यम से निम्नलिखित पते पर प्रेषित करें—

प्रबन्ध सम्पादक- ‘अभिनव गवेषणा’

के-444, ‘शिवराम कृपा’ विश्व बैंक बर्रा-कानपुर-208 027 (उत्तर प्रदेश)

श्रीमद्भगवद्गीता का जीवन दर्शन



— प्रो. अर्चना श्रीवास्तव
विभागाध्यक्ष — संस्कृत विभाग,
महिला महाविद्यालय, किदवई
नगर, कानपुर-208011 (उत्तर
प्रदेश)

ई. मेल—

archanaa.mmv@gmail.com

सारांश

श्रीमद्भगवद्गीता, महाभारत के भीष्म पर्व का एक अभिन्न अंग, केवल एक धार्मिक ग्रंथ नहीं, अपितु मानव अस्तित्व के गूढ़ प्रश्नों का उत्तर देने वाला एक सार्वभौमिक जीवन दर्शन है। कुरुक्षेत्र के युद्धभूमि में भगवान श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन को दिया गया यह उपदेश, कर्तव्य, नैतिकता, आत्मा-परमात्मा, सम्बन्ध और मोक्ष के मार्ग का विस्तृत वर्णन करता है। यह शोध पत्र गीता के केन्द्रीय सिद्धान्तों — कर्मयोग, ज्ञानयोग, भक्तियोग, और ध्यानयोग का विस्तृत विश्लेषण प्रस्तुत करता है, उनकी आधुनिक जीवन में प्रासंगिकता पर प्रकाश डालता है और इसके व्यावहारिक अनुप्रयोगों को दर्शाता है। इसका उद्देश्य गीता के शाश्वत संदेश को एक अकादमिक और व्यावहारिक परिप्रेक्ष्य से प्रस्तुत करना है, जो इसके दार्शनिक मूल्य और समकालीन चुनौतियों के समाधान में इसकी क्षमता को उजागर करता है।

श्रीमद्भगवद्गीता, भारतीय दर्शन और आध्यात्मिकता का एक अमूल्य रत्न है। इस ग्रन्थ में पाण्डव राजकुमार अर्जुन और उनके सारथी भगवान श्रीकृष्ण के बीच संवाद का वर्णन है। यह संवाद उस समय घटित होता है, जब अर्जुन अपने ही सगे-सम्बन्धियों के विरुद्ध युद्ध लड़ने के विचार से भयभीत और मोहग्रस्त हो जाते हैं। गीता इस मानवीय दुविधा का समाधान प्रस्तुत करती है, जो केवल एक ऐतिहासिक युद्ध के संदर्भ में ही नहीं, बल्कि हर व्यक्ति के आन्तरिक संघर्षों और नैतिक दुविधाओं के लिए भी सदैव ही प्रासंगिक रही है।

गीता का संदेश केवल मोक्ष प्राप्ति तक सीमित नहीं है, अपितु यह हमें एक संतुलित और उद्देश्यपूर्ण जीवन जीने की कला सिखाता है। यह आन्तरिक शांति, आत्म-नियंत्रण और सामाजिक जिम्मेदारी के महत्व पर जोर देता है। यहाँ परगीता के इन शाश्वत सिद्धान्तों को आधुनिक संदर्भ में विश्लेषित करने का प्रयास किया गया है, यह दर्शाते हुए कि कैसे इसके उपदेश आज भी हमें जीवन की जटिलताओं का सामना करने और एक सार्थक अस्तित्व प्राप्त करने में सहायता कर सकते हैं।

गीता का प्रारम्भिक प्रसंग, कुरुक्षेत्र का युद्धक्षेत्र, एक प्रतीकात्मक अर्थ रखता है। यह केवल दो सेनाओं के बीच का भौतिक युद्ध नहीं है, बल्कि यह हर व्यक्ति के भीतर चलने वाले नैतिक और आध्यात्मिक संघर्ष का प्रतीक है। अर्जुन का विषाद, जो अध्याय-1 में वर्णित है, मानव मन की सामान्य दुविधाओं— मोह, भय, अज्ञान, और कर्तव्य के प्रति संशय का प्रतिनिधित्व करता है।

अर्जुन विषाद योग (अध्याय-1) में अर्जुन अपनी स्थिति का वर्णन करते हुए कहते हैं—



‘दृष्ट्वेमं स्वजनं कृष्ण युयुत्सुं समुपस्थितम् ।
सीदन्ति मम गात्राणि मुखं च परिशुष्यति ॥’

अर्थात् हे कृष्ण! युद्ध के लिए एकत्र हुए इन अपने बंधु-बांधवोंको देखकर मेरे अंग शिथिल हो रहे हैं और मुख सूख रहा है ।

यह श्लोक उस आंतरिक संघर्ष को दर्शाता है, जब हमें अपने प्रियजनों या अपनी स्थापित धारणाओं के विरुद्ध खड़ा होना पड़ता है ताकि धर्म और सत्य की रक्षा की जा सके । श्रीकृष्ण का उपदेश इस मोह और अज्ञानता के अंधकार को दूर करने का मार्ग प्रशस्त करता है, हमें अपने वास्तविक कर्तव्य को समझने और उसे निष्ठा से निभाने के लिए प्रेरित करता है ।

यह अवधारणा किसी भी व्यक्ति को व्यक्तिगत या सार्वजनिक जीवन में किसी विशेष परिस्थिति में निर्णय लेने में बहुत सहायक सिद्ध हो सकता है । प्रायः सुविधा या भावनात्मक लगाव के कारण मनुष्य सही निर्णय नहीं ले पाता है । ऐसे समय में गीता का संदेश स्मरण कराता है कि वास्तविक संघर्ष बाहर नहीं भीतर है, स्वयं के अज्ञान, भय और संशय के विरुद्ध ।

गीता का सबसे प्रमुख और व्यावहारिक सिद्धान्त कर्मयोग है । यह सिद्धान्त अध्याय 2 से 6 तक विस्तृत रूप से वर्णित है, जिसमें भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को कर्मों के बंधन से मुक्त होने का मार्ग बताते हैं । कर्मयोग का सार ‘अनासक्ति’ में निहित है— अर्थात्, कर्म करते समय फल की इच्छा से रहित होना ।

‘कर्मण्येवाधिकारस्तेमाफलेषु कदाचन ।

मा कर्मफलहेतुर्भूर्मा ते सङ्गोऽस्त्वकर्मणि ॥’²

अर्थात् तुम्हारा अधिकार केवल कर्म करने में है, उसके फलों में कभी नहीं । तुम कर्मों के फल का हेतु मत बनो और न ही तुम्हारी अकर्मण्यता में आसक्ति हो ।

यह श्लोक कर्मयोग का मूल मंत्र है । यह सिखाता है कि हमें अपना कर्तव्य पूरी निष्ठा, समर्पण और कुशलता से करना चाहिए, किन्तु उसके परिणामों पर हमारा कोई नियंत्रण नहीं है । परिणाम की चिंता में डूबने से हमारी कार्यक्षमता प्रभावित होती है और आन्तरिक शांति भंग होती है ।

आधुनिक भागदौड़ भरे जीवन में, जहाँ परिणाम पर अत्यधिक जोर दिया जाता है, यह सिद्धान्त अत्यन्त महत्वपूर्ण हो जाता है ।

यह श्लोक किसी कार्य को फल की आसक्ति को छोड़कर, परिणाम की चिन्ता किये बिना आपना सर्वश्रेष्ठ

देने के लिए प्रेरित करता है । अनुभव से पता चलता है कि फल की अपेक्षा किये बिना पूरी लगन और निष्ठा से यदि कार्य किया जाये तो परिणाम अपेक्षाकृत बेहतर होते हैं । ‘योगः कर्मसु कौशलम्’³ कर्मों में कुशलता ही योग है के सिद्धान्त का यह प्रत्यक्ष उदाहरण है । इस सूत्र वाक्य का निहितार्थ है कि कार्य चाहे कितना ही छोटा क्यों न हो, उसे पूरी उत्कृष्टता और एकाग्रता के साथ करना चाहिए ।

ज्ञान, योग और भक्ति योग के समन्वय : आत्मिक विकास का मार्ग—

गीता केवल कर्म पर ही जोर नहीं देती, बल्कि, ज्ञान और भक्ति के महत्व को भी स्वीकार करती है और उनका समन्वय प्रस्तुत करती है ।

ज्ञानयोग (मुख्य रूप से अध्याय 4 और 7 में वर्णित) हमें आत्मा और परमात्मा के वास्तविक स्वरूप का बोध कराता है । यह अज्ञान के अंधकार को दूर कर विवेक की ज्योति प्रज्वलित करता है ।

‘न हि ज्ञानेन सदृशं पवित्रमिह विद्यते ॥’

अर्थात् इस संसार में ज्ञान के समान पवित्र करने वाला कुछ भी नहीं है ।

यह श्लोक ज्ञान की सर्वोच्चता को दर्शाता है । वह ज्ञान जो हमें सत्य और असत्य, नित्य और अनित्य के बीच भेद करना सिखाता है । मेरे लिए, यह ज्ञान केवल बौद्धिक समझ नहीं, बल्कि एक आन्तरिक बोध है जो मुझे जीवन के क्षणभंगुर पहलुओं से परे देखने और स्थायी सत्य को पहचानने में मदद करता है ।

दूसरी ओर, भक्तियोग (विशेषकर अध्याय 9, 11 और 12 में वर्णित) हमें ईश्वर के प्रति प्रेम, श्रद्धा और पूर्ण समर्पण का मार्ग सिखाता है ।

‘सर्वधर्मान् परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।

अहं त्वासर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥’⁶

अर्थात् सभी धर्मों को छोड़कर तुम मेरी शरण आ जाओ । मैं तुम्हें समस्त पापों से मुक्त कर दूँगा, शोक मत कर ।

यह श्लोक भक्तियोग का चरम बिन्दु है, जहाँ भगवान श्रीकृष्ण अर्जुन को पूर्ण शरणागति का आश्वासन देते हैं । यह श्लोक मेरे लिए व्यक्तिगत रूप से अत्यन्त प्रेरणादायक है । जब जीवन में चुनौतियाँ आती हैं और मैं विचलित महसूस करता हूँ, तो यह श्लोक मुझे एक अदृश्य शक्ति पर विश्वास रखने और अपने कर्तव्यों को निभाते हुए ईश्वर पर भरोसा करने का साहस देता है । यह बताता है कि ज्ञान हमें वास्तविकता को समझने में मदद करता है,



जब कि भक्ति हमें उस वास्तविकता के प्रति प्रेम और विश्वास के साथ जुड़ने में सक्षम बनाती है। कर्म, ज्ञान और भक्ति का यह समन्वय हमें एक समग्र आध्यात्मिक विकास की ओर ले जाता है, जहाँ कर्म अनासक्ति के साथ, ज्ञान विवेक के साथ और भक्ति प्रेम के साथ की जाती है।

गीता का संदेश केवल व्यक्तिगत मोक्ष तक ही सीमित नहीं है, बल्कि यह एक श्रेष्ठ मानव बनने और समाज में सकारात्मक योगदान देने के लिए भी प्रेरित करता है।

यह धर्म, न्याय और नैतिकता के सिद्धान्तों पर आधारित एक सुसंगत समाज के निर्माण पर जोर देता है।

गीता अपने 'स्वधर्म' के पालन पर जोर देती है। स्वधर्म पालन व्यक्ति का अपना विशिष्ट कर्तव्य एवं व्यक्तिगत दायित्व ही नहीं, बल्कि सामाजिक व्यवस्था को सुचारु रूप से चलाने के लिए तथा व्यक्ति के सकारात्मक एवं सार्थक योगदान के लिए आवश्यक भी है।

यह उदात्त सन्देश परोपकार (अध्याय 3.20, 3.25) की भावना को भी बढ़ावा देता है, जहाँ ज्ञानी व्यक्ति को समाज के कल्याण के लिए कार्य करना चाहिए जिससे दूसरों को भी प्रेरणा प्राप्त हो सके।

यह विचार सामाजिक जिम्मेदारी के महत्व को समझने, अपने स्वधर्म के अनुसार कार्य करने तथा किसी भी प्रकार की समस्या का समाधान ढूँढ़ने में सहायक है, जो समाज के लिए वास्तव में उपयोगी और नैतिक हों। यह विचार व्यक्ति को अपने कार्य में उत्कृष्टता और सामाजिक चेतना दोनों को बनाए रखने के लिए प्रेरित करता है।

अध्याय-2 में वर्णित 'स्थिरप्रज्ञ' (स्थिर बुद्धि वाला व्यक्ति) के लक्षण गीता के नैतिक संदेश का एक महत्वपूर्ण हिस्सा हैं। स्थिर प्रज्ञ वह व्यक्ति है जो सुख-दुःख, मान-अपमान, लाभ-हानि में समभाव रखता है, जिसने इन्द्रियों पर विजय प्राप्त कर ली है और जो राग-द्वेष से मुक्त है।

'दुःखेष्वनुद्विग्नमनाः सुखेषु विगतस्पृहः,

वीतरागभयक्रोधः स्थितधीर्मुनिरुच्यते ॥'⁶

अर्थात् जिसके मन में दुःखों के प्रति उद्वेग नहीं है, सुखों में जो आसक्ति रहित है और जो राग, भय तथा क्रोध से मुक्त है, ऐसा मुनि स्थिर बुद्धि कहलाता है।

श्रीमद्भगवद्गीता एक शाश्वत ग्रंथ है जो काल, संस्कृति और देश की सीमाओं से परे है। इसके उपदेश मानव अस्तित्व के मूलभूत प्रश्नों का उत्तर देते हैं और हमें एक सार्थक, नैतिक और संतुलित जीवन जीने का मार्ग दिखाते हैं। कर्म योग, ज्ञान योग, भक्ति योग और ध्यान योग

का समन्वय हमें समग्र आध्यात्मिक विकास की ओर ले जाता है।

आधुनिक संदर्भ में, जहाँ तनाव, अनिश्चितता और नैतिक दुविधाएँ आम हैं, गीता का संदेश और भी अधिक प्रासंगिक हो जाता है। यह हमें चुनौतियों का सामना धैर्य, विवेक और अनासक्ति के साथ करने की शक्ति प्रदान करता है। यह हमें सिखाता है कि सच्चा सुख बाह्य उपलब्धियों में नहीं, बल्कि आन्तरिक शांति और आत्म-बोध में निहित है।

वस्तुतः गीता एक ऐसी मार्गदर्शिका है जो हमें जीवन के रणभूमि में अपने अन्तःकरण के शत्रुओं से लड़ने, अपने कर्तव्य का पालन करने और अंततः परम सत्य का अनुभव करने के लिए प्रेरित करती है। यह केवल अध्ययन का ग्रंथ नहीं, बल्कि आत्मसात् करने और जीवन में उतारने का दर्शन है, जो 'योगः कर्मसु कौशलम्' की सार्थकता को सिद्ध करने की दृढ़ता देता है।

टिप्पणियाँ—

1. गीता, 1/28
2. तदेव, 2/47
3. तदेव, 2/50
4. तदेव, 4/38
5. तदेव, 18/66
6. तदेव, 2/56

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. 'श्रीमद्भगवद्गीता (मूल संस्कृत पाठ और हिन्दी अनुवाद) — गीताप्रेस, गोरखपुर एवं स्वामी चिन्मयानन्द का भाष्य।
2. 'प्रमुख भाष्य और व्याख्याएँ' — 'तिलक, बालगंगाधर, गीता रहस्य'। 'गांधी, मोहनदास करमचन्द, अनासक्ति योग'। 'अरविंदो, श्री (एसेज ऑन द गीता)'। 'राधाकृष्णन, सर्वपल्ली, द भगवद्गीता — विद एन इंद्रोडक्टीरी' एस्से, संस्कृत टेक्स्ट, इंग्लिश ट्रांसलेशन एण्ड नोट्स। 'चिन्मयानन्द, स्वामी' — द होली गीता — अ कम्प्लीट कमेंटरी। 'आधुनिक संदर्भ और विश्लेषण'
3. 'प्रभुपाड़ा, ए. सी. भक्ति वेदान्त स्वामी। भगवद्-गीता यथारूप। (इस्कॉन का दृष्टिकोण)।
4. 'ज्ञा, गिरीश्वर मिश्र) गीता और आधुनिक मनोविज्ञान।
5. गुप्ता, बद्रीनाथ (मेनेजमेंट एथिक्स एण्ड द भगवद्गीता)।





शोध पत्र लेखकों को निर्देश

‘अभिनव गवेषणा’ (मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरेनशनल रेफ्रीड/पियररिव्यूड रिसर्च जर्नल) है, जिसमें सभी उपविषयों के मौलिक शोध पत्र, शोध समीक्षा, विचार एवं लेखों आदि का प्रकाशन किया जाता है। शोधकर्ता हिन्दी, अंग्रेजी अथवा संस्कृत भाषा में अपने शोध पत्र भेज सकते हैं। शोध पत्र भेजते समय कृपया निम्न बिन्दुओं पर विशेष ध्यान दें—

◆ **लेखक अपना शोध पत्र सर्वेश तिवारी ‘राजन’** प्रबन्ध सम्पादक— ‘दि गुंजन’, के-444 ‘शिवराम कृपा’ विश्व बैंक बर्रा, कानपुर-208027 (उ.प्र.) को अथवा **super.prakashan@gmail.com** पर प्रेषित करें।

◆ **प्राप्त शोध पत्र जर्नल में प्रकाशन के पूर्व पुनर्निरीक्षित किये जायेंगे।** स्वीकृत शोध पत्र कहीं और प्रकाशित नहीं होना चाहिए और न ही उस शोध पत्र का कोई भी भाग सम्पादक की अनुमति के बिना कहीं और प्रकाशित किया जा सकता है।

◆ **अपने शोध-पत्र की पाण्डुलिपि निम्न भागों में तैयार करें—** शीर्षक, सारांश, पाण्डुलिपि, निष्कर्ष एवं पुस्तक सन्दर्भ सूची। कृपया पुनर्निरीक्षण की गुणवत्ता में सहायता करने हेतु शोधालेख पर विशेष ध्यान दें।

◆ **शीर्षक :** शीर्षक पाण्डुलिपि पर अवश्य दें, किन्तु अपना पूरा नाम, पद, विषय, संस्था, पता जहाँ पर निवास एवं अध्यापन कार्य सम्पादित किया गया हो, आपका दूरभाष, मोबाइल, फ़ैक्स, ई-मेल पत्राचार की सुविधा हेतु अलग पृष्ठ पर अवश्य दें।

◆ **सारांश** — सारांश कृपया शोध-पत्र का सारांश अधिकतम 200 शब्दों में दें।

◆ **पाण्डुलिपि—** इसके अन्तर्गत मुख्य पाठ्य सामग्री होगी जो 5 से 8 पृष्ठों तक होनी चाहिए। शोध पत्र में 7-8 पृष्ठ का (सारांश, शब्द संक्षेप, निष्कर्ष एवं सन्दर्भ सूची सहित) से अधिक नहीं होना चाहिए, अन्यथा प्रकाशन हेतु स्वीकार नहीं किया जायेगा। लेखक को यह बात स्वीकार होनी चाहिए कि पुनर्निरीक्षण के दौरान किये गये संशोधन उन्हें मान्य होंगे। आलेख प्रकाशन के दौरान त्रुटि की सम्भावना न बने, इसका पूरा ख्याल रखा जाता है, फिर भी त्रुटि पाये जाने पर लेखक संशोधित री-प्रिन्ट प्राप्त कर सकता है।

◆ **पुस्तक** — प्रकाशक का नाम, संस्करण, संख्या, प्रकाशन वर्ष, लेखक का नाम, पृष्ठ संख्या दें।

◆ **पत्रिका** — पत्रिका का नाम, लेख का शीर्षक, लेखक एवं प्रकाशक का नाम, अंक, संख्या, माह, वार्षिक, अर्द्धवार्षिक, त्रैमासिक व मासिक जो भी हो स्पष्ट करें।

◆ **सन्दर्भ ग्रन्थ सूची** — कृपया शोध पत्र में कम से कम 8 सन्दर्भ ग्रन्थ सूची अवश्य दें।

◆ **समाचार पत्र—** समाचार पत्र के प्रकाशक, प्रकाशन तिथि, वर्ष व पृष्ठ संख्या का उल्लेख करें।

◆ **इण्टरनेट** — वेबसाइट, पृष्ठ संख्या, मुख्य शीर्षक, अन्तःशीर्षक का उल्लेख करें।

◆ **मानचित्र एवं सारणी—** मानचित्र एवं सारणी अथवा चित्र शोध पत्र की समाप्ति के अन्त में दें। यह ब्लैक एण्ड व्हाइट ही होना चाहिए। इसका स्पष्ट संकेत पाण्डुलिपि में अवश्य दें (उदाहरण, सारणी संख्या आदि)।

◆ **विशेष—** कृपया अपना शोध पत्र ई-मेल करने के बाद फोन अथवा मोबाइल से अवश्य सूचित करें। शोध पत्र के साथ फोटो, ई-मेल एड्रेस तथा हार्डकापी के रूप में स्पीड पोस्ट द्वारा लिफाफे में भेजें। शोध पत्र हिन्दी, संस्कृत (कृतिदेव हिन्दी फान्ट 14) एवं अंग्रेजी (टाइम्स 12) में तैयार कर मेल करें। शोध पत्र प्राप्त होने के तुरन्त बाद, उसी दिन लेखक की मेल पर स्वीकृति, कवर, इंडेक्स व पेपर प्रेषित कर दिया जायेगा। **super.prakashan@gmail.com** से प्राप्त शोध पत्र हेतु ई-मेल/वाट्सटप से स्वीकृति भेजी जायेगी। शोध पत्र प्रेषित करने से पूर्व प्रबन्ध सम्पादक से मोबाइल/दूरभाष पर सम्पर्क अवश्य कर लें। रिसर्च जर्नल में लेख सम्मिलित करने का सम्पादक मण्डल अथवा सलाहकार समिति का निर्णय ही अन्तिम व सभी को मान्य होगा।

◆ **सुझाव** — लेखकों एवं पाठकों को यह अंक कैसा लगा, इस सम्बन्ध में अपने-अपने विचार अवश्य लिखें। इससे मुझे अपनी त्रुटियों को जानने और भावी योजना बनाने में सहायता मिलेगी।

◆ **विनम्र निवेदन—** सभी सम्मानित सदस्यों से निवेदन है कि अपने माध्यम से संस्था में अधिकतम सदस्यों को पत्रिका परिवार से जोड़कर संस्था का सहयोग करें।

अभिनव गवेषणा Abhinav GAVESHNA

मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल
रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल

Multi Disciplinary Quarterly International
Refreed/Peer Reviewed Research Journal

ISSN - 2394-4366

E-mail : super.prakashan@gmail.com

कार्यालय : सेक्टर के-444 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्मा, कानपुर-208027

सदस्यता फार्म

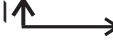
श्रीमान् सम्पादक महोदय,

'अभिनव गवेषणा'

(मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल)

सेक्टर-के-444, 'शिवराम कृपा' विश्व बैंक बर्मा, कानपुर-208027 (उ. प्र.) भारत

महोदय / महोदया,

निवेदन है मैं / हमारा महाविद्यालय आपके 'सुपर प्रकाशन' द्वारा प्रकाशित 'अभिनव गवेषणा' (मल्टी डिसिप्लिनरी क्वार्टरली इण्टरनेशनल रेफ्रीड/पियर रिव्यूड रिसर्च जर्नल) परिवार का वर्षीय / आजीवन / व्यक्तिगत / संस्थागत सदस्य बनना चाहता हूँ / चाहती हूँ? मैं / हमारी संस्था 'सुपर प्रकाशन', विश्व बैंक बर्मा, कानपुर-27 के नाम सदस्यता शुल्क रुपये नकद / मनीआर्डर / चेक अथवा बैंक ड्राफ्ट खाता क्रमांक (सुपर प्रकाशन - 52570200000355) IFS Code No. BARB0BUPGBX बड़ौदा उत्तर प्रदेश ग्रामीण बैंक, शाखा- विश्व बैंक बर्मा (करही) कानपुर-27 के नाम से दे रहा हूँ।  ZERO

नाम (श्री / श्रीमती) डॉ. :

पद का नाम (जहाँ वर्तमान में कार्यरत हैं) :

संस्था / निवास का नाम :

पत्र व्यवहार का पूरा पता (पिनकोड सहित) :

:

फोन/ मोबाइल नं. :

स्थान व दिनांक :

- हस्ताक्षर

प्रबन्ध सम्पादक : सर्वेश तिवारी 'राजन'

मो. : 8896244776

सम्पादक : डॉ. रवेन्द्र राजपूत

मो. : 7830080099